वैदिक कर्मकाण्ड में प्रमाण पत्र

CVK - 17

प्रथम पत्र (कर्मकाण्ड एवं पंचांग कर्म परिचय)

खण्ड - 1

आरम्भिक परिचय

इकाई - 1 दैनन्दिनी कर्म परिचय

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3. दैनन्दिनी कर्म परिचय
1.4 सारांश
1.5 शब्दावली
1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावनाः-

प्रस्तुत इकाई सी0वी0के–01 के प्रथम खण्ड की पहली इकाई 'दैनन्दिन कर्म परिचय' से सम्बन्धित हैं। जैसा कि आप जानते है कि परमपिता परमेश्वर द्वारा रचित सृष्टि में सर्वोत्कृष्ट मानव - सृष्टि है। मानव अपनी दैनन्दिन जीवन में क्या - क्या कार्य करें, जिसके फलस्वरूप उसका सर्वतोमुखी विकास हो। इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुये प्रस्तुत इकाई में नित्यकर्म की विधि दी जा रही है।

प्रत्येक मनुष्य के जीवन में कुछ समय ऐसे होते है जब उसकी बुद्धि निर्मल और सात्विक रहती हैं तथा उस समय में किये गये क्रियाकलाप शुभ कामनाओं से समन्वित एवं पुण्यवर्धन करने वाला होता है।

इस इकाई में आपके पठनार्थ कर्मकाण्ड में उद्धृत दैनन्दिन कर्म का विवेचन प्रस्तुत है, जिसके अध्ययन से आप तत्सम्बन्धित ज्ञान को प्राप्त कर सकेगें।

1.2 उद्देश्य -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- ❖ दैनन्दिन कर्म के अन्तर्गत क्या – क्या आता है, जान लेंगे।
- ❖ दैनन्दिन कर्म महत्व को समझा सकेंगे।
- ❖ प्रात: स्मरणीय देवताओं के स्मरित मन्त्रों को जान लेंगे।
- ❖ दैनन्दिन कर्म को अपने शब्दों में बता सकेंगे।
- ❖ दैनन्दिन कर्म के गुण – दोष की समीक्षा कर सकेंगे।

1.3 दैनन्दिन कर्म परिचय

दैनन्दिन शब्द का अर्थ है – नित्य या प्रतिदिन। मनुष्य अपने जीवन में प्रतिदिन ऐसा कौन – कौन सा कर्म करें, जिससे उसके जीवन में सुख, शांति, समृद्धि एवं ऐश्वर्य की प्राप्ति हो, तथा जीवनयापन में उसे कठिनाई न हों, इसके लिये भारतीय मनीषा में ऋषियों द्वारा रचित शास्त्रों ने हमें कई मार्ग बताये हैं। शास्त्रविधि से गृहस्थ के लिए नित्यकर्म का निरूपण किया जाता है, जिसे करके मनुष्य देव सम्बन्धी, पितृ सम्बन्धी, और मनुष्य सम्बन्धी तीनों ऋणों से मुक्त हो जाता है। तैत्तरीय संहिता में कहा गया है - ''जायमानो वै ब्रह्मणोस्त्रिभिर्ऋणवा जायते''। इसके अनुसार मनुष्य

देवऋण, मनुष्य ऋण, पितृऋण से युक्त होकर जन्म लेता है । इन ऋणों से मुक्ति कैसे मिले, इसलिये दैनन्दिनी या नित्य कर्म का विधान बताया गया है। दैनन्दिनी कर्म में मुख्य छः कर्म बताये गये है -

संध्या स्नानं जपश्चैव देवतानां च पूजनम ।

वैश्वदेवं तथाऽऽतिथ्यं षट् कर्माणि दिने दिने ।।

मनुष्य को शारीरिक शुद्धि के लिए स्नान, संध्या, जप, देवपूजन, बलिवैश्वदेव और अतिथि सत्कार - ये '**छः कर्म**' प्रतिदिन करने चाहिए।

यहॉ दैनन्दिनी कर्मों में प्रात:कालीन भगवत स्मरण, दन्तधावन, शौच, स्नान एवं पूजा के बारे में बताया जा रहा है। सन्ध्या कर्म के बारे में हम आगे की इकाई में आपको बतायेंगे। हमारी दिनचर्या नियमित रूप से निश्चित समयानुसार होना चाहिये। प्रातः काल जागरण से लेकर शयनावस्था तक की समस्त क्रियाओं के लिए शास्त्रकारों ने अपने दीर्घकालीन अनुभव से ऐसे नियमों का निर्माण किया है जिनका अनुसरण करके मनुष्य अपने जीवन को सफल कर सकता है। नियमित क्रियाओं के ठीक रहने पर ही स्वास्थ एवं मन स्वस्थ रहता है। अत: मानव को सर्वतोमुखी विकास के लिए अपने – अपने जीवन में नियमित रूप से दैनन्दिनी कर्म करने चाहिए।

'आचारो परमो धर्मः'

उपर्युक्त पंक्ति के अनुसार आचार ही मनुष्य का परम धर्म है। आचार - विचार के पवित्र होने पर ही मनुष्य चरित्रवान बनता है, मनुष्य के चरित्रवान होने से राष्ट्र का भी सर्वांगीण विकास होता है।

प्रातःकालीन कर्मों में सर्वप्रथम ब्रह्ममुहूर्त में जगना चाहिये, ब्रह्ममुहूर्त में नहीं जगने से क्या हानि होती है आचार्यों ने इस प्रकार प्रतिपादित किया है -

ब्रह्मे मुहूर्ते या निद्रा सा पुण्यक्षयकारिणी ।

तां करोति द्विजो मोहात् पादकृच्छ्रेण शुद्धयति ।।

ब्रह्ममुहूर्त में जो मुनष्य सोता है, उस समय की निद्रा उसके पुण्यों को समाप्त करती है, उस समय जो शयन करता है उसे इस पाप से बचने के लिए पादकृच्छ्र नामक (व्रत) प्रायश्चित्त करना होता है।

हमारी दैनिक चर्या का आरम्भ प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में जागरण से होता है । शास्त्रों में ब्रह्ममुहूर्त की व्याख्या इस प्रकार से है -

रात्रेः पश्चिमयामस्य मुहूर्तो यस्तृतीयकः ।

स ब्राह्म इति विज्ञेयो विहितः स प्रबोधने ।।

अर्थात् - रात्रि के अन्तिम प्रहर का जो तीसरा भाग है उसको ब्रह्म मुहूर्त कहते है। निद्रा त्याग के लिए

यही समय शास्त्र विहित है।

ब्राह्ममुहूर्त सूर्योदय से चार घड़ी (डेढ़ घंटे) पूर्व को कहते है। मनुष्य प्रातःकालीन जागरण के पश्चात् ऑखों के खुलते ही दोनों हाथों की हथेलियों को देखें और निम्न मन्त्र को बोले -

कराग्रे वसते लक्ष्मीः करमध्ये सरस्वती।

करमूले स्थितो ब्रह्मा प्रभाते करदर्शनम्॥

अर्थ - हाथ के अग्रभाग में लक्ष्मी हाथ के मध्य में सरस्वती का निवास है, हाथ के मूल भाग में ब्रह्माजी का निवास है, अतः प्रातः काल कर (हाथ) का दर्शन करना चाहिए।

उपयुक्त श्लोक बोलते हुए अपने हाथो को देखना चाहिए। यह शास्त्रीय विधान बड़ा ही अर्थपूर्ण है। इससे मनुष्य के हृदय में आत्म-निर्भरता और स्वावलम्ब की भावना उदय होती है। वह जीवन के प्रत्येक कार्य में दूसरों की तरफ न देखकर अन्य लोगों के भरोसे न रहकर-अपने हाथों की तरफ देखने का अभ्यासी बन जाता है।

भूमि की वन्दना –

शय्या से उठकर पृथ्वी पर पैर रखने से पूर्व पृथ्वी की प्रार्थना करें -

समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डिते।

विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे॥

समुद्ररूपी वस्त्रो को धारण करने वाली, पर्वत रूपी स्तनो से मण्डित भगवान विष्णु की पत्नी पृथ्वी देवी आप- मेरे पाद स्पर्श को क्षमा करें।

मंगल दर्शन - तत्पश्चात् गोरोचन, चन्दन, सुवर्ण, शंख, मृदंग, दर्पण, मणि आदि मांगलिक वस्तुओं का दर्शन करे तथा गुरू, अग्नि और सूर्य को नमस्कार करे।

माता, पिता गुरू एवं ईश्वर का अभिवादन –

शारीरिक शुद्धि कर माता- पिता, गुरू एवं परम पिता परमेश्वर को प्रणाम करे।

उत्थाय मातापितरौ पूर्वमेवाभिवादयेत्।

आचार्यश्च ततो नित्यमभिवाद्यो विजानता॥

प्रातः स्मरण

धर्म शास्त्रों ने निद्रा त्याग के उपरान्त मनुष्य मात्र का प्रथम कर्तव्य उस कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड-नायक, सच्चिदानन्द-स्वरूप प्यारे प्रभु का स्मरण बताया है - जिस की असीम कृपा से अत्यन्त दुर्लभ मानव देह प्राप्त हुई है, जो समस्त सृष्टि के कण-कण में ओत-प्रोत है, और सत्य, शिव, व सुन्दर है। जिसकी

कृपा से मनुष्य सब प्रकार के भयों से मुक्त होकर ''अहं ब्रह्मास्मि'' के उच्च लक्ष्य पर पहुंच कर तन्मय हो जाता है। दैनिक जीवन के प्रारम्भ में उस के स्मरण से हमारे हृदय में आत्मविश्वास और दृढता की भावना ही उत्पन्न नहीं होगी अपितु सम्पूर्ण दिन मंगलमय वातावरण में व्यतीत होगा। चराचर जगत् में प्रत्येक प्राणी मात्र के लिए उसके माता – पिता उसके जन्म के कारक होते हैं। अत: सर्वप्रथम माता – पिता को प्रणाम करना चाहिये, पश्चात् गुरू को पुन: उसी क्रम में अपने से बड़े को।

शारीरिक एवं मानसिक शुद्धि के लिए मन्त्र बोलें -

ऊँ अपवित्र: पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
य: स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्यभ्यन्तर: शुचि ।।
अतिनीलघनश्यामं नलिनायतलोचनम्।
स्मरामि पुण्डरीकाक्षं तेन स्नातो भवाम्यहम् ।।

इस मन्त्र से बाहरी एवं आन्तरिक शुद्धि कर आगे की क्रिया करनी चाहिये।

प्रात: स्मरणीय श्लोक: -

निम्नलिखित श्लोकों का प्रातःकाल पाठ करने से कल्याणकारी होता है। जैसे- दिन अच्छा बीतता है, दु:स्वप्न, कलिदोष, शत्रु, पाप और भव के भय का नाश होता है, विष का भय नहीं होता, धर्म की वृद्धि होती है, अज्ञानी को ज्ञान प्राप्त होता है, रोग नहीं होता, पूरी आयु मिलती है, विजय प्राप्त होता है, निर्धन धनी होता है, भूख – प्यास और काम की बाधा नहीं होती है, निर्धन धनी होता है तथा सुख एवं शान्ति की प्राप्ति होती है। निष्काम कर्मियों को भी केवल भगवत् प्रसन्नार्थ इन श्लोकों का पाठ करना चाहिए।

गणेशस्मरण:-

प्रात: स्मरामि गणनाथमनाथबन्धुं
सिन्दूरपूरपरिशोभित गण्डयुग्मम्।
उद्दण्डविघ्नपरिखण्डनचण्डदण्ड
माखण्डलादिसुरनायकवृन्दवन्द्यम् ।।

अर्थ- अनाथों के बन्धु सिन्दूर से शोभायमान दोनो गण्डस्थलवाले प्रबल विघ्न का नाश करने में समर्थ एवं इन्द्रादि देवों से नमस्कृत श्रीगणेश का मैं प्रातः काल स्मरण करता हूँ।

विष्णुस्मरण: -

प्रात: स्मरामि भवभीतिमहार्तिनाशं
नारायणं गरूडवाहनमब्जनाभम्।

ग्राहाभिभूतवरवारणमुक्तिहेतुं

चक्रायुधं तरूणवारिजपत्रनेत्रम् ।।

अर्थ- संसार के भय रूपी महान् दुःख को नष्ट करने वाले ग्राह से गजराज को मुक्त करने वाले चक्रधारी एवं नवीन कमल दलके समान नेत्रवाले पद्मनाभ गरूडवाहन भगवान् श्रीनारायण का मैं ध्यान करता हूँ।

शिवस्मरण:-

प्रातः स्मरामि भगभीतिहरं सुरेशं

गङ्गाधरं वृषभवाहनमम्बिकेशम् ।

खट्वाङ्गशूलवरदाभयहस्तमीशं

संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ।।

अर्थ- संसार के भय को नष्ट करनेवाले देवेश, गंगाधर, वृषभवाहन, पार्वती पति, हाथ में खट्वांग एवं त्रिशूल लिये और संसाररूपी रोग का नाश करने वाले अद्वितीय औषध स्वरूप अभय एवं वरद मुद्रयुक्त हस्तवाले भगवान् शिव का मैं प्रातः काल स्मरण करता हूँ।

देवीस्मरण -

प्रातः स्मरामि शरदिन्दु करोज्ज्वलाभां

सद्रत्नवन्मकरकुण्डलहारभूषाम् ।

दिव्यायुधोर्जितसुनीलसहस्रहस्तां

रक्तोत्पलाभचरणां भवतीं पेरशाम् ।।

अर्थ - शरत्कालीन चन्द्रमा के समान उज्ज्वल आभावाली उत्तम रत्नों से जटित मकरकुण्डलों तथा हारों से सुशोभित दिव्यायुधों से दीप्त सुन्दर नीले हजारों हाथोंवाली लाल कमल की आभायुक्त चरणोंवाली भगवती दुर्गा देवी का मैं प्रातः काल स्मरण करता हूँ।

सूर्यस्मरण -

प्रातः स्मरामि खलु तत्सवितुर्वण्यं

रूपं हि मण्डलमृचोऽथ तनुर्यजूंषि ।

सामानि यस्य किरणाः प्रभावादिहेतुं

ब्रह्माहरात्मकमलक्ष्यमचिन्त्यरूपम् ।।

अर्थ – सूर्य का वह प्रशस्त रूप जिसका मण्डल ऋग्वेद, कलेवर यजुर्वेद तथा किरणें सामवेद हैं। जो सृष्टि आदि के कारण है ब्रह्मा और शिव के स्वरूप हैं तथा जिनका रूप अचिन्त्य और अलक्ष्य है प्रातः काल मैं उनका स्मरण करता हूँ।

नवग्रहों का स्मरण -

ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी
भानुः शशी भूमिसुतोबुधश्च।
गुरूश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः
कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ।।

अर्थ - ब्रह्मा, विष्णु, शिव, सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राह, एवं केतु ये सभी मेरे प्रातः काल को मंगलमय करें।

ऋषिस्मरण -

भृगुर्वसिष्ठः क्रतुरंगिराश्च
मनुः पुलस्त्यः पुलहश्च गौतमः ।
रैभ्यो मरीचिश्च्यवनश्च दक्षः
कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ।।

अर्थ - भृगु, वसिष्ठ, क्रतु, अंगिरा, मनु, पुलस्त्य, पुलह, गौतम, रैभ्य, मरीचि, च्यवन और दक्ष ये समस्त मुनिगण मेरे प्रातः काल को मंगलमय करें।

सनत्कुमारः सनकः सनन्दनः सनातनोऽप्यासुरिपिंगलौ च ।
सप्त स्वराः सप्त रसातलानि कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ।।
सप्तार्णवाः सप्त कुलाचलाश्च सप्तर्षयो द्वीपवनानि सप्त ।
भूरादिकृत्वा भुवनानि सप्त कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ।।

अर्थ – सनत्कुमार, सनक, सनन्दन, सनातन, आसुरि और पिंगल – ये ऋषिगण, षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पंचम, धैवत तथा निषाद - ये सप्त स्वर, अतल, वितल, सुतल, तलातल,महातल, रसातल तथा पाताल - ये सात अर्धलोक सभी मेरे प्रातःकाल को मंगलमय करें। सातों समुद्रों कुलपर्वत, सप्तर्षिगण, सातों वन तथा सातों द्वीप, भूर्लोक, भुवर्लोक आदि सातों लोक सभी मेरे प्रातःकाल को मंगलमय करें।

प्रकृतिस्मरण -

पृथ्वी सगन्धा सरसास्तथापः
स्पर्शी च वायुर्ज्वलितं च तेजः ।
नभः सशब्दं महता सहैव
कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ।।

अर्थ- गन्धयुक्त पृथ्वी, रसयुक्त जल, स्पर्शयुक्त वायु , प्रज्वलित तेज , शब्दसहित आकाश एवं महतत्व ये सभी मेरे प्रातःकाल को मंगलमय करें।

बोधात्मक प्रश्न - 1

1. मनुष्य कितने ऋणों से युक्त होता है ?
2. शय्या से उठने के पश्चात् सर्व प्रथम क्या किया जाता है ?
3. प्रातः कालीन भगवत स्मरण से क्या लाभ होता है ?
4. ब्रह्ममुहूर्त का क्या समय है ?

1.3.1 शौच, दन्तधावन, स्नान

उपर्युक्त कर्म के पश्चात् उसी क्रम में शौच क्रिया करनी चाहिये। कहा गया है कि –

शौचे यत्नः सदा कार्यः शौचमूलो द्विजः स्मृतः ।
शौचाचारविहीनस्य समस्ता निष्फलाः क्रियाः ।

शौचाचार की क्रिया दैनन्दिनी कार्यों में एक महत्वपूर्ण कार्य है, जिसे करके मनुष्य शुद्ध होता है। इसे प्रतिदिन करने से शरीर के अपशिष्ट पदार्थ मल के रूप में निकल आते हैं। शौच क्रिया से निवृत्त होकर दन्तधावन करे, मुखशुद्धि के बिना पूजा-पाठ मन्त्र जप ये सब निष्फल हो जाते है , अतः प्रतिदिन मुख शुद्धयर्थ दन्तधावन अथवा मंजनादि अवश्य करना चाहिये। दातून करने के लिये दो दिशायें ही विहित हैं – ईशानकोण और पूर्व। अतः इन्हीं दिशाओं की ओर मुख करके बैठकर दातून करनी चाहिये। जो दातून करते हैं, उन्हें यह स्मरण रखना चाहिये कि ब्राह्मण के लिये दातून बारह अंगुल, क्षत्रिय के लिये नौ अंगुल, वैश्य के लिये छः अंगुल और शूद्रों के लिये चार अंगुल का होना चाहिये। स्त्रियों के लिये भी चार अंगुल के दातुन से ही दन्तधावन का विधान है। सम्प्रति टूथपेस्ट व मंजनादि का प्रयोग अत्यधिक होता है। कम से कम व्रत – पर्वो में अवश्य ही दातुन का प्रयोग करना चाहिये। वेद पढ़ने के लिए निम्नलिखित दातुनों का उपयोग करना चाहिए –

1.चिड़चिड़ा (अपमार्ग) 2.गूलर, 3. आम, 4. नीम, 5. बेल, 6. खैर , 7. तिमुर, 8. करंज

इसी क्रम में दन्तधावन के पश्चात् स्नान का विधान हैं।

स्नान –

प्रातः काल स्नान करने के पश्चात् मनुष्य शुद्ध होकर जप, पूजा, पाठ आदि समस्त कर्मो के करने योग्य बनता है। नौ छिद्रों वाले अत्यन्त मलिन शरीर से दिन-रात मल निकलता रहता है, अतः प्रातः कालीन स्नान करने से शरीर शुद्धि होती है। वेद स्मृति में कहे गये समस्त कार्य स्नानमूलक है -

स्नानमूलाः क्रियाः सर्वाः श्रुतिस्मृत्युदिता नृणाम् ।

तस्मात् स्नानं निषेवेत श्रीपुष्टयारोग्यवर्धनम् ।।

सारी क्रियायें स्नान से सम्बन्धित है, अतः स्नान आवश्यक है, अतएव लक्ष्मी, पुष्टि आरोग्य की वृद्धि चाहने वाले मनुष्य को स्नान सदैव करना चाहिए।

स्नान के प्रकार - स्नान के सात भेद है -

मान्त्रं भौमं तथाग्नेयं वायव्यं दिव्यमेव च ।

वारूणं मानसं चैव सप्त स्नानान्यनुक्रमात् ।।

1. मन्त्र स्नान 2. भौम (भूमि) 3. अग्नि 4. वायु (वायव्य) 5. दिव्यस्नान 6. वारूण

7. मानसिक स्नान

हाथ में जल लें और बोलें।

स्नान - संकल्प- ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः नमः परमात्मने अद्य ..... अमुक गोत्रोत्पन्नः शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहम श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्तिपूर्वकं श्री भगवत्प्रीत्यर्थं च प्रातः/ मध्याह्न/सायं स्नानं करिष्ये ।।

संकल्प के पश्चात् - तीर्थो का आवाहन करें

ऊँ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वती ।

नर्मदा सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधि कुरू ।।

बोधात्मक प्रश्न - 2

1. दातुन करने की आवश्यकता क्यों है ?
2. स्नान के कितने प्रकार होते है ?
3. श्रुति शब्द का अर्थ क्या है ?

तत्पश्चात् वस्त्रधारण कर पूजनादि कर्म में प्रवृत्त होना चाहिये। पूजन में विशेषकर ब्राह्मणों के लिये सन्ध्या एवं गायत्री जप का विधान है, साथ ही अपने – अपने इष्ट देवतओं का पूजन भी। इससे आगे की इकाई में आपको सन्ध्या से परिचित कराया जायेगा। सम्भव हो तो क्षत्रिय, वैश्य आदि वर्णों को भी सन्ध्या करनी चाहिये। फिर इसके बाद अल्पाहार (नास्ता) ग्रहण कर अपने – अपने कर्म को (यथा - जो जहॉ नौकरी करता हो वहॉ जाकर नौकरी करें, अन्य जो करते हो, वह करें) करना आरम्भ करें।

दिन भर के कार्य में आन्तरिक रूप से केवल हरि नाम का स्मरण करते रहने से सभी कार्य सिद्ध हो जाते है। यथा –

कर्मकालेऽपि सर्वत्र स्मरेद् विष्णुं हविर्भुजम्।

तेन स्यात् कर्म सम्पूर्णं तस्मै सर्वं निवेदयेत्॥

भारतीय सनातन परम्परा में माता – पिता का स्थान सर्वोपरि बताया गया है। अत: प्रत्येक मनुष्य को अपने दैनन्दिनी कर्म आरम्भ करने से पहले अपने माता – पिता को सादर प्रणाम करते हुए उनका आशीष ग्रहण करना चाहिये। माता–पिता के पश्चात् गुरू का पुन: अपने से बड़ों को प्रणाम, सम्मान एवं आदर करना चाहिये, इस कर्म को करने से मनुष्य का बहुमुखी विकास होता है।

प्रात:कालीन निद्रा से जगने के पश्चात् क्रमश: उपर्युक्त कथित कार्य यदि मानव सम्यक् रूप से निश्चित समयावधि में करता हो तो निश्चय ही उसका सर्वतोमुखी विकास होगा, ऐसा आचार्यों का मानना है।

1.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि दैनन्दिन शब्द का अर्थ है – नित्य या प्रतिदिन। मनुष्य अपने जीवन में प्रतिदिन ऐसा कौन – कौन सा कर्म करें, जिससे उसके जीवन में सुख, शान्ति, समृद्धि एवं ऐश्वर्य की प्राप्ति हो, तथा जीवनयापन में उसे कठिनाई न हों, इस दृष्टिकोण से शास्त्रों ने हमें कई मार्ग बताये हैं। शास्त्रविधि से गृहस्थ के लिए नित्यकर्म का निरूपण किया जाता है, ''जायमानो वै ब्रह्मणोस्त्रिभिर्ऋणवा जायते'' के अनुसार मनुष्य देवऋण, मनुष्य ऋण, पितृऋण से युक्त होकर जन्म लेता है। इन ऋणों से मुक्ति मिले इसलिये दैनन्दिनी या नितय कर्म का विधान बताया गया है। दैनन्दिनी कर्म में मुख्य छः कर्म बताये गये है। मनुष्य को शारीरिक शुद्धि के लिए दैनन्दिनी रूप में स्नान, संध्या, जप, देवपूजन, बलिवैश्वदेव और अतिथि सत्कार - ये **'छः कर्म'** प्रतिदिन करने की बात मुख्य रूप से कही गई है। इस इकाई में आप प्रात:कालीन जागरण से लेकर दैनन्दिनी मुख्य

कार्य को समझ लिए हैं।

1.5 शब्दावली

दैनन्दिनी – नित्य, प्रतिदिन

शास्त्रविधि – शास्त्र में कही गई विधि

षट् – छ:

च – और

सप्त - सात

विविध – अनेक

सर्वतोमुखी – सभी प्रकार से

अल्पाहार- संतुलित आहार

1.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1 का उत्तर –

1. प्रत्येक मनुष्य देव ऋण, मनुष्य ऋण एवं पितृ ऋण से युक्त होता है।

2. शय्या से उठने के पश्चात् सर्व प्रथम दोनों हाथों की हथेलियों को देखकर निम्न मन्त्र को बोलना चाहिये -

कराग्रे वसते लक्ष्मीः करमध्ये सरस्वती ।

करमूले स्थितो ब्रह्मा प्रभाते करदर्शनम् ।।

3. प्रातः कालीन भगवत् स्मरण से दिन अच्छा व्यतीत होता है तथा धर्म की वृद्धि होती है।

4. ब्राह्ममुहूर्त का समय सूर्योदय से चार घड़ी पूर्व (डेढ़ घण्टा) होता है।

बोध प्रश्न 2 का उत्तर -

1. मुख की शुद्धि के लिये दातून करने की आवश्यकता होती है।

2. स्नान के सात प्रकार होते है।

3. श्रुति का शब्दार्थ है – वेद।

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

नित्यकर्म पूजा प्रकाश

आचार मयूख

आचार प्रदीप

आचार भूषण

1.8 सहायक पाठ्यसामग्री

कर्मकाण्ड परिचय

कर्मकलाप

संस्कार प्रदीप

वामन पुराण

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. दैनन्दिनी कर्म से आप क्या समझते है ? स्पष्ट कीजिये।
2. षट्कर्म का विस्तृत वर्णन कीजिये।
3. गणेश, शिव, विष्णु, लक्ष्मी तथा सरस्वती स्मरित श्लोक का अर्थसहित लेखन कीजिये।
4. दन्तधावन तथा स्नान के महत्व का निरूपण कीजिये।

इकाई - 2 सन्ध्या कर्म

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 सन्ध्या कर्म परिचय
2.4 त्रिकाल सन्ध्या
2.5 सारांश
2.6 पारिभाषिक शब्दावली
2.7 बोध प्रश्नों के उत्तर
2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई सी0वी0के -01 के द्वितीय इकाई 'सन्ध्या कर्म' से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने दैनन्दिनी कर्म परिचय का अध्ययन कर लिया है । यहॉ आप दैनन्दिन कर्म से ही सम्बन्धित 'सन्ध्या कर्म' का अध्ययन करने जा रहे है।

मानव जीवन के दैनन्दिन महत्वपूर्ण षट्कर्मों में एक कर्म सन्ध्या कर्म है । सन्ध्या कर्म तीनों कालों में करने का विधान है। सन्ध्या कर्म परमावश्यक है।

प्रस्तुत इकाई में आपके पठनार्थ व ज्ञानार्थ सन्ध्या कर्म का उल्लेख किया जा रहा है। जिसका अध्ययन कर तत्सम्बिन्धत विषयों से परिचित हो जायेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- ❖ सन्ध्या कर्म क्या है ? जान जायेंगे।
- ❖ सन्ध्या कर्म का विधान क्या है, समझ जायेंगे।
- ❖ सन्ध्या के महत्व को समझ लेंगे।
- ❖ सन्ध्या में क्या – क्या निहित हैं, समझा सकेंगे।
- ❖ सन्ध्या के गुण - दोष की समीक्षा कर सकेंगे।

2.3 सन्ध्या परिचय

भारतीय सनातन परम्परा में कर्मकाण्ड एक वैदिक प्रक्रिया है। ऋषियों ने तप विधि से अनेकों ऐसे अनुसन्धान किये हैं, जो लोकोपयोगी है। वस्तुत: लोक कल्याण के दृष्टिकोण से ही वह निरन्तर अनुसन्धानरत रहते थे। अपने सम्पूर्ण जीवन की तपस्या से वह अद्भुत शक्तियाँ प्राप्त करते थे और उन शक्तियों को लोक कल्याणार्थ उपयोग करते थे। उसी क्रम में उन्होंने कर्मकाण्ड में 'सन्धया कर्म' को कहा है। उपासक जिस क्रिया में परब्रह्म का चिन्तन करते है, वह उपासना कर्म 'सन्ध्या' कहलाता है। सम् उपसर्ग पूर्वक ''ध्यै चिन्तायाम्'' धातु से अधिकरण में अड्. प्रत्यय करके स्त्री अर्थ में टाप् करके 'संध्या' शब्द को निष्पन्न करते है। **सन्धिमर्हति इति सन्ध्या।** अर्थात् रात और दिन की सन्धि वेला को पूर्वसन्ध्या, पूर्वाह्न एवं अपराह्न की सन्धि वेला को मध्याह्न सन्ध्या तथा दिन और रात की सन्धि वेला को सायं सन्ध्या के नाम से कहा जाता है। इन्हीं तीनों वेलाओं में परमात्मा का सम्यक्

ध्यान भी किया जाता है, इसलिए भी इन्हें सन्ध्या कहते है। सन्ध्या के बीना ब्राह्मण में ब्रह्मवर्चस् अर्थात् ब्राह्मणोचित तेज नहीं आ पाता है। पुराणों की मान्यता के अनुसार तो सन्ध्या विहीन ब्राह्मण सभी श्रौत, स्मार्त्त कर्मों से बहिष्कृत हो जाता है। तीन दिन सन्ध्या न करने से ब्राह्मण का ब्राह्मणत्व ही समाप्त हो जाता है और उसे अगले जन्म में बगुले की योनि भी मिलती है। अत: सन्ध्या कर्म ब्राह्मणों के लिये नितान्त आवश्यक है। जैसा कि कहा गया है –

यथानानुतिष्ठति य: पूर्वां नानुतिष्ठति य: पराम्।
स शूद्रवद्बहिष्कार्य: सर्वस्माद् द्विजकर्मण:।।
सन्ध्या न क्रियते येन गायत्री नैव जाप्यते ।
अन्तर्दुष्टो बहि: साधु: स भवेद ब्राह्मणो बक:।।

देवी भागवत और धर्मशास्त्र के अनुसार सन्ध्या का काल इस प्रकार कहा गया है –

उत्तमा तारकोपेता मध्यमा लुप्ततारका।
अधमा सूर्यसहिता प्रात: संध्या त्रिधा स्मृता।।

धर्मशास्त्र के अनुसार –

उत्तमा सूर्यसहिता मध्यमा लुप्तसूर्यका।
अधमा तारकोपेता सायं संध्या त्रिधा स्मृता ।।

अर्थात् सूर्योदय से पूर्व जब आकाश में तारे भरे हुए हों, उस समय की संध्या कर्म उत्तम मानी गयी है। ताराओं के छिपने से सूर्योदय तक मध्यम और सूर्योदय के बाद की संध्या अधम होती है।

सन्ध्या की आवश्यकता –

पुराण कथन है –

विप्रो वृक्षस्तस्य मूलं च सन्ध्या ।
वेदा: शाखा धर्म कर्माणि पत्रे ।।
तस्मान्मूलं यत्नतो रक्षणीयं ।
छिन्ने मूलं नैव पत्रं न शाखा ।।

अर्थात् ब्राह्मण एक वृक्ष है। वेद उनकी शाखायें हैं, धर्मानुष्ठान उसके पत्ते हैं परन्तु सन्ध्या उसकी जड़ है। इस ब्राह्मणवृक्ष के सन्ध्यारूपमूल की प्राणपण से प्रयत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिये। क्योंकि यदि मूल ही सुरक्षित नहीं रहेगा तो उसकी शाखा और पत्ते कैसे रहेंगे। इसलिए सन्ध्या अवश्य उपासनीय है।

नियमपूर्वक जो लोग प्रतिदिन संध्या करते है, वे पापरहित होकर सनातन ब्रह्मलोक को प्राप्त होते है।

यथा –

संध्यामुपासते येतु सततं संशितव्रताः।

विधूतपापास्ते यान्ति ब्रह्मलोकं सनातनम्।।

इस पृथ्वी पर जितने भी स्वकर्मरहित मनुष्य (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) जो अपने कर्म से रहित हो, उनको पवित्र करने के लिए ब्रह्माजी ने संध्या की उत्पत्ति की है। रात्री या दिन में जो भी अज्ञानवश दुष्कर्म हो जाये, वे त्रिकाल-संध्या करने से नष्ट हो जाते है। यथा याज्ञवल्क्य स्मृति के प्रायश्चिताध्ययाय में कहा गया है –

यावन्तोऽस्यां पृथिव्यां हि विकर्मस्थास्तु वै द्विजाः।

तेषां वै पावनार्थाय संध्या सृष्टा स्वयम्भुवा ।।

निशायां वा दिवा वापि यदज्ञानकृतं भवेत् ।

त्रैकाल्यसंध्याकरणात् तत्सर्वं विप्रणश्यति ।।

सन्ध्या न करने से दोष

जिसने सन्ध्या का ज्ञान नहीं किया, जिसने सन्ध्या की उपासना नहीं की, वह द्विज जीवित रहते शूद्र के समान रहता है और मृत्यु के बाद श्वान (कुत्ता) योनि को प्राप्त करता है ।

संध्या येन न विज्ञाता सन्ध्या येनानुपासिता ।

जीवमानो भवेच्छूद्रो मृतः श्वा चाभिजायते ।।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि सन्ध्या नहीं करें, तो वे अपवित्र हैं और उन्हें किसी पुण्यकर्म के करने का फल प्राप्त नहीं होता है।

सन्ध्या स्तुति -

ब्राह्मणरूपी वृक्ष का मूल सन्ध्या है, चारों वेद चार शाखाएँ हैं, धर्म और कर्म पत्ते हैं। अत: मूल की रक्षा यत्न से करनी चाहिये। मूल के छिन्न हो जाने पर वृक्ष और शाखा कुछ भी नहीं रह सकते हैं -

विप्रो वृक्षो मूलकान्यत्र संध्या वेदाः शाखा धर्मकर्माणि पत्रम् ।

तस्मान्मूलं यत्नतो रक्षणीयं छिन्ने मूले नैव वृक्षो न शाखा ।।

सन्ध्या के प्रकार –

सन्ध्या प्रायः तीन समय की जाती है – प्रातः, मध्याह्न, एवं सायं । प्रातः सन्ध्या सूर्योदय से पूर्व की

जाती है। सूर्योदय से पूर्व जब आकाश मण्डल में तारे दिखाई दें उस समय की सन्ध्या को उत्तम सन्ध्या कहते है। जब तारे लुप्त हो जाये सूर्योदय न हुआ हो वह सन्ध्या मध्यम सन्ध्या होती है । सूर्योदय के पश्चात् जो सन्ध्या होती है उसे अधम सन्ध्या कहते है । सायं सन्ध्या प्रायः सूर्यास्त से पूर्व उत्तम होती है। सूर्य के रहते सायं कालीन सन्ध्या उत्तम है, सूर्य अस्त हो जाये तो मध्यम सन्ध्या, और तारे दिखाई दे तो वह सन्ध्या अधम मानी जाती है।

प्रातःकालीन सन्ध्या तारो के रहते और जब सूर्य आकाश के मध्य में हो तो मध्याह्न सन्ध्या, सूर्य पश्चिम में हों सायं सन्ध्या होती है इस प्रकार तीन संध्यायें होती है। यथा –

प्रातः संध्यां सनक्षत्रां मध्याह्ने मध्यभास्कराम् ।

ससूर्या पश्चिमां संध्यां तिस्त्रः संध्या उपासते ।।

समय पर की गई सन्ध्या इच्छानुसार फल देती है और बिना समय की गयी सन्ध्या वन्ध्या स्त्री के समान होती है। यथा -

स्वकाले सेविता संध्या नित्यं कामदुघा भवेत् ।

अकाले सेविता सा च संध्या वन्ध्या वधूरिव ।।

सन्ध्या कर्म -

सन्ध्या कर्म करने से पूर्व उसके लिए प्रयुक्त सामग्रियों का ज्ञान कर लेना चाहिये -

सन्ध्या के लिए आवश्यक सामाग्री -

1. लोटा - प्रधान जल पात्र
2. घंटी और सन्ध्या का विशेष जलपात्र –
3. पात्र – चन्दन – पुष्पादि के लिये
4. पञ्चपात्र
5. आचमनी
6. अर्घा
6. थाली - जल गिराने के लिए
7. आसन, जपमाली, एवं जप के लिये माला

स्नान के पश्चात् शुद्ध वस्त्र धारण करें और आसन बिछाकर उत्तर या पूर्व दिशा की ओर मुँह करके बैठें और निम्न मन्त्र पढ़ते हुये शिखा बाँधे -

ऊँ चिद्रूपिणि महामाये दिव्यतेजः समन्विते ।

तिष्ठ देवि शिखबद्धे तेजोवृद्धि कुरूष्व में ।।

तिलक लगायें, दोनों हाथ की अनामिका अंगुली में कुशा धारण करें एवं तीन बार आचमन करे। आचमन निम्न मन्त्रों से करें -

ऊँ केशवाय नमः, ऊँ नारायणाय नमः, ऊँ माधवाय नमः इन मन्त्रों से जल पीयें तथा ऊँ हृषीकेशाय नमः इस मन्त्र को बोलकर हाथ धो लें।

मार्जन विनियोग मन्त्र –

ऊँ अपवित्र: पवित्रो वेत्यस्य वामदेव ऋषि:, विष्णुर्देवता,गायत्रीच्छन्द: हृदि पवित्रकरणे विनियोग: । इस प्रकार विनियोग करे। पुन: निम्नलिखित मन्त्र से मार्जन करें (अपने शरीर एवं उपलब्ध सामग्री पर जल छिड़के) -

ऊँ अपवित्र: पवित्रो वा सर्वावस्थांगतोऽपि वा ।

य: स्मरेत् पुण्डरीकाक्ष स बाह्याभ्यन्तर: शुचि: ।।

तदनन्तर निम्न विनियोग को पढ़े –

ऊँ पृथ्वीति मन्त्रस्य मेरूपृष्ठ ऋषि:, सुतलं छन्द: कूर्मो देवता आसनपवित्रकरणे विनियोग: ।

पुनः जल लेकर आसन में छोड़े मन्त्र बोले -

ऊँ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता ।

त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरू चासनम् ।।

सन्ध्या संकल्प - हाथ में जल, अक्षत, पुष्प एवं कुशा ले और संकल्प पढे -

ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः नमः परमात्मने अद्य ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पेवैवस्वतमन्वन्तरेअष्टाविंशतितमे कलियुगे कलि प्रथमचरणे भूर्लोके भारतवर्षे अमुक स्थाने अमुक संवत्सरे अमुक ऋतौ अमुक मासे अमुक पक्षे अमुक तिथौ अमुक वासरे अमुक गोत्रे अमुक शर्मा (वर्मा गुप्ता) अहं मम उपात्तदुरितक्षयपूर्वकश्रीपरमेश्वर प्रीत्यर्थं प्रातः (सायं,मध्याह्न) सन्ध्योपासनं करिष्ये ।।

आचमन - इसके लिये निम्नलिखित विनियोग पढ़े –

ऊँ ऋतं चेति माधुच्छन्दसोऽघमर्षण ऋषिरनुष्टुप छन्दो भाववृतं दैवतमपामुपस्पर्शने विनियोग: ।

फिर निम्न मन्त्र को पढ़कर आचमन करे -

ऊँ ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत । ततो रात्र्यजायत । तत: समुद्रो अर्णव: ।

समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत । अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी । सूर्याचन्द्रमसौ

धाता यथापूर्वमकल्पयत् । दिवं च पृथ्वीं चान्तरिक्षमथो स्वः ।

तदनन्तर दायें हाथ में जल लेकर बायें हाथ से ढककर ऊँ के साथ तीन बार गायत्री मन्त्र पढ़कर अपनी रक्षा के लिए अपने चारों ओर जल की धारा दे। फिर प्राणायाम करे –

प्राणायाम का विनियोग –

हाथ में जल लें और विनियोग पढ़े -

ऊँ कारस्य ब्रह्मा ऋषिर्दैवी गायत्री छन्दः अग्निः परमात्मा देवता शुक्लो वर्णः सर्वकर्मारम्भे विनियोगः।

ऊँ सप्तव्याहृतीनां विश्वामित्रजमदग्निभरद्वाजगौतमात्रिवसिष्ठ कश्यपा ऋषयो गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपंक्तित्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांस्यग्निवाय्वादित्यवृहस्पतिवरूणेन्द्रविष्णवो देवता अनादिष्टप्रायश्चिते प्राणायामे विनियोगः।

ऊँ तत्सवितुरिति विश्वामित्रऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता प्राणायामे विनियोगः।

ऊँ आपो ज्योतिरित शिरसः प्रजापतिर्ऋषिर्यजुश्छन्दो ब्रह्माग्निवायुसूर्या देवताः विनियोगः।

प्राणायम के मन्त्र - ऊँ भूः ऊँ भुवः ऊँ महः ऊँ जनः ऊँ तपः ऊँ सत्यम् ऊँ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ऊँ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् ।।

प्राणायाम के तीन भेद है - 1. पूरक 2. कुम्भक, और 3. रेचक

पूरक - अंगूठे से नाक के दाहिने छिद्र को दबाकर बायें छिद्र से श्वास को धीरे-धीरे खीचने को 'पूरक' प्राणायाम कहते है।

कुम्भक - श्वास को रोककर नाक के दोनो छिद्रों को बन्द करना कुम्भक कहलाता है।

रेचक - नाक के बाये छिद्र को दबाकर दाहिने छिद्र से धीरे-धीरे छोड़े। इसको रेचक प्राणायाम कहते है।

तत्पश्चात श्वास लेते समय और रोकते समय और छोड़ते समय निम्न मन्त्र को पढ़े -

ऊँ भूः ऊँ भुवः ऊँ महः ऊँ जनः ऊँ तपः ऊँ सत्यम् ऊँ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ऊँ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्।।

प्राणायाम के पश्चात् मार्जन करे पुनः हाथ में जल लेकर विनियोग पढे –

सूर्यश्च मेति नारायण ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः।

आचमन करे –

ऊँ सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्ताम्। यद्रात्र्या पापमकार्षं मनसा वाचा हस्ताभ्यां पदभ्यामुदरेण शिश्ना रात्रिस्तदवलुम्पतु। यत्किंच दुरितं मयि

इदमहमापोऽमृतयोनौ सूर्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा।

मार्जन -

पुनः बाये हाथ में जल लेकर दाहिने हाथ की तीन अंगुलियो से 1 से 7 तक मन्त्रों को बोलकर सिरपर जल छिड़के। 8 वें मन्त्र से पृथ्वीपर तथा 9 वे मन्त्र से पुनः सिर पर जल छिड़के -

विनियोग- आपो हिष्ठेत्यादि त्रयृचस्य सिन्धुद्वीप ऋषिगायत्रीच्छन्दः आपो देवता मार्जने विनियोगः

1. ऊँ आपोहिष्ठामयोभुवः
2. ऊँ तान ऊर्जेदधातन
3. ऊँ महेरणाय चक्षसे
4. ऊँ शो वः शिवतमो रसः
5. ऊँ तस्य भाजयते नः
6. ऊँ उशतीरिवभातरः
7. ऊँ तस्या अरंगमाम
8. ऊँ यस्य क्षयायजिन्वथ
9. ऊँ आपो जनयथाचनः

अघमर्षण - नीचे लिखे विनियोग को पढ़कर दाहिने हाथ में जल लेकर उसे नाक से लगाकर मन्त्र पढ़े और ध्यान करें कि समस्त पाप नाक से निकलकर जल में आ गये है। फिर उस जल को देखे बिना बायीं ओर फेंक दे।

विनियोग:- अघमर्षणसूक्तस्याघमर्षण ऋषिरनुष्टुप् छन्दः भाववृतो देवता अघमर्षणे विनियोगः।

मन्त्र - ऊँ ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ततो रात्रयजायत। ततः समुद्रो अर्णवः समुद्रादर्णवादधी संवत्सरो अजायत। अहोरात्राणि विदद्यद्विश्वस्य मिषतोवशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् दिवं पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः।

पुनः निम्नलिखित विनियोग करे –

अन्तश्चरसीति तिरश्चीन ऋषिरनुष्टुप् छन्दः आपो देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः।

फिर इस मन्त्र से आचमन करे –

ऊँ अन्तरश्चरसि भूतेषु गुहायां विश्वतोमुखः।
त्वं यज्ञस्त्वं वषट्कार आपो ज्योति रसोऽमृतम् ॥

सूर्यार्घ्य विधि - सूर्य हमारे प्रत्यक्ष देवता है गायत्री के अधिष्ठातृ देव है, प्रातःकाल काल में इन्हे

अर्घ्य अवश्य देना चाहिए। प्रातः काल की संध्या में खड़े होकर तीन बार सूर्य नारायण को अर्घ्य दें मध्याह्न में खड़े होकर 1 बार, सांय संध्या में बैठ कर तीन बार अर्घ्य देना चाहिए, हाथ में जल लेकर विनियोग करें –

सूर्यार्घ्य का विनियोग –

ऊँ कारस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्दः परमात्मा देवता अर्घ्यदाने विनियोगः।

ऊँ भूर्भुवः स्वरिति महाव्याहृतीनां परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांस्यग्निवायुसूर्या देवताः अर्घ्यदाने विनियोगः।

ऊँ तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्र ऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता सूर्यार्घ्यदाने विनियोगः।

इस प्रकार विनियोग पढ़कर नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर सूर्य को अर्घ्य दे –

ऊँ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

मन्त्र को पढ़कर ब्रह्मस्वरूपिणे सूर्यनारायणाय नमः।

उपस्थान –

सूर्य के उपस्थान के लिये प्रथम नीचे लिखे विनियोगों को पढ़े –

उद्वयमित्यस्य प्रस्कण्व ऋषिरनुष्टुप् छन्दः सूर्यो देवता सूर्योपस्थाने विनियोगः।

उदुत्यमित्यस्य प्रस्कण्व ऋषिर्निचृदगायत्री छन्दः सूर्यो देवता सूर्योपस्थाने विनियोगः।

चित्रमित्यस्य कौत्स ऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दः सूर्यो देवता सूर्योपस्थाने विनियोगः।

तच्चक्षुरित्यस्य दध्यङ्कथर्वण ऋषिरक्षरातीतपुरउष्णिक्छन्दः सूर्यो देवता सूर्योपस्थाने विनियोगः।

सूर्योपस्थान के मन्त्र -

- ऊँ उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरूत्तमम्॥
- ऊँ उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः दृशे विश्वाय सूर्यम्।
- ऊँ चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरूणस्याग्नेः आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्ष गॅू सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च।
- ऊँ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत गॅू श्रृणुयामशरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्।

गायत्री जप का विधान –

षडंगन्यास –

गायत्री मन्त्र के जप के पूर्व षडंगन्यास करने का विधान है। अत: आगे लिखे एक – एक मन्त्र को बोलते हुए चित्र के अनुसार उन – उन अंगों का स्पर्श करें –

ऊँ हृदयाय नम: (दाहिने हाथ की पॉचों अंगुलियों से हृदय का स्पर्श करे)।

ऊँ भू: शिरसे स्वाहा (मस्तक का स्पर्श करे)।

ऊँ भुव: शिखायै वषट् शिखा का अंगूठे से स्पर्श करें।

ऊँ स्व: कवचाय हुम् (दाहिने हाथ की अंगुलियों से बॉये कंधे का और बायें हाथ की अंगुलियों से दायें कंधे का स्पर्श करे)।

ऊँ भूर्भुव: स्व: नेत्राभ्यां वौषट् (नेत्रों का स्पर्श करें)।

ऊँ भुर्भुवःस्वः अस्त्राय फट (बायें हाथ की हथेली पर दायें हाथ को सिर से घुमाकर मध्यमा और तर्जनी से ताली बजाये)।

प्रात: कालीन ब्रह्मरूपा गायत्री माता का ध्यान -

बालां विद्यां तु गायत्रीं लोहितां चतुराननाम्।
रक्ताम्बरद्वयोपेतामक्षसूत्रकरां तथा ॥
कमण्डलुधरां देवीं हंसवाहनसंस्थिताम्।
ब्रह्माणीं ब्रह्मदैवत्यां ब्रह्मलोकनिवासिनीम् ॥
मन्त्रेणावाहयेदेवीमायन्तीं सूर्यमण्डलात्।

भगवती गायत्री का मुख्य मन्त्र के द्वारा सूर्यमण्डल से आते हुए इस प्रकार ध्यान करना चाहिये कि उनकी किशोरावस्था है और वे ज्ञानस्वरूपिणी हैं। वे रक्तवर्णा एवं चर्तुमुखी है। उनके उत्तरीय तथा मुख्य परिधान दोनों ही रक्तवर्ण के हैं। उनके हाथ में रूद्राक्ष की माला है। हाथ में कमण्डल धारण किये वे हंस पर विराजमान हैं। वे सरस्वती स्वरूपा हैं, ब्रह्मलोक में निवास करती हैं और ब्रह्मा जी उनके पतिदेवता है।

इसके बाद गायत्री माता के आवाहन के लिये निम्नलिखित विनियोग करे -

तेजोऽसीति धामनामासीत्यस्य च परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिर्यजुस्त्रिष्टु बुष्णिहौ छन्दसी आज्यं देवता गायत्र्यावाहने विनियोग:।

पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र से गायत्री का आवाहन करे –

ऊँ तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि। धामनामासि प्रियं देवानामनाधृष्टं देवयजनमसि।

गायत्री देवी का उपस्थान -

आवाहन करने पर गायत्री देवी आ गयी हैं, ऐसा मानकर निम्नलिखित विनियोग पढ़कर आगे के मन्त्र से उनको प्रणाम करे –

गायत्र्यसीति विवस्वान् ऋषि: स्वराण्महापंक्तिश्छन्द: परमात्मा देवता गायत्र्युपस्थाने विनियोग:।

ऊँ गायत्र्यस्येकपदी द्विपदी त्रिपदी चतुष्पद्यपदसि। न हि पद्यसे नमस्ते तुरीयाय दर्शताय पदाय परोरजसेऽसावदो मा प्रापत्।

गायत्री मन्त्र का विनियोग –

इसके बाद गायत्री मन्त्र के जप के लिये विनियोग पढ़े –

ऊँकारस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्द: परमात्मा देवता, ऊँ भूर्भुव: स्वरिति महाव्याहृतीनां परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि अग्निवायुसूर्या देवता:, ऊँ तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्रऋषिर्गायत्री छन्द: सविता देवता जपे विनियोग:।

इसके पश्चात् गायत्री मन्त्र का 108 बार जप करे।

गायत्री मन्त्र -

ऊँ भूर्भुवःस्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

गायत्री जप करते समय गायत्री मन्त्र के अर्थ को ध्यान में रखते हुये जप करें।

सूर्य प्रदक्षिणा –

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणपदे पदे।।

भगवान को जप का अर्पण –

अन्त में भगवान को यह वाक्य बोलते हुए जप निवेदित करे - अनेन गायत्रीजपकर्मणा सर्वान्तर्यामी भगवान नारायण: प्रीयतां न मम।

इस प्रकार प्रात:कालीन संध्या पूर्ण हुई।

मध्याह्न संध्या

मध्याह्न सन्ध्या प्रातः सन्ध्या के अनुसार ही होगी, प्राणायाम सूर्यार्घ्य सब पूर्ववत् होगा।

मध्याह्नकालीन विष्णुरूपा गायत्री का ध्यान निम्नलिखित के अनुसार करें -

ऊँ मध्याह्ने विष्णुरूपां च तार्क्ष्यस्थां पीतवाससाम्।
युवतीं च यजुर्वेदां सूर्यमण्डलसंस्थिताम् ।।

तत् पश्चात् गायत्री जप इत्यादि पूर्ववत् करें, कवच का पाठ करें,

मध्याह्न में तर्पण नहीं करें। अन्य सभी कर्म प्रातः की भाँति होगें।

सायं-संध्या

सायं कालीन संध्या सूर्य के रहते उत्तराभिमुख होकर करें भगवान् सूर्य को पश्चिम मुख होकर अर्घ्य दें।

सायंकाल शिव रूपा गायत्री का ध्यान करें -

ऊँ सायह्ने शिवरूपा च वृद्धां वृषभवाहिनीम्।
सूर्यमण्डलमध्यस्थां सामवेदसमायुताम्॥

जप करें कवच का पाठ करें विसर्जन आदि पूर्ववत्।

बोधात्मक प्रश्न-

1.संध्या किस- किस काल में किया जाता है ?
2.अघमर्षण करने से क्या होता है ?
3.संध्या के पात्रों के नाम लिखिये ?
4. सन्ध्या का शाब्दिक अर्थ क्या है ?
5. सन्ध्या ब्राह्मणरूपी वृक्ष का कौन सा अंग है ?

2.5 सारांश -

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आपने जाना कि भारतीय सनातन परम्परा में कर्मकाण्ड एक वैदिक प्रक्रिया है। ऋषियों ने तप विधि से अनेकों ऐसे अनुसन्धान किये हैं, जो लोकोपयोगी है। वस्तुत: लोक कल्याण के दृष्टिकोण से ही वह निरन्तर अनुसन्धानरत रहते थे। अपने सम्पूर्ण जीवन की तपस्या से वह अद्भुत शक्तियाँ प्राप्त करते थे और उन शक्तियों को लोक कल्याणार्थ उपयोग करते थे। उसी क्रम में उन्होंने कर्मकाण्ड में 'सन्ध्या कर्म' को कहा है। उपासक जिस क्रिया में परब्रह्म का चिन्तन करते है, वह उपासना कर्म 'सन्ध्या' कहलाता है। सम् उपसर्ग पूर्वक ''ध्यै चिन्तायाम्'' धातु से अधिकरण में अड्. प्रत्यय करके स्त्री अर्थ में टाप् करके 'संध्या' शब्द को निष्पन्न करते है। संध्या प्रायः तीन समय की जाती है – प्रातः, मध्याह्न, एवं सायं। प्रातः संध्या सूर्योदय से पूर्व की जाती है। सूर्योदय से पूर्व जब आकाश मण्डल में तारे दिखाई दें उस समय की संध्या को उत्तम सन्ध्या कहते है। जब तारे लुप्त हो जाये सूर्योदय न हुआ हो वह सन्ध्या मध्यम सन्ध्या होती है। सूर्योदय के पश्चात् जो सन्ध्या होती है उसे अधम सन्ध्या कहते है। सायं सन्ध्या प्रायः सूर्यास्त से पूर्व उत्तम होती है। सूर्य के रहते सायं कालीन सन्ध्या उत्तम है, सूर्य अस्त हो जाये तो मध्यम सन्ध्या, और तारे दिखाई दे तो वह सन्ध्या अधम मानी जाती है।

2.6 शब्दावली

वैदिक – वेदों से सम्बन्धित

कल्याणार्थ – कल्याण के लिये

अनुसन्धान – खोज

नारायणाय – नारायण के लिये

पूर्ववत् - पहले की भॉति

चतुरानन – चार हो मुख जिसके

सर्वतोमुखी – सभी प्रकार से

रक्त वर्ण - लाल रंग

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. संध्या प्रातःकाल, मध्याह्न काल एवं सायंकाल में किया जाता है।
2. अघमर्षण करने से पापों का नाश होता है।
3. सन्ध्या के लिए पात्रों का नाम है-

   लोटा- जल के लिए, पात्र- चन्दन पुष्पादि के लिए, पञ्चपात्र, आचमनी, अर्घा

   थाली-जल गिराने के लिए , आसन- 1 गोमुखी-1 माला-1
4. दो कालवेला का योग
5. जड़

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ग्रन्थ नाम	प्रकाशन
नित्यकर्म पूजाप्रकाश	गीताप्रेस गोरखपुर
श्रीमद्देवी भागवत	गीताप्रेस गोरखपुर
सन्ध्या पद्धति	चौखम्भा प्रकाशन
सन्ध्योपासना	तुलसी प्रकाशन

2.9 निबन्धात्मक प्रश्नः

1. सन्ध्या से आप क्या समझते है ? स्पष्ट कीजिये।

2. त्रिकाल सन्ध्या विधान का उल्लेख कीजिये?
3. प्राणायाम एवं सूर्योपस्थान का वर्णन कीजिये।
4. मानव जीवन में सन्ध्या कर्म का महत्व निरूपित कीजिये।

इकाई - 3 पूजन परिचय

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 पूजन परिचय
3.3.1 पूजन क्रम
3.3.2 विधि
3.4 सारांश
3.5 शब्दावली
3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ
3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई सी0वी0के – 01 के तीसरी इकाई 'पूजन परिचय' से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने दैनन्दिनी पूजन – संध्या आदि कर्मों को जान लिया है। यहाँ अब इस इकाई में आप पूजन के बारे में अध्ययन करेंगे।

भारतीय सनातन परम्परा में पूजन को एक धार्मिक क्रिया माना गया है। पूजन के मुख्यत: दो विधि है - पंचोपचार एवं षोडशोपचार। इस इकाई में दोनों विधियों का उल्लेख किया जा रहा है।

प्रस्तुत इकाई में आपके पठनार्थ व ज्ञानार्थ पूजन सम्बन्धित विषयों का विवेचन किया जा रहा है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- पूजन क्या है ? समझ लेंगे।
- पूजन के प्रकारों को जान लेंगे।
- पंचोपचार एवं षोडशोपचार का विवेचन कर सकेंगे।
- पूजन के महत्व निरूपण कर सकेंगे।
- पूजन के लाभ – हानि को समझा सकेंगे।

3.3 पूजन परिचय

पूजन एक धार्मिक क्रिया है। भारतीय सनातन परम्परा में इसका महत्वपूर्ण योगदान है। इसमें आस्था सबसे बड़ी इकाई मानी जाती है। आस्था के बिना पूजन का कोई महत्व नहीं होता। पूजन के कई रूप होते है – जैसे एक वैदिक क्रिया द्वारा, दूसरी मानसिक क्रिया द्वारा, तीसरी यौगिक क्रिया द्वारा चौथी तान्त्रिक क्रिया द्वारा, आदि इत्यादि। पूजन की मुख्यत: दो पद्धति है - एक पंचोपचार दूसरी षोडशोपचार। पंचोपचार संक्षिप्त विधि होती है, जबकि षोडशपचार वृहत्। इसे करने के लिये सर्वप्रथम शुभ मुहूर्त्त का चयन करते है। उसके पश्चात् पूजन के लिये सम्बन्धित सामग्रीयों को एकत्र कर पवित्र स्थान पर आसन आदि बिछाकर वहॉ बैठते है तथा पूजन सामग्रीयों को सुव्यवस्थित करते है।

आसन पर बैठकर मंत्रो के द्वारा पूजन सामग्रियों को पवित्र करते है। तत्पश्चात् पूजन क्रम को समझ लिजिये –

जिस देवता की पूजन करनी हो, उसका मंत्र द्वारा आवाहन करते है, फिर पश्चात् का क्रम इस प्रकार है -

3.3.1 पूजन क्रम

आवाहन

आसन

पाद्य

अर्घ्य

आचमन

स्नान

पंचामृत स्नान

शुद्धोदकस्नान शुद्ध जल से स्नान।

वस्त्र, उपवस्त्र

चंदन

यज्ञोपवीत (जनेऊ)

पुष्प

दुर्वा गणेश जी के पूजन में ।

तुलसी विष्णु जी के पूजन में तुलसी।

शमी शमीपत्र।

अक्षत शिव में श्वेत अक्षत, देवी में रक्त (लाल) अक्षत, अन्य में पीत (पीला) अक्षत।

सुगंधिद्रव्य इत्र।

धूप

दीप

नैवेद्य प्रसाद।

ऋतुफल।

ताम्बूल पान।

दक्षिणा।

आरती।

पुष्पाञ्जलि।

मंत्रपुष्पांजलि।

प्रार्थना।

इस प्रकार क्रमानुसार पूजन करते हैं। पंचोपचार एवं षोडशोपचार दोनों ही विधियों में क्रम यही होता है।

पूजन क्रम को समझने के पश्चात् आप उनके मन्त्रों का भी ज्ञान कीजिये।

3.3.2 पूजन विधि

आवाहन का मन्त्र -

आगच्छन्तु सुरश्रेष्ठा भवन्त्वत्र स्थिरा: समे।
यावत् पूजां करिष्यामि तावत् तिष्ठन्तु सन्निधौ॥

मन्त्र पढ़ते हुये जिनकी पूजा कर रहे हो, उनका ध्यानपूर्वक आवाहन करना चाहिये। जिस देवता की पूजा कर रहे हो, उसका नाम लेकर पुष्प अर्पित करना चाहिये। यथा गणेश जी की पूजा कर रहे हो तो – गणपतिमावाहयामि, स्थापयामि कहते हुए आवहनार्थे पुष्पं समर्पयामि कहना चाहिए । इसी प्रकार जो कर्म कर रहे हो, उसका नाम लेते हुए उच्चारण करना चाहिए।

आसन का मन्त्र –

अनेकरत्नसंयुक्तं नानामणिगणान्वितम्।
कार्तस्वरमयं दिव्यमासनं प्रतिगृह्यताम्॥

पाद्य का मन्त्र –

गंगादिसर्वतीर्थेभ्य आनीतं तोयमुत्तमम्।
पाद्यार्थं सम्प्रदास्यामि गृह्णनतु परमेश्वरा: ॥

अर्घ्य का मन्त्र –

गन्धपुष्पाक्षतैर्युक्तमर्घ्यं सम्पादितं मया।
गृह्णन्त्वर्घ्यं महादेवा: प्रसन्नाश्च भवन्तु मे॥

आचमन –

कर्पूरेण सुगन्धेन वासितं स्वादु शीतलम्।
तोयमाचमनीयार्थं गृह्णन्तु परमेश्वरा: ॥

स्नान –

मन्दाकिन्या: समानीतै:कर्पूरागुरूवासितै: ।
स्नानं कुर्वन्तु देवेशा जलैरेभि: सुगन्धिभि: ॥

पंचामृत स्नान –

पयो दधि घृतं चैव मधु च शर्करान्वितम्।
पञ्चामृतं मयाऽऽनीतंस्नानार्थं प्रतिगृह्यातम्॥

शुद्धोद्धक स्नान –

मलयाचलसम्भूतचन्दनेन विमिश्रतम्।
इदं गन्धोदकं स्नानं कुकुमाक्तं नु गृह्यताम्॥

वस्त्र – उपवस्त्र का मन्त्र –

शीतवातोष्णसंत्राणे लोकलज्जानिवारणे।
देहालंकरणे वस्त्रे भवदभ्यो वाससी शुभे॥

यज्ञोपवीत –

नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम्।
उपवीतं मया दत्तं गृह्णन्तु परमेश्वरा:॥

चन्दन –

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढयं सुमनोहरम्।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम्॥

पुष्प, पुष्पमाला –

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि भक्तित:।
मयाऽऽहृतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

धूप –

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढयो गन्ध उत्तम:।
आघ्रेय: सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यातम्॥

दीप –

साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निा योजितं मया।
दीपं गृह्णन्तु देवेशास्त्रैलोक्यतिमिरापहम्॥

नैवेद्य -

शर्कराखण्डखाद्यानि दधिक्षीरघृतानि च।
आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्॥

ऋतुफल –

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि॥

ताम्बूल –

पूगीफलं महद् दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम् ।
एलालवंगसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृहयताम् ।।

दक्षिणा –

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसो : ।
अनन्तपुण्यफलदमत: शान्तिं प्रयच्छ मे ।।

आरती –

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम् ।
आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य मां वरदो भव ।।

पुष्पांजलि –

श्रद्धया सिक्तया भक्तया हार्दप्रेम्णा समर्पित: ।
मन्त्रपुष्पांजलिश्चायं कृपया प्रतिगृह्यताम् ।।

प्रार्थना –

नमोऽस्वनन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरूबाहवे ।
सहस्रनाम्ने पुरूषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नम: ।।

उपर्युक्त सभी मन्त्र लौकिक हैं । इसी प्रकार वैदिक मन्त्रों से भी पूजन किया जाता है ।

पंचदेव परिचय –

आदित्यं गणनाथं च देवीं रूद्रं च केशवम् ।
पंचदैवत्यमित्युक्तं सर्वकर्मसु पूजयेत् ।।

सूर्य, गणेश, दुर्गा, शिव, विष्णु - ये पंचदेव कहे गये हैं । इनकी पूजा सभी कार्यों में करनी चाहिये ।

शैलीं दारूमयीं हैमीं धात्वाद्याकारसम्भवाम् ।
प्रतिष्ठां वै प्रकुर्वीत प्रासादे वा गृहे नृप ।।

पत्थर, काष्ठ, सोना या अन्य धातुओं की मूर्तियों की प्रतिष्ठा घर या मन्दिर में करनी चाहिये ।

गृहे चलार्चा विज्ञेया प्रासादे स्थिरसंज्ञिका ।
इत्येते कथिता मार्गा मुनिभि: कर्मवादिभि: ।।

गृह में चल प्रतिष्ठा और मन्दिर में अचल प्रतिष्ठा करनी चाहिये । यह कर्मज्ञानी मुनियों का मत है।

गंगाप्रवाहे शालग्रामशिलायां च सुरार्चने ।
द्विजपुंगव नापेक्ष्ये आवाहनविसर्जने ।।
शिवलिंगेऽपि सर्वेषां देवानां पूजनं भवेत् ।

सर्वलोकमये यस्माच्छिवशक्तिर्विभुः प्रभुः ।।

गंगा जी में, शालग्राम शिला में तथा शिवलिंग में सभी देवताओं का पूजन बिना आवाहन विसर्जन किया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न –

1. पूजन क्रम में आचमन के पश्चात् आता है –
   क. अर्घ्य ख. स्नान ग. आवाहन घ. आसन
2. पूजन मुख्यत: कितने प्रकार का होता है -
   क. दो ख. तीन ग. चार घ. पॉच
3. हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभवसो: ।
   अनन्तपुण्यफलदमत:..... ।।
   क. मां वरदो भव ख. शान्तिं प्रयच्छ मे ग. प्रतिगृह्यताम् घ. युग धारिणे नम:
4. निम्नलिखित में आदित्य पर्याय है -
   क. चन्द्र का ख. मंगल का ग. सूर्य का घ. कोई नहीं
5. पंचोपचार पूजन में होता है -
   क. गन्ध ख. पुष्प ग. दीप घ. उपर्युक्त सभी

पंचोपचार पूजन –

गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य। इनके द्वारा ही पंच उपचार पूजन किया जाता है।

दशोपचार पूजन –

पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान, वस्त्र- निवेदन, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य। इनके द्वारा दसोपचार पूजन होता है।

षोडशोपचार पूजन -

पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान, वस्त्र, आभूषण, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, आचमन, ताम्बूल, स्तवपाठ, तर्पण और नमस्कार । इनके द्वारा षोडशोपचार पूजन किया जाता है।

पंचोपचार पूजन हो या षोडशोपचार पूजन दोनों विधियों में ही सर्वप्रथम गणेश जी का पूजन किया जाता है पश्चात् उपर्युक्त क्रम विधि से पूजन किया जाता है। गणेश जी का स्मरण निम्न मन्त्र से करें

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णक:।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्नाशो विनायक: ।।

धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजानन: ।
द्वादशैतानि नामानि य: पठेच्छृणुयादपि ।।
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा ।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ।।

श्रीमन्महागणाधिपतये नम:। लक्ष्मीनारायणाभ्यां नम:। उमामहेश्वराभ्यां नम:। वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नम:। शचीपुरन्दराभ्यां नम:। मातृपितृचरणकमलेभ्यो नम:। इष्टदेवताभ्यो नम: । कुलदेवताभ्यो नम:। ग्रामदेवताभ्यो नम: । वास्तुदेवताभ्यो नम: । स्थानदेवताभ्यो नम:। एतत्कर्मप्रधानदेवताभ्यो नम:। सर्वेभ्यो देवेभ्यो नम: । सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नम:। पुन: सकाम व निष्काम संकल्प का विधान है। यदि कामनासहित पूजन करनी हो तो सकाम संकल्प कर पूजन करनी चाहिये तथा कामनारहित पूजन करनी हो तो निष्काम संकल्प करनी चाहिये।

संकल्प –

ऊँ विष्णवे नम:, ऊँ विष्णवे नम: ऊँ विष्णवे नम: । ऊँ श्रीविष्णुविष्णुर्विष्णु: श्रीमद्भगवतोमहापुरूषस्य प्रवर्तमानस्य विष्णोराज्ञया ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीयपरार्द्धे श्रीश्वेतवराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे बौद्धावतारे भूर्लोके जम्बूद्वीपे भरतखण्डे भारतवर्षे ..... क्षेत्रे नगरे ग्रामे ..... अमुक नाम संवत्सरे ..... मासे शुक्ल : कृष्णपक्षे ..... तिथौ..... वासरे ..... गोत्र: ..... शर्मा / वर्मा / गुप्तोऽहम प्रात: मध्याह्ने , सायं सर्वकर्मसु शुद्धयर्थं श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्तयर्थं श्रीभगवत्प्रीत्यर्थं च अमुक कर्म करिष्ये ।

इस प्रकार संकल्प करके उपर्युक्त पूजन विधि क्रम से देवी - देवता का पूजन करना चाहिये ।

3.5 सारांश -

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आपने जाना कि पूजन एक धार्मिक क्रिया है। भारतीय सनातन परम्परा में इसका महत्वपूर्ण योगदान है। इसमें आस्था सबसे बड़ी इकाई मानी जाती है। आस्था के बिना पूजन का कोई महत्व नहीं होता। पूजन के कई रूप होते है – जैसे एक वैदिक क्रिया द्वारा, दूसरी मानसिक क्रिया द्वारा, तीसरी यौगिक क्रिया द्वारा चौथी तान्त्रिक क्रिया द्वारा, आदि इत्यादि। पूजन की मुख्यत: दो पद्धति है - एक पंचोपचार दूसरी षोडशोपचार। पंचोपचार संक्षिप्त विधि होती है, जबकि षोडशपचार वृहत्। इसे करने के लिये सर्वप्रथम शुभ मुहूर्त्त का चयन करते है। उसके पश्चात् पूजन के लिये सम्बन्धित सामग्रीयों को एकत्र कर पवित्र स्थान पर आसन आदि बिछाकर वहॉ बैठते है तथा पूजन सामग्रीयों को सुव्यवस्थित करते है।

3.6 शब्दावली

धार्मिक – धर्म सम्बन्धित

आस्था – विश्वास

वैदिक – वेद से जुड़ा

सुरश्रेष्ठ – देवताओं में श्रेष्ठ

आवाहयामि - आवाहन करता हूँ

स्थापयामि – स्थापना करता हूँ

अनन्ताय – अनन्त के लिए

गंगाप्रवाहे – गंगा के प्रवाह में

सहस्र – हजार

सर्वकर्मसु - सभी कर्मों में

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. क
3. ख
4. ग
5. घ

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ग्रन्थ नाम	प्रकाशन
नित्यकर्म पूजाप्रकाश	गीताप्रेस गोरखपुर
पूजन पद्धति	गीताप्रेस गोरखपुर

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पूजन से आप क्या समझते है ? स्पष्ट कीजिये।
2. पूजन विधान का उल्लेख कीजिये ?
3. पूजन क्रम का सविधि उल्लेख कीजिये।
4. भारतीय सनातन परम्परा में पूजन के महत्व को अपने शब्दों में समझाइये।

इकाई - 4 पंचमहायज्ञ

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 पंचमहायज्ञ
4.4 सारांश
4.5 शब्दावली
4.6 बोध प्रश्नों के उत्तर
4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रथम खण्ड की चतुर्थ इकाई 'पंचमहायज्ञ' से सम्बन्धित है। इसके पूर्व की इकाईयों में आपने दैनन्दिनी कर्म, संध्या कर्म तथा पूजन परिचय का अध्ययन कर लिया है। आइए अब इस इकाई में गृहस्थों के लिए कथित पंचमहायज्ञों का ज्ञान करते हैं।

पंचमहायज्ञ कर्मकाण्ड का महत्वपूर्ण अंग है। यह पँच प्रकार का होता है। ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ, पितृयज्ञ एवं अतिथि यज्ञ। गृहस्थ के लिए यह पाँच प्रकार के यज्ञों का विधान कहा गया है।

इस इकाई में आपके पठनार्थ व ज्ञानार्थ पंचमहायज्ञ का वर्णन किया जा रहा है।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप –

- ❖ पंचमहायज्ञ को जान पायेंगे।
- ❖ पंचमहायज्ञ के प्रकारों को समझा पायेंगे।
- ❖ पंचमहायज्ञ के महत्व का निरूपण कर सकेंगे।
- ❖ पंचमहायज्ञ के लाभ को समझ जायेंगे।
- ❖ कर्मकाण्डोक्त पंचमहायज्ञ की विधि को जान लेंगे।

4.3 पंचमहायज्ञ

पंच महायज्ञ भारतीय सनातन परम्परा में मानवों के लिये आवश्यक अंग के रूप में बताये गए हैं। धर्मशास्त्रों ने भी हर गृहस्थ को प्रतिदिन पंच महायज्ञ करने के लिए कहा है। नियमित रूप से इन पंच यज्ञों को करने से सुख-समृद्धि व जीवन में प्रसन्नता बनी रहती है। इन महायज्ञों के करने से ही मनुष्य का व्यक्तिगत जीवन उसके कुटुम्ब और उसके समाज का सर्वविध कल्याण हो सकता है, ऐसा ऋषियों का कथन है।

पंच यज्ञ की महत्ता

पर्याप्त धन-धान्य होने पर भी अधिकांश परिवार दु:खी और असाध्य रोगों से ग्रस्त रहते हैं, क्योंकि उन परिवारों में पंच महायज्ञ नहीं होते। मानव जीवन का उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति है। इन चारों की प्राप्ति तभी संभव है, जब वैदिक विधान से पंच महायज्ञों को नित्य किया जाये। पंच महायज्ञ का उल्लेख **'मनुस्मृति'** में मिलने पर भी उसका मूल यजुर्वेद के **शतपथ ब्राह्मण** हैं। इसीलिये ये वेदोक्त है। जो वैदिक धर्म में विश्वास रखते हैं, उन्हें हर दिन ये 5 यज्ञ करते रहने के लिए

मनुस्मृति में निम्न मन्त्र दिया गया है-

'अध्यापनं ब्रह्म यज्ञः पित्र यज्ञस्तु तर्पणं। होमोदैवो बलिभौंतो त्रयज्ञो अतिथि पूजनम्॥

प्रकार

मानव जीवन के लिए जो पंच महायज्ञ महत्त्वपूर्ण माने गये हैं, वे निम्नलिखित हैं-

1. **ब्रह्मयज्ञ**
2. **देवयज्ञ**
3. **पितृयज्ञ**
4. **भूतयज्ञ**
5. **अतिथियज्ञ**

पंचमहायज्ञ का वर्णन प्रायः सभी ऋषि-मुनियों ने अपने-अपने धर्मग्रन्थों में किया है**,** जिनमें से कुछ ऋषियों के वचनों को यहाँ उद्धृत किया जाता है -

'भूतयज्ञों मनुष्ययज्ञः पितृयज्ञों देवयज्ञों ब्रह्मयज्ञो इति।'

वेदों को पढ़ना और पढ़ाना **ब्रह्म यज्ञ** कहा जाता है। तर्पण, पिण्डदान और श्राद्ध को **पितृ यज्ञ**। देवताओं के पूजन, होम हवन आदि को **देव यज्ञ** कहते हैं। अपने अन्न से दूसरे प्राणियों के कल्याण हेतु भाग देना **भूतयज्ञ** तथा घर आए अतिथि का प्रेम सहित आदर सत्कार करना **अतिथियज्ञ** कहा जाता है। ब्राह्म यज्ञ, पितृयज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ और अतिथि यज्ञ यही **पंच महायज्ञ** है।

भगवान् मनु की आज्ञा है कि -

पञ्चैतान् यो महायज्ञान्न हापयति शक्तितः।
सगृहेऽपि नसन्नित्यं सूनादोषैर्न लिप्यते॥

'जो गृहस्थ शक्ति के अनुकूल इन पंचमहायज्ञों का एक दिन भी परित्याग नहीं करते**,** वे गृहस्थ-आश्रम में रहते हुए भी प्रतिदिन के पञ्चसूनाजनित पाप के भागी नहीं होते।

महर्षि हारीत ने कहा है -

यत्फलं सोम यागेन प्राप्नोति धनवान् द्विजः।
सम्यक् पन्चमहायज्ञे दरिद्रस्तदवाप्नुयात्॥

धनवान द्विज सोमयाग करके जो फल प्राप्त करता है उसी फल को दरिद्र पंचमहायज्ञ के द्वारा प्राप्त कर सकता है।

पंचमहायज्ञो के अनुष्ठान से समस्त प्राणियों की तृप्ति होती है।

पंचमहायज्ञ करने से अन्नादि की शुद्धि और पापों का क्षय होता है।

पंचमहायज्ञ किये बिना भोजन करने से पाप लगता है।

भगवान श्री **कृष्ण ने गीता** (3/13) में कहा है -

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः।

भुन्जते ते त्वघं पापा पचन्त्यात्मकारणात्॥

यज्ञ से शेष बचे हुए अन्न को खानेवाले श्रेष्ठ पुरूष सभी पापों से मुक्त हो जाते है, किन्तु जो पापी केवल अपने लिये ही भोजन बनाते है, वे पाप का ही भक्षण करते है।

महाभारत में भी कहा है -

अहन्हनि ये त्वेतानकृत्वा भुन्जते स्वयम्।

केवलं मलमश्नन्ति ते नरा न च संशयः॥

जो प्रतिदिन इन पंचमहायज्ञों को किये बिना भोजन करते है, वे केवल मल खाते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं।

अतः पंचमहायज्ञ कर के ही गृहस्थों को भोजन करना चाहिए। पंचमहायज्ञ के महत्व एवं इसके यर्थाथ स्वरूप को जानकर द्विजमात्र का कर्त्तव्य है कि वे अवश्य पन्चमहायज्ञ किया करें ऐसा करने से धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष की प्राप्ति होगी।

पञ्च महायज्ञों के पृथक-पृथक रूप

ब्रह्मयज्ञ

अध्ययन - अध्यापन को ब्रह्मयज्ञ कहते है, श्रीमद्भगवत् गीता में कहा है -

स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाड्मयं तप उच्यते॥

वेद- शास्त्रों के पठन एवं परमेश्वर के नाम का जो जपाभ्यास है वही वाणी सम्बन्धी तप कहा जाता है। स्वाध्याय से ज्ञान की वृद्धि होती है। अतः सभी अवस्थाओं में ज्ञान की वृद्धि होती है।

ब्रह्मयज्ञ करने से ज्ञान की वृद्धि होती है। ब्रह्मयज्ञ करने वाला मनुष्य ज्ञानप्रद-महर्षिगणो का अनृणी और कृतज्ञ हो जाता है।

1. संध्यावन्दन के बाद को प्रतिदिन वेद-पुराणादि का पठन-पाठन करना चाहिए। यद्यपि आज के व्यस्ततम समय में मनुष्य के पास समयाभाव होता है तो पाठकों को सुविधा के लिए प्रत्येक ग्रन्थ का आदि मन्त्र दिया जा रहा है।

ऋग्वेद - हरिः ऊँ अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्॥

यजुर्वेद - ऊँ इषे त्वोर्जे त्वा वायवस्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्व मध्न्या इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मा मा वस्तेन ईशत माघस सो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात् बह्वीर्षजमानस्य पशून पाहि।

सामवेद - ऊँ अग्न आयाहि वीतये गृणनो हव्यदातयेनिहोता सत्सु बर्हिषि ॥

अथर्ववेद - ऊँ शं नो देवीरभीष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंषोरभिस्रवन्तु नः।

निरूक्तम् - समाम्नायः समाम्नातः

छन्दः – मयरसतजभनतगसंमितम्।

निघण्टु - गौः ग्मा

ज्यौतिषम् – पञ्चसंवत्सरमयम्।

शिक्षा - अथ शिक्षां प्रवक्ष्यामि।

व्याकरणम् – वृद्धिरादैच्।

कल्पसूत्रम् - अथातोऽधिकारः फलयुक्तानि कर्माणि

गृह्यसूत्रम् - अथातो गृह्यस्थलीपाकानां कर्म

न्याय दर्शनम् - प्रमाणप्रमेयसंशय प्रयोजन दृष्टान्त सिद्धान्तावयव - तर्क निर्णवाद जल्पवितणहेत्वाभासच्छलजाति निग्रहस्थानानां तत्वज्ञानानिः श्रेयसाधिगमः।

वैशैषिक दर्शनम् - अथातो धर्मं व्याख्यास्यामः। यतोऽभ्युदय निःश्रेयससिद्धिः स धर्म।

योग दर्शनम् – अथयोगानुशासनम्। योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः।

सांख्य दर्शनम् - अथ त्रिविधदुःखात्यन्तनिवृत्तिरत्यन्तपुरूषार्थः

भारद्वाज कर्म मीमांसा - अथातो धर्मजिज्ञासा। धारको धर्मः

जैमिनी कर्म मीमांसा - अथातो धर्मजिज्ञासा, चोदना लक्षणो धर्मः।

ब्रह्ममीमांसा - अथातो ब्रह्मजिज्ञासा। जन्माद्यस्य यतः। शास्त्रयोनित्वात् तत्तु समन्वयात्।

स्मृति - मनुमेकाग्रमासीनमभिगम्य महर्षयः

प्रतिपूज्य यथान्यायमिदं वचनमब्रुवन्

रामायणम् - तपः स्वाध्यायनिरतं तपस्वी वाग्विदां वरम्।

नारदं परिपप्रच्छ वाल्मीकिमुनिपुड.गम् ॥

भारतम् –

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।

देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयभुदीरयेत् ॥

पुराणम् –

जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादि तरतश्चार्थेश्वभिज्ञः स्वराट्

तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत्सूरयः ।

तेजोवारिमृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसर्गोऽमृषा ।

धाम्ना स्वेन सदा निरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि ॥

तन्त्रम् –

आचारमूला जाति: स्यादाचार: शास्त्रमूलक: ।

वेदवाक्यं शास्त्रमूलं वेद: साधकमूलक: ॥

साधकश्च क्रियामूल: क्रियापि फलमूलिका

फलमूलं सुखं देवि सुखमानन्दमूलकम् ॥

2. पितृयज्ञ –

पितृयज्ञ के अन्तर्गत तर्पण आदि कार्य आते है । जिसमें देव तर्पण, ऋषि तर्पण, दिव्य मनुष्य तर्पण, दिव्य पितृ तर्पण, यम तर्पण, मनुष्य – पितृ तर्पण, द्वितीय गोत्र तर्पण, पत्नी आदि तर्पण, वस्त्र निष्पीडन, भीष्मतर्पण आदि है । पश्चात् सूर्य को अर्घ्यदान दिया जाता है ।

3. देवयज्ञ –

देवयज्ञ में पंचदेव पूजन, अनेक देवमूर्ति – पूजा प्रतिष्ठा विचार, पंचोपचार, दसोपचार, षोडशोपचार, सर्वसामान्य देवी देव पूजा के विधान का अध्ययन किया जाता है ।

4. भूतयज्ञ –

भूतयज्ञ के अन्तर्गत बलिवैश्वदेव विधि तथा पंचबलि विधि का अध्ययन किया जाता है । बलिवैश्वदेव में देवयज्ञ, बलिहरण मण्डल, भूतयज्ञ, पितृयज्ञ, मनुष्य यज्ञ एवं ब्रह्म यज्ञ तथा पंचबलि विधि में गोबलि, श्वानबलि, काकबलि, देवादिबलि, पिपीलिकादिबलि होता है । अन्त में अग्नि का विसर्जन किया जाता है ।

6. मनुष्य यज्ञ -

बलिवैश्वदेव के पश्चात् सर्वप्रथम अतिथियों को ससम्मान भोजन कराना चाहिये । इसके पहले मनुष्य यज्ञ में जो हन्तकार अन्न दिया गया है, उसे भिन्न – भिन्न श्रेष्ठ ब्राह्मणों को जो दिया जाता है, वह मनुष्य यज्ञ कहलाता है ।

अभ्यास प्रश्न –

1.पंचमहायज्ञ का मूल निहित है –

क. यजुर्वेद के शतपथ ब्राह्मण में ख. ऋग्वेद में ग. सामवेद में घ. अथर्ववेद में

2. पंचमहायज्ञों की संख्या कितनी है -

क. 3 ख. 4 ग. 5 घ. 6

3. स्वाध्याय से होता है –

क. ज्ञान की वृद्धि ख. तप की वृद्धि ग. आयु की वृद्धि घ. कोई नहीं

4. ज्योतिषम् .....।

क. समाम्नाय समाम्नात: ख. गौ ग्मा: ग. पञ्चसंवत्सरमयम् घ. वृद्धिरादैच

5. पंचमहायज्ञ का वर्णन मिलता है –

क. पराशर स्मृति में ख. मनु स्मृति में ग. याज्ञवल्क्य स्मृति में घ. कोई नहीं

4.5 सारांश -

इस इकाई के अध्ययन करने के बाद आपने जाना कि **पंच महायज्ञ** भारतीय सनातन परम्परा में मानवों के लिये आवश्यक अंग के रूप में बताये गए हैं। धर्मशास्त्रों ने भी हर गृहस्थ को प्रतिदिन पंच महायज्ञ करने के लिए कहा है। नियमित रूप से इन पंच यज्ञों को करने से सुख-समृद्धि व जीवन में प्रसन्नता बनी रहती है। इन महायज्ञों के करने से ही मनुष्य का व्यक्तिगत जीवन उसके कुटुम्ब और उसके समाज का सर्वविध कल्याण हो सकता है, ऐसा ऋषियों का कथन है। वेदों को पढ़ना और पढ़ाना ब्रह्म यज्ञ कहा जाता है। तर्पण, पिण्डदान और श्राद्ध को पितृ यज्ञ । देवताओं के पूजन, होम हवन आदि को देव यज्ञ कहते हैं। अपने अन्न से दूसरे प्राणियों के कल्याण हेतु भाग देना भूतयज्ञ तथा घर आए अतिथि का प्रेम सहित आदर सत्कार करना अतिथियज्ञ कहा जाता है। ब्राह्म यज्ञ, पितृयज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ और अतिथि यज्ञ यही पंच महायज्ञ है। पर्याप्त धन-धान्य होने पर भी अधिकांश परिवार दु:खी और असाध्य रोगों से ग्रस्त रहते हैं, क्योंकि उन परिवारों में पंच महायज्ञ नहीं होते। मानव जीवन का उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति है। इन चारों की प्राप्ति तभी संभव है, जब वैदिक विधान से पंच महायज्ञों को नित्य किया जाये । पंच महायज्ञ का उल्लेख **'मनुस्मृति'** में मिलने पर भी उसका मूल यजुर्वेद के **शतपथ ब्राह्मण** हैं। इसीलिये ये वेदोक्त है ।

4.6 शब्दावली

पंचमहायज्ञ – ब्रह्म, देव, पितृ, भूत, मनुष्य

वेदोक्त – वेदों में कहे गये

असाध्य – जो साधा न जा सके

द्विज – ब्राह्मण

अध्यापन - पढ़ाना

धारको धर्मः – धारण करने वाला धर्म

ब्रह्मजिज्ञासा – ब्रह्म को जानने की उत्सुकता

नरोत्तमम् - नरों में श्रेष्ठ

षोडश – सोलह

4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. क
2. ग
3. क
4. ग
5. ख

4.8 संन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ग्रन्थ नाम	प्रकाशन
नित्यकर्म पूजाप्रकाश	गीताप्रेस गोरखपुर
श्रीमद्देवी भागवत	गीताप्रेस गोरखपुर
कर्मकाण्ड पद्धति	चौखम्भा प्रकाशन
आह्निक सूत्रावली	चौखम्भा प्रकाशन

4.9 निबन्धात्मक प्रश्नः

1- पंचमहायज्ञ को परिभाषित कीजिये।

2- पंचमहायज्ञों के पृथक्- पृथक् रूपों का वर्णन कीजिये ?

3. भारतीय सनातन परम्परा में पंचमहायज्ञ का महत्व निरूपण कीजिये।

4. पंचमहायज्ञ क्रिया ब्राह्मणों के लिए क्यों आवश्यक है? स्पष्ट रूप से लिखिये।

इकाई - 5 वेद एवं पुराण परिचय

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 वेद परिचय
5.4 पुराण परिचय
बोध प्रश्न
5.5 सारांश
5.6 शब्दावली
5.7 बोध प्रश्नों के उत्तर
5.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.9 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई पाँचवी इकाई 'वेद एवं पुराण परिचय' से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने दैनन्दिनी कर्म, पूजन परिचय एवं पंचमहायज्ञ को समझ लिया है। इस इकाई में अब आप वेद एवं पुराण परिचय का अध्ययन करेंगे।

'वेद' भारतीय सनातन परम्परा का मेरूदण्ड है। सर्वविद्या का मूल उसमें अन्तनिर्हित है । पुराण वेद का विस्तार है। इन दोनों के ज्ञानाभाव में आप कर्मकाण्ड को भली – भाँति नहीं समझ सकते। अत: इसका ज्ञान परमावश्यक है।

इस इकाई में आपके पठनार्थ व ज्ञानार्थ वेद एवं पुराण का विवेचन किया जा रहा है ।

5.2 उद्देश्य -

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- ❖ वेद क्या है? जान जायेंगे।
- ❖ वेद के प्रकार को समझा सकेंगे।
- ❖ वेद का महत्व निरूपण कर सकेंगे।
- ❖ पुराण को परिभाषित कर सकेंगे।
- ❖ कर्मकाण्ड में वेद एवं पुराण का प्रयोजन को समझा सकेंगे।
- ❖ पुराण के महत्व का निरूपण कर सकेंगे।

5.3 वेदों का परिचय -

भारतीय विद्याओं की यह मान्यता रही है कि सर्वविद्या का मूल वेद है। भारतीय सनातन परम्परा में वेद को 'अपौरूषेय' कहा गया है। अपौरूषेय का अर्थ होता है – जिसे कोई पुरूष पूर्णरूपेण व्यक्त न कर सके। 'विद् ज्ञाने' धातु से वेद शब्द की निष्पत्ति हुई है। परमपिता ब्रह्मा जी के द्वारा चार वेदों की उत्पत्ति हुई है। उनके नाम है – ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद । वस्तुत: इस जगत में वेद से इतर कोई ज्ञान नहीं है। वेद में विपुल ज्ञानराशि का भण्डार है । वेदों के विस्तार हेतु पुराणों का उद्भव हुआ। ''अष्टादशपुराणेषु व्यासेषु वचनद्वयम्'' के आधार पर महर्षि वेदव्यास जी ने अठारह पुराणों की रचना की थी। वेद एवं पुराण भारतीय सनातन परम्परा के मेरूदण्ड है। कर्मकाण्ड के अन्तर्गत वेद एवं पुराण को समझना परमावश्यक है। अत: इस इकाई में आपके

ज्ञानार्थ वेद एवं पुराण का वर्णन किया जा रहा है। वेद को 'श्रुति' भी कहा जाता है, जिसका अर्थ है – सुना हुआ।

वेद के प्रकार -

ऋग्वेद - यह प्रथम वेद के रूप में जाना जाता है। इसमें देवताओं के आवाहन मन्त्र कहे गये है। यह मुख्यत: ऋषियों के लिये होता है।

सामवेद - इसमें मुख्यत: यज्ञादि कार्यों में गायन हेतु मन्त्र दिये गये है। सामवेद के मन्त्रों को गाकर पढ़ा जाता है । यह सर्वोत्तम वेद है जिसकी पुष्टि स्वयं भगवान श्रीकृष्ण श्रीमद्भगवद्गीता में करते है - 'वेदानां सामवेदोऽस्मि'।

यजुर्वेद - इस वेद में धार्मिक अनुष्ठानादि हेतु देवताओं के मन्त्र दिये गये हैं। यह कर्मकाण्ड के लिये जाना जाता है। पौरोहित्य कर्म के लिए यजुर्वेद का ज्ञान परमावश्यक है।

अथर्ववेद – इस वेद में जादू – टोना, तन्त्र – मन्त्र, वशीकरण, मारण, मोहन, उच्चाटन हेतु तथा आरोग्यता हेतु मन्त्र दिये गये है।

वेद के अंग है -

1. शिक्षा 2. कल्प 3. व्याकरण 4. निरूक्त 5. छन्द 6. ज्योतिष।

वेद के मन्त्र भाग को 'संहिता' कहते हैं। वैदिक साहित्य के अन्तर्गत उपर लिखे सभी वेदों के कई उपनिषद, आरण्यक तथा उपवेद आदि भी आते जिनका विवरण नीचे दिया गया है। इनकी भाषा संस्कृत है जिसे अपनी अलग पहचान के अनुसार वैदिक संस्कृत कहा जाता है - इन संस्कृत शब्दों के प्रयोग और अर्थ कालान्तर में बदल गए या लुप्त हो गए माने जाते हैं। ऐतिहासिक रूप से प्राचीन भारत और हिन्द-आर्य जाति के बारे में इनको एक अच्छा संदर्भ माना जाता है। संस्कृत भाषा के प्राचीन रूप को लेकर भी इनका साहित्यिक महत्व बना हुआ है।

वेदों को समझना प्राचीन काल में भारतीय और बाद में विश्व भर में एक विवाद का विषय रहा है। प्राचीन काल में, भारत में ही, इसी विवेचना के अंतर के कारण कई मत बन गए थे। मध्ययुग में भी इसके भाष्य (अनुवाद और व्याख्या) को लेकर कई शास्त्रार्थ हुए। कई लोग इसमें वर्णित चरित्रों देव को पूज्य और मूर्ति रूपक आराध्य समझते हैं जबकि दयानन्द सरस्वती सहित अन्य कईयों का मत है कि इनमें वर्णित चरित्र (जैसे अग्नि, इंद्र आदि) एकमात्र ईश्वर के ही रूप और नाम हैं। इनके अनुसार देवता शब्द का अर्थ है - (उपकार) देने वाली वस्तुएँ, विद्वान लोग और सूक्त मंत्र (और नाम) ना कि मूर्ति-पूजनीय आराध्य रूप। प्राचीन काल के जैमिनी, व्यास, पराशर, कात्यायन, याज्ञवल्क्य इत्यादि

ऋषियों को वेदों का अच्छा ज्ञाता माना जाता है। मध्यकाल में रचित व्याख्याओं में सायण का रचा भाष्य अत्यधिक मान्य है। यूरोप के विद्वानों का वेदों के बारे में मत हिन्द-आर्य जाति के इतिहास की जिज्ञासा से प्रेरित रही है। अठारहवीं सदी उपरांत यूरोपियनों के वेदों और उपनिषदों में रूचि आने के प्राचीन काल से भारत में वेदों के अध्ययन और व्याख्या की परम्परा रही है। हिन्दू धर्म अनुसार आर्षयुग में ब्रह्माऋषि से लेकर जैमिनि तक के ऋषि – मुनियों ने शब्दप्रमाण के रूप में इन्हीं को माने हैं और इनके आधार पर अपने ग्रन्थों का निर्माण भी किये हैं। पराशर, कात्यायन, याज्ञवल्क्य, व्यास, पाणिनी आदि को प्राचीन काल के वेदवेत्ता कहते हैं। वेदों के विदित होने यानि चार ऋषियों के ध्यान में आने के बाद इनकी व्याख्या करने की परम्परा रही है। इसी के फलस्वरूप ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, इतिहास आदि महाग्रन्थ वेदों का व्याख्यान स्वरूप रचे गए। प्राचीन काल और मध्ययुग में शास्त्रार्थ इसी व्याख्या और अर्थांतर के कारण हुए हैं। मुख्य विषय - देव, अग्नि, रूद्र, विष्णु, मरुत, सरस्वती इत्यादि जैसे शब्दों को लेकर हुए। बाद भी इनके अर्थों पर विद्वानों में असहमति बनी रही है।

ऋग्वेद –

ऋग्वेद को चारों वेदों में सबसे प्राचीन माना जाता है। इसको दो प्रकार से बाँटा गया है। प्रथम प्रकार में इसे **10** मण्डलों में विभाजित किया गया है। मण्डलों को सूक्तों में, सूक्त में कुछ ऋचाएं होती हैं। कुल ऋचाएं **1052** हैं। दूसरे प्रकार से ऋग्वेद में **64** अध्याय हैं। आठ-आठ अध्यायों को मिलाकर एक अष्टक बनाया गया है। ऐसे कुल आठ अष्टक हैं। फिर प्रत्येक अध्याय को वर्गों में विभाजित किया गया है। वर्गों की संख्या भिन्न-भिन्न अध्यायों में भिन्न भिन्न ही है। कुल वर्ग संख्या **2024** है। प्रत्येक वर्ग में कुछ मंत्र होते हैं। सृष्टि के अनेक रहस्यों का इनमें उद्घाटन किया गया है। पहले इसकी **21** शाखाएं थीं परन्तु वर्तमान में इसकी शाकल शाखा का ही प्रचार है। ऋग्वेद की समस्त शाखायें 21 है उनमें 5 शाखायें मुख्य है।

1. शाकल 2. बाष्कल 3. आश्वलायन 4. शांखायन 5. माण्डूकायन

यजुर्वेद –

इसमें गद्य और पद्य दोनों ही हैं। इसमें यज्ञ कर्म की प्रधानता है। प्राचीन काल में इसकी **101** शाखाएं थीं परन्तु वर्तमान में केवल पांच शाखाएं हैं - काठक, कपिष्ठल, मैत्रायणी, तैत्तिरीय, वाजसनेयी। इस वेद के दो भेद हैं - कृष्ण यजुर्वेद और शुक्ल यजुर्वेद। कृष्ण यजुर्वेद का संकलन महर्षि वेद व्यास ने किया है। इसका दूसरा नाम तैत्तिरीय संहिता भी है। इसमें मंत्र और ब्राह्मण भाग

मिश्रित हैं। शुक्ल यजुर्वेद - इसे सूर्य ने याज्ञवल्क्य को उपदेश के रूप में दिया था। इसमें **15** शाखाएं थीं परन्तु वर्तमान में माध्यन्दिन को जिसे वाजसनेयी भी कहते हैं प्राप्त हैं। इसमें **40** अध्याय, **303** अनुवाक एवं **1975** मंत्र हैं। अन्तिम चालीसवां अध्याय ईशावास्योपनिषद है।

सामवेद -

यह गेय वेद है। इसमें गान विद्या का भण्डार है, यह भारतीय संगीत का मूल है। ऋचाओं के गायन को ही साम कहते हैं। इसकी **1001** शाखाएं थीं। परन्तु आजकल तीन ही प्रचलित हैं - कोथुमीय, जैमिनीय और राणायनीय। इसको पूर्वार्चिक और उत्तरार्चिक में बांटा गया है। पूर्वार्चिक में चार काण्ड हैं - आग्नेय काण्ड, ऐन्द्र काण्ड, पवमान काण्ड और आरण्य काण्ड। चारों काण्डों में कुल **640** मंत्र हैं। फिर महानाम्न्यार्चिक के **10** मंत्र हैं। इस प्रकार पूर्वार्चिक में कुल **650** मंत्र हैं। छः प्रपाठक हैं। उत्तरार्चिक को **21** अध्यायों में बांटा गया। नौ प्रपाठक हैं। इसमें कुल **1225** मंत्र हैं। इस प्रकार सामवेद में कुल **1875** मंत्र हैं। इसमें अधिकतर मंत्र ऋग्वेद से लिए गए हैं। इसे उपासना का प्रवर्तक भी कहा जा सकता है।

अथर्ववेद –

इसमें गणित, विज्ञान, आयुर्वेद, समाज शास्त्र, कृषि विज्ञान, आदि अनेक विषय वर्णित हैं। कुछ लोग इसमें मंत्र-तंत्र भी खोजते हैं। यह वेद जहां ब्रह्म ज्ञान का उपदेश करता है, वहीं मोक्ष का उपाय भी बताता है। इसे ब्रह्म वेद भी कहते हैं। इसमें मुख्य रूप में अथर्वण और आंगिरस ऋषियों के मंत्र होने के कारण अथर्व आंगिरस भी कहते हैं। यह **20** काण्डों में विभक्त है। प्रत्येक काण्ड में कई-कई सूत्र हैं और सूत्रों में मंत्र हैं। इस वेद में कुल **5977** मंत्र हैं। इसकी आजकल दो शाखाएं शौणिक एवं पिप्पलाद ही उपलब्ध हैं। अथर्ववेद का विद्वान् चारों वेदों का ज्ञाता होता है। यज्ञ में ऋग्वेद का होता देवों का आह्वान करता है, सामवेद का उद्गाता सामगान करता है, यजुर्वेद का अध्वर्यु देव:कोटीकर्म का वितान करता है तथा अथर्ववेद का ब्रह्म पूरे यज्ञ कर्म पर नियंत्रण रखता है।

बोध प्रश्न – 1

1. वेदों की संख्या कितनी है।
2. ऋग्वेद के मुख्य पॉच शाखाओं के नाम क्या है ।
3. वेदानां सामवेदोऽस्मि कहॉ का वाक्य है।

5.4 पुराण परिचय –

भारतीय संस्कृति के स्वरूप को सम्यक ज्ञान के निमित्त पुराणो के अध्ययन की महती आवश्यकता है।

पुराण भारतीय संस्कृति के मेरूदण्ड है यह वह आधारपीठ है जिस पर भारतीय समाज प्रतिष्ठित है।

पुराण शब्द की व्युत्पत्ति -

पुराण शब्द की व्युत्पत्ति पाणिनि तथा यास्क के साथ साथ स्वयं पुराणो में भी दी गई है पुरा भवम इस अर्थ में सायंचिरंप्राह्वेप्रगेव्ययेभ्यश्ट्युट्युलौतुट च' इस पाणिनि सूत्र से पुरा शब्द से ट्यु प्रत्यय करने पर तुट् का आगमन हुआ । परन्तु पाणिनि ने स्वयं अपने सूत्र पाठ में ' पूवकालैक- सर्व-जरत्पुराणनवकेवलाः समानाधिकरणेन' तथा 'पुराणप्रोक्तेषु ब्राह्मणकल्पेषु' इत्यादि में पुरा शब्द का प्रयोग किया है।

पुराण शब्द ऋग्वेदादि में अनेक स्थानों में मिलता है यह यहॉ विशेषण है तथा इसका अर्थ है पूर्व काल में होने वाला। यास्क के निरुक्त के अनुसार पुराण की व्युत्पत्ति है, पुरानवं भवति अर्थात जो प्राचीन होकर भी नया होता है। पुराण शब्द की व्युत्पत्ति स्वयं पुराणो में भी मिलती है 'यस्मात् पुरा ह्यनक्तीदं पुराणं तेनतत्स्मृतं' वायु पुराण के अनुसार प्राचीन काल में जो जीवित था यह व्युपत्ति मिलती है।

पद्मपुराण के अनुसार 'पुरापरम्परा वश्अि पुराणं तेन तत् स्मृतम्' अर्थात जो प्राचीनता की अर्थात परम्परा की कामना करता है वह पुराण कहलाता है। यह व्युत्पत्ति यास्क से किंचिद् भिन्न है।

इतिहास और पुराण का सम्बन्ध- प्राचीन ग्रन्थो में पुराण का सम्बन्ध इतिहास से इतना घनिश्ठ है कि दोनो सम्मिलित रूप से पुराणेतिहास नाम से उल्लिखित हैं।

तथापि लोगो में यह भ्रान्ति फैली हुई है कि भरतीय समाज ऐतिहासिक कल्पना से अपरिचित थे। परन्तु यह धारणा निर्मूल तथा अप्रमाणिक है।

पुराणो के अवतरण के विषय में पुराणों तथा इतर ग्रन्थों में अनेक प्रकार की अवधारणा प्राप्त होती है पुराणो के आविर्भाव का निर्देश वायुपुराण तथा मत्स्यपुराण में वेद के आविर्भाव से पूर्ववर्ति बतलाया गया है।

पुराणं सर्वशास्त्राणां प्रथमं ब्रताणा स्मृतम्।
नित्यं शब्दमयं पुण्यं शतकोटिप्रविस्तरम्।।
अनन्तरं च वक्त्रेभ्यो वेदास्तस्य विनिःसृता।।

पुराण लक्षण –

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वंतराणि च।

वंशानुचरितं चैव पुराणं पंचलक्षणम्॥

1. **ब्रह्मपुराण** - यह पुराण आदि ब्रह्मा के नाम से प्रसिद्ध है। इसके अध्यायों की संख्या 245 है और श्लोकों की संख्या 14000 हजार के आस पास है। पुराण सम्मत समस्त विषयों का वर्णन यहॉ उपलब्ध होता है।

सृष्टि का वर्णन, सूर्यवंश तथा सेाम वंश का वर्णन, पार्वती के आख्यान का वर्णन, गौतमी माहात्म्य, सूर्यपूजा इस पुराण की विशेषता प्रतीत होती है।

2. **पद्मपुराण** - यह पुराण श्लोक संख्या में स्कन्दपुराण को छोड़कर अद्वितीय है। इसकी श्लोक संख्या 50000 है। इस प्रमाण से यह महाभारत का ठीक आधा है और श्रीमद्भागवत से तिगुना है। इसमें पॉच खण्ड है -

प्रथमं सृष्टिखण्डं हि भूमिखण्डं द्वितीयकम्।

तृतीयं स्वर्गखण्डं च पातालं च चतुर्थकम्॥

पंचमं चोत्तरं खण्डं सर्वपाप प्रणाशनम्॥

अर्थ - इसमें प्रथम सृष्टि खण्ड, द्वितीय भूमि खण्ड, तृतीय स्वर्ग खण्ड, चतुर्थ पाताल खण्ड और पंचम उत्तर खण्ड है जिसके अध्ययन से सभी प्रकार के पाप नष्ट होते है।

3. **विष्णुपुराण** - यह पुराण वैष्णवपुराण की श्रेणी में आता है इसमे 23000 श्लोक संख्या है। इसमें भगवान के दशावतार के साथ साथ भूगोल एवं खगोल का वर्णन मिलता है। साहित्यिक दृष्टि से यह पुराण बड़ा ही रमणीय और सुन्दर है।

4. **वायुपुराण** - वायुपुराण अत्यन्त प्राचीन है इसमें 11000 श्लोक है। इसकी विशेषता यह है कि इस में शिव के चरित्र का विस्तृत वर्णन है।

5. **श्रीमद्भागवतमहापुराण** - यह पुराण संस्कृत साहित्य का एक अनुपम रत्न है। भक्तिशास्त्र का तो यह सर्वस्व है। वैष्णव आचार्यो ने प्रस्थानत्रयी के समान भागवत को भी अपना उपजीव्य माना है। श्रीवल्लभाचार्य भागवत को महर्षि व्यासदेव की समाधि भाषा कहते है। श्रीमद्भागवत में 335 अध्याय, 18000 श्लोक और बारह स्कन्द है।

6. **नारदपुराण**- इस ग्रन्थ के दो भाग है। पूर्व भाग के अध्यायों की संख्या 125 है और उत्तर भाग में 82 अध्याय है। श्लोकों की संख्या 25000 है। यह पुराण ऐतिहासिक दृष्टि से बडा ही महत्वपूर्ण है। अठारहें पुराणों के विषयों की विस्तृत अनुक्रमणिका इस पुराण में उपलब्ध है।

7. **मार्कण्डेयपुराण**- इस पुराण का नामकरण मार्कण्डेय ऋषि द्वारा कथन किये जाने के कारण पडा। महापुराणों से इस पुराण की श्लोक संख्या सबसे कम है। इसमें 137 अध्याय है और श्लोको की संख्या 9000 है।

8. **अग्निपुराण** – यह पुराण समस्त भारतीय विद्याओं का कोश कहा जाता है। इस पुराण में 383 अध्याय है इसमें राजनीति शास्त्र, वास्तु, ज्योतिष, धर्मशास्त्र का विवेचन सुचारू रूप से किया गया है।

9. **भविष्य पुराण** - भविष्य पुराण का तात्पर्य भविष्य में होने वाली घटनाओं से है। इस पुराण में पॉच पर्व है तथा 14,000 श्लोक है।

10. **ब्रह्मवैवर्तपुराण** - ब्रह्मवैवर्तपुराण पुराण में 18,000 हजार श्लोक हैं। यह पुराण श्लोक संख्या में भागवत के संतान है। इस पुराण में चार खण्ड है 1- ब्रताखण्ड 2- प्रकृति खण्ड 3- गणेश खण्ड 4- कृष्ण जन्म खण्ड।

11. **लिंगपुराण** - इस पुराण में भगवान शंकर की लिंग रूप से उपासना का विशेष रूप से वर्णन प्राप्त होता है। इस पुराण में श्लोकों की संख्या 11,000 हजार और 133 अध्याय है। यह पुराण पूर्व एवं उत्तर दो भागों तें विभक्त हैं।

12. **वराहपुराण-** भगवान् वराह के वर्णन इसमें होने के कारण इस पुराण का नाम वराह पुराण है। इस पुराण में 218 अध्याय तथा 24,000 श्लोक है।

13. **स्कन्दपुराण** - इस पुराण में स्वामी कार्तिकेय ने शैव तत्त्वों का निरूपण किया है इसीलिये इसका नाम स्कन्दपुराण है। श्लोक संख्या में यह पुराण सभी महापुराणों में सबसे बडा हैं। यह पुराण संहिताओं में विभक्त है इस पुराण में सात संहितायें हैं। 81,000 हजार श्लोक है।

14. **वामनपुराण** - इस पुराण का सम्बन्ध भगवान के वामनावतार से है इस पुराण में केवल 95 अध्याय है तथा 10000 श्लोक है। भगवान विष्णु के भिन्न भिन्न अवतारों का वर्णन इस पुराण में उपलब्ध है।

15. **कूर्मपुराण** - इस पुराण में प्रारम्भ में चार संहिताएँ थी 1.ब्राती 2. भागवती 3. सौरी 4. वैष्णवी। परन्तु वर्तमान समय में केवल ब्राती ही उपलब्ध होती है। भागवत और मत्स्यपुराण के अनुसार इसकी श्लोक संख्या 18000 है। परन्तु उपलब्ध पुराण में केवल 6000 श्लोक ही उपलब्ध होते है। भगवान के कूर्म अवतार के वर्णन के कारण इसका नाम कूर्मपुराण है।

16. **मत्स्यपुराण** - मत्स्यपुराण में भगवान के मत्स्यावतार का वर्णन किया गया है। इस में 291

अध्याय और श्लोको की संख्या 15,000 है। इस पुराण में काशी का माहात्म्य नर्मदा का माहात्म्य तथा श्राद्ध कल्प का विवेचन पर्याप्त रूप से वर्णित है।

17. **गरूडपुराण** - इस गरूड पुराण में श्री विष्णुजी ने गरूड जी को विश्व की सृष्टि के विषय में बताया है। गरूडपुराण में श्लोकों की संख्या 19,000 है और अध्यायों की संख्या 264 है। इस पुराण में रत्नों की परीक्षा तथा राजनीति का विस्तार से वर्णन मिलता है इसमें आयुर्वेद के आवश्यक निदान तथ चिकित्सा का कथन भी उपलब्ध है। इसके प्रेत कल्प में मानव के निधन के बाद की गति का वर्णन मिलता है।

18. ब्रह्माण्ड पुराण - इस पुराण में समस्त ब्रह्माण्ड का वर्णन होने के कारण इसका ब्रह्माण्डपुराण पड़ा है। इस पुराण में 12000 श्लोक है। इस पुराण में विश्व का विस्तृत रूप से वर्णन प्राप्त होता है।

बोध प्रश्न: - 2

1- पुराणों की संख्या कितनी है ?

2- श्लोकों की संख्या में कौन पुराण सबसे बडा है?

3- राजनीतिशास्त्र और ज्योतिषशास्त्र का वर्णन किस पुराण में मिलता है ?

5.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि भारतीय विद्याओं की यह मान्यता रही है कि सर्वविद्या का मूल वेद है। भारतीय सनातन परम्परा में वेद को 'अपौरूषेय' कहा गया है। अपौरूषेय का अर्थ होता है – जिसे कोई पुरूष पूर्णरूपेण व्यक्त न कर सके। 'विद् ज्ञाने' धातु से वेद शब्द की निष्पत्ति हुई है। परमपिता ब्रह्मा जी के द्वारा चार वेदों की उत्पत्ति हुई है। उनके नाम है – ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद। वस्तुत: इस जगत में वेद से इतर कोई ज्ञान नहीं है। वेद में विपुल ज्ञानराशि का भण्डार है। वेदों के विस्तार हेतु पुराणों का उद्भव हुआ। ''अष्टादशपुराणेषु व्यासेषु वचनद्वयम्'' के आधार पर महर्षि वेदव्यास जी ने अठारह पुराणों की रचना की थी। वेद एवं पुराण भारतीय सनातन परम्परा के मेरूदण्ड है।

5.6 पारिभाषिक शब्दावली

भारतीय – जो भारत का हो

अपौरूषेय – जिसे कोई पुरूष न जानता हो

पूर्णरूपेण – पूरी तरह से

विपुल – अपार

अष्टादश – अठारह (18)

द्वयम् – दो

सर्वविद्या - समस्त विद्या

5.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्नों के उत्तर – 1

1- वेदों की संख्या चार है , ऋग्वेद, यजुर्वेद सामवेद, अथर्ववेद।

2- ऋग्वेद की मुख्य पांच शाखाओं के नाम है- 1. शाकल 2. बाष्कल 3. आश्वलायन 4. शांखायन 5. माण्डूकायन।

3- 'वेदानां सामवेदोऽस्मि' यह वाक्य गीता से लिया गया है।

बोध प्रश्नों के उत्तर – 2

1- पुराणों की संख्या अठारह है।

2- श्लोकों की संख्या में स्कन्द पुराण सबसे बडा है।

3- राजनीतिशास्त्र और ज्योतिषशास्त्र का वर्णन अग्नि पुराण में मिलता है।

5.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वैदिक साहित्य का इतिहास - बलदेव उपाध्याय

2. पुराण विमर्श

5.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. वेद से आप क्या समझते है ? वर्णन कीजिये।

2. वेद को अपौरूषेय क्यों कहा जाता है ?

3. पुराण के भेदों को समझाते हुए स्पष्ट कीजिये ?

4. भारतीय सनातन परम्परा में पुराण का महत्व निरूपण कीजिये।

खण्ड – 2
पंचांग

इकाई – 1 पंचांग परिचय

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 पंचांग परिचय
1.4 तिथि, वार, नक्षत्र ज्ञान
1.5 योग एवं करण ज्ञान
1.6 सारांश
1.7 शब्दावली
1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.9 संदर्भ ग्रंथ सूची
1.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

ज्योतिष शब्द से ज्यादा प्रचलित और उपयोगी ज्योतिष विषयक कोई विषय है तो वह है – पंचांग। पंचांग ज्योतिष गणना और फलादेश दोनों के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। पंचांग को अंग्रेजी में 'कैलेण्डर' या 'एफेमेरिज' कहा जाता है। जिस तरह से एक सामान्य व्यक्ति के घर और कार्यालय में तारीख और वार (दिन) को जानने के लिए दीवार पर कोई न कोई कैलेण्डर लटका रहता है उस तरह से ज्योतिषी के पास पंचांग होता है। इसलिए ज्योतिष को पंचांग के बिना अधूरा कहा जाता है। गणित, फलित और मुहूर्त के लिए पंचांग की जानकारी प्रत्येक ज्योतिषी को बहुत आवश्यक है। दैनिक जीवन में हमें कदम - कदम पर समय की शुभाशुभता को जानने के लिए पंचांग की आवश्यकता होती है। इसलिए आपके लिए इस इकाई का अध्ययन बहुत उपयोगी सिद्ध होगा।

1.2 उद्देश्य -

- ❖ पंचांग को परिभाषित कर सकेंगे।
- ❖ पंचांग के अंगों को जान लेंगे।
- ❖ तिथि के शुभाशुभ प्रभाव को समझ लेंगे।
- ❖ वार एवं नक्षत्र के सभी घटकों को समझा सकेंगे।
- ❖ योग का विश्लेषण कर सकेंगे।
- ❖ करण को समझ जायेंगे।

1.3 पंचांग परिचय -

ज्योतिष के मुहूर्त खण्ड में अनेक प्रकार के नित्य उपयोगी मुहूर्तों को ज्ञात करने के लिए पंचांग नामक पुस्तक की आवश्यकता होती है। पंचांग का शाब्दिक अर्थ है - पाँच अंग। ज्योतिषीय पंचांग के ये पाँच अंग - तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण है। इन पाँचो की दैनिक गणना पंचांग नामक पुस्तक में व्यवस्थित रुप से प्रकाशित रहती है। पंचांग की गणना का आधार सूर्योदय होता है । अतः स्थान परिवर्तन के साथ सूर्योदय में अन्तर आने के कारण पंचांग की गणनाओं में अन्तर आ जाता है। यही कारण है कि बाजार में प्रमुख शहरों के अक्षांश, रेखांश का आधार लेकर ज्योतिषीय गणना की जाती है। ज्योतिष प्रेमी पाठकों को ऐसे पंचांग को खरीदना चाहिए जिसकी गणना उनके शहर के आधार पर की गई हो। पंचांग से लग्न सारिणी और ग्रह स्पष्ट तालिका देखकर उस संवत् में जन्में जातक की जन्मकुंडली कुछ ही मिनटों में तैयार की जा सकती है। पंचांग का सर्वाधिक प्रयोग मुहूर्त

गणना के लिए किया जाता है।

एक विद्धान ने पंचाग के बारे में लिखा है-

चतुरंगबलो राजा जगतीं वशमानयेत् ।।

अहं पंचांगबलवानाकाशं वशमानये ।

अर्थात् पंचांग ने एक बार अपना महत्व बतलाते हुए उद्घोषणा की कि राजा तो बेचारा चतुरंग (चार अंग- हाथी, घोड़ा, रथ और पैदल सेना) के द्वारा धरती के लोगों को ही जीत सकता है, वश में कर सकता है, लेकिन मैं पंचांग इतना बलवान हूँ कि आकाश में स्थित नक्षत्रों को भी वश में कर लेता हूँ अर्थात् उनकी जानकारी दे कर लोगों को उनके अनिष्ट प्रभाव से बचा सकता हूँ।

दिन (वार) परिचय

पंचांग के पांच अंगों में से वार एक है। बोलचाल की भाषा में वार को दिन के नाम से भी पुकारा जाता है। ज्योतिष में वार सूर्योदय से शुरु होकर अगले सूर्योदय से प्राम्भ होने तक का समय कहलाता है। वार की अवधि 24 घण्टे अर्थात् 60 घटी होती है। सूर्योदय के समय जिस ग्रह की पहली होरा होती है उस वार का नामकरण उसी ग्रह के आधार पर किया जाता है। सृष्टि के प्रारंभ में हमारे ऋषियों की दृष्टि सर्वप्रथम सूर्य पर पड़ी इसलिए पहली होरा का स्वामी सूर्य को माना गया और पहले दिन का नामकरण रविवार किया गया। इसी प्रकार अगले दिनों में सूर्योदय के समय पहली होरा चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि की क्रमानुसार आती है, इस कारण वारों का नामकरण और क्रम निम्नलिखित क्रमानुसार किया गया -

रविवार, सोमवार, मंगलवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार और शनिवार।

दिन के शुभाशुभ फल का ज्ञान

जिसका जन्म रविवार में हो वह अधिक पित्त वाला, कार्यक्षेत्र में निपुण, उग्र तेज वाला, झगड़ालू, दानी और महाउत्साह करने वाला होता है।

जिस बालक का जन्म सोमवार में हो वह बुद्धिमान, प्रिय कथा वाचक, राज कृपा पाने वाला और सुख-दुख को बराबर मानने वाला होता है।

मंगल के दिन जन्मा बालक उल्टी बुद्धिवाला, दीर्घायु, वीर, महाबली, सेनाप्रमुख एवं अपने परिवार में प्रधान पालन करने वाला होता है।

जो आदमी बुध के दिन जन्म ले वह लेखन कार्य से अपनी जीविका निर्वाह करने वाला, मधुरभाषी, विद्धान पण्डित, सुन्दर आकृति एवं बड़ी सम्पत्ति से युक्त धनवान होता है।

जिसका जन्म बृहस्पति के दिन हो वह धनी, विद्वान, विवेकी, प्रशंसनीय कार्य करने वाला, साधारण जनों से पूजित, किसी ग्रन्थ का सचयिता या राजा का मंत्री बनकर रहता है।

जिसका जन्म शुक्र दिन में हो वह चंचल, देवता से द्वेष करने वाला, धन के द्वारा खेल में रत, बुद्धिमान, मनोहर रूप वाला और अनवसर में भी अधिक बोलने वाला होता है।

शनि दिन के उत्पन्न जातक स्थिर पुरूष से जायमान, दृढ़ वाणी वाला, पापी, दुखित चित्त वाला, पराक्रमशील, अद्योदृष्टि रखने वाला, दृढ़ प्रतिज्ञ, अधिक केश वाला एवं सर्वदा जरावस्था प्राप्त स्त्रियों में रत रहता है।

जिसका जन्म दिन में हो वह आदमी अच्छे धर्माचरण से युक्त, अधिक पुत्र एवं अधिक भोग करने वाला, सर्वदा स्त्री के साथ रहने वाला, अधिक काम चेष्टा से पीडित अंग वाला, अच्छे वस्त्रों का धारणकर्ता, बुद्धिमान और सुन्दर आकृति वाला होता है।

जो आदमी रात्रि में पैदा हो वह कम बोलने वाला, अधिक काम चेष्टा में युक्त, क्षय रोग वाला, अधिक मलिन हृदय वाला, पापात्मा और छिपकर पाप करने वाला होता है।

तिथि परिचय

भारतीय ज्योतिष में दैनिक जीवन में तिथियों को विशेष महत्वपूर्ण माना गया है । आज भी भारतीय संस्कृति में पर्व और त्यौहार तिथियों की गणना कर निश्चित किए जाते हैं । पंचांग में पहला कॉलम ही तिथियों का होता है। एक मास में दो पक्ष होते है - कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष । प्रत्येक पक्ष में पन्द्रह-पन्द्रह तिथियां होती है। कृष्ण पक्ष में पन्द्रहवीं तिथि को 'अमावस्या' कहते है और शुक्ल पक्ष में अन्तिम पन्द्रहवीं तिथि को 'पूर्णिमा' कहा जाता है । कृष्ण पक्ष की पहली तिथि से नये मास का आरम्भ होता है।

तिथियों का ज्ञान -

जिसका जन्म प्रतिपदा तिथि में हो वह पापियों के साथ रहने वाला, दरिद्र, कुल का सन्तापकर्ता, एवं व्यसनों में आसक्त चित्त वाला होता है।

द्वितीया तिथि में समुद्रभूत बालक सर्वदा पराई स्त्रियों में रत, मिथ्याभाषी, शौचहीन, चोर और स्नेह हीन होता है।

तृतीय में जन्म लेने से आदमी चेतना से रहित, अति विकल, दरिद्र और पराये से द्वेष करने वाला होता है।

जिसका जन्म चतुर्थी तिथि में होता है वह आदमी महाभोगी, दानी, मित्रों के ऊपर स्नेह करने वाला,

पण्डित, धनी एवं संतति (पुत्र-कन्या से संयुक्त रहता है)।

पंचमी में जन्म लेने से आदमी व्यवहार में चतुर, गुणों को ग्रहण करने वाला, पिता की रक्षा करने वाला, दानी, भोक्ता और अपनी आकृति से प्रसन्न रहता है।

जिस आदमी का जन्म षष्ठी तिथि में हो वह अनेक देशों में भ्रमण करने वाला, सर्वदा सभी से झगडने वाला और हमेशा अपने उदर का भरण-पोषण करने वाला होता है।

सप्तमी तिथि में जन्म लेने वाला प्राणी थोडे में संतोष करने वाला, तेजवान, सौभाग्यशाली, गुणी, पुत्रवान और धनी होता है।

अष्टमी तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य धर्मवान, सत्य बोलने वाला, दानी, भोक्ता, दयालु, गुणी और सम्पूर्ण कर्मो में निपुण होता है।

नवमी तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य देवताओं का आराधक, पुत्रवान, धन एंव स्त्री में आसक्त मन वाला और शास्त्र में अभ्यास में सदा रत रहने वाला होता है।

दशमी तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य धर्म शास्त्र को जानने वाला, देवताओं की सेवा करने वाला, यज्ञ करने वाला, तेजवान और सदा सुख से युक्त होता है।

एकादशी तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य थोडे में धैर्य वाला, राजा के आश्रय में रहने वाला धनवान और विद्यावान होता है।

द्वादशी तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य चंचल और चपलता को जानने वाला, सदैव दुबले शरीर वाला और देशाटन करने वाला होता है।

त्रयोदशी तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य महासिद्ध, बडा विद्वान, शास्त्राभ्यास करने वाला, इन्द्रियों को वश में रखने वाला और सदा दूसरों के काम में रहने वाला होता है।

चतुर्दशी तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य धर्मवान, धर्मशील, शूरवीर, सत्य बोलने वाला, राजा से मान पाने वाला और यशस्वी होता है।

पौर्णमासी तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य धनवाला, बुद्धिमान, अधिक भोजन की लालसा रखने वाला, उत्साही और परस्त्रियों में आसक्त रहने वाला होता है।

अमावास्या तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य आलसी, दूसरों के साथ ईर्ष्या रखने वाला, क्रोधी, मूर्ख, पराक्रमी, मूढ राजा का मंत्री और ज्ञानवान होता है।

नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता और पूर्णा ये पांच तिथियां क्रमानुसार प्रतिपदार से तीन बार गणना करने पर होती हैं यथा 1/6/11 को नन्दा, 2/7/12 को भद्रा, 3/8/13 को जया, 4/9/14 को रिक्ता और

5/10/15 को पूर्णा तिथि जानो।

नन्दा तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य बडे मान वाला, पण्डित, देवताओं की भक्ति में निष्ठा रखने वाला, ज्ञानवान और प्यारा होता है।

भद्रा तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य बन्धु में मान्य, राजसेवी, धनवान, संसार के भय (मृत्यु) से डरने वाला और परमार्थी होता है।

जिस जातक का जन्म जया तिथि में हो वह राजाओं में पूजा पाने वाला, पुत्र, पौत्र आदि से रहित, शूर, धीर, दीर्घायू और अन्यों के मन की बात को जानने वाला होता है।

जो आदमी रिक्ता तिथि में जन्म पाया हो वह हरेक कामों में अनुमान करने वाला, प्रमाद करने वाला, गुरूओं का निन्दक, शास्त्रों को जानने वाला, दूसरों के मद को नाश करने वाला एवं अधिक काम-चेष्टा रखने वाला होता है।

पूर्णा तिथि में जन्म लेने से आदमी धनों से पूरित, वेद शास्त्र के अर्थों का सारांश जानने वाला, सत्यवादी, विशुद्ध अन्तकरण वाला (जिसमें जरा भी कालुष्य नहीं हो) और अच्छा पण्डित होता है।

नक्षत्रों का परिचय

हमें आकाश में असंख्य तारे दिखाई देते हैं जिन्हें ध्यान से देखने पर विभिन्न आकृतियों के स्वरुप की झलक दिखलाई पड़ती है। तारों की ये विशिष्ट आकृति ही नक्षत्र कहलाती है। आकाश मंडल में फैले हुए सभी तारा समूहों को ज्योतिष मतानुसार विशिष्ट आकृति के अनुसार 27 भागों में बांटा गया है और प्रत्येक का अलग अलग नामकरण किया गया है। एक नक्षत्र का मान 13 अंश 20 कला होता है। किसी भी जातक के लिए जन्म नक्षत्र बहुत महत्वपूर्ण होता है। नक्षत्रों को सूक्ष्मता से समझने के लिए प्रत्येक नक्षत्र को चार चरणों में विभाजित किया गया है। जन्म के समय चन्द्रमा जिस नक्षत्र में होता है उसी के अनुसार जातक का नामकरण किया जाता है। पंचांग में नक्षत्रों के नाम और उनके प्रारम्भ या समाप्ति काल का विवरण दिया रहता है।

नक्षत्रों का शुभाशुभ प्रभाव

अश्विनी नक्षत्र में जन्म लिया हुआ मनुष्य सुन्दर, सुभग, कार्यमात्र में दक्ष, मोटी देह वाला, बडा धनी एवं जन्ममात्र का प्रेमी बना रहता है।

जिसका जन्म भरणी में हो वह नीरोग, सत्य बोलने वाला, जीवन सार्थक करने वाला, दृढप्रतिज्ञ, अच्छे सुख करने वाला और धनी होता है।

जो व्यक्ति कृतिका नक्षत्र में उत्पन्न हुआ हो वह कृपण, पापी, सब दिन पीडित और प्रतिदिन अकर्म

करने वाला बना रहता है।

धनी, उपकार को जानने वाला, मेधावी, राजाओं से मान्य, मधुरभाषी, सत्य बोलने वाला, एवं अच्छी आकृति वाला, जातक रोहिणी नक्षत्र में जन्म लेने से होता है।

जो आदमी मृगशिरा नक्षत्र में जन्म लिया हो वह चंचल, कार्य मात्र में चतुर, धीर, छल व्यापार से निन्दित कर्म करने वाला, अहंकार रखने वाला, एवं दूसरों से द्वेष करने वाला होता है।

आर्द्रा में जन्म लेने से उपकार को न मानने वाला, क्रोधी, पापी, शठ और धनधान्य से वंचित रहता है।

जिसका जन्म पुनर्वसु नक्षत्र में हो वह शांत, सुखी, पूरा भोग करने वाला, सुन्दर आत्मीय जनों के प्रेमी, सर्वदा पुत्र मित्र आदि से युक्त बना रहता है।

जिसकी उत्पत्ति पुष्य नक्षत्र में होती है वह देवता, धर्म, धन इनसे युक्त, पुत्र वाला, उत्तम पण्डित, शांत स्वभाव वाला, सुन्दर आकृतिवाला सुखी होता है।

जो आदमी आश्लेषा नक्षत्र में जन्म लेता है वह भक्ष्य- अभक्ष्य का कुछ भी विचार न कर सब चीजों का खाने वाला, यमराज के समान आचरण करने वाला, कृतघ्न, दुर्जन और किये हुये कर्मों को ही करने वाला होता है।

मघा नक्षत्र का उत्पन्न बालक अधिक नौकर रखने वाला, धनी, भोगी, पिता, पितामह, माता आदि में भक्ति रखने वाला, महा उद्यमी, सेनापति एवं राजाओं की सेवा करने वाला होता है।

जिसका जन्म पूर्वाफाल्गुनी में हो वह विद्यावान, गौओं को रखने वाला, धनी, गम्भीर, सुख पाने वाला और अनेक पण्डितों से पूजित रहता है।

उत्तराफाल्गुनी में जो जन्म लेता है वह सहनशील, शुर, कोमलवक्ता, वाग्मी, बाण विद्या में प्रवीण, महा योद्धा और सर्व साधारणजनों में भी प्रिय व्यवहार करने वाला होता है।

हस्त नक्षत्र का जन्मा हुआ आदमी मिथ्यावादी, व्यर्थ साहसी, मदिरा पान करने वाला, परिवारहीन, चोर एवं परायी स्त्रियों से संभोग करने वाला होता है।

चित्रा में पैदा होने से जातक पुत्र एवं स्त्री से सहित, तुष्ट, धन धान्य आदि के परिपूरित, देवता एवं ब्राह्मण में भक्ति करने वाला होता है।

जिस मनुष्य का जन्म स्वाती नक्षत्र में हो वह पण्डित, धार्मिक, कृपण, प्रिय से प्रेम करने वाला, सुशील एवं देवताओं का भक्त बना रहता है।

जिसकी पैदाइशी विशाखा में समझी जाय वह बडा लोभी, अतिशय अभिमान रखने वाला, निर्दयी

झगडा में प्रेम रखने वाला, और वेश्याओं के साथ दुष्कर्म करने वाला होगा ऐसा जानना चाहिये।

अनुराधा का उद्भव बालक अपने पुरूषार्थ से देशान्तर में रहने वाला, सर्वदा अपने परिवार के कामों में उद्यम करने वाला, एवं धृष्ट होता है।

ज्येष्ठा नक्षत्र में जन्म लेने वाला आदमी अधिक मित्र रखने के कारण स्वयं प्रधान, काव्यकर्ता, सहनशील, परम चतुर, धर्म में रत एवं शूद्रों से पूजित होता है।

जिसका जन्म मूल में हो वह सुखी, धन, वाहन से युक्त, हिंसक, बलवान, विचार पुरस्सर कामों को करने वाला, शत्रुओं का संहारकर्ता और पण्डित होता है।

जिसका जन्म पूर्वाषाढा में हो वह अपरिचित को भी देखने से ही उपकार करने वाला, भाग्यवान, जनों का प्रेमी, और सर्व विषयों का विलक्षण पण्डित अवश्य होता है।

जो आदमी उत्तराषाढा में जन्म लिया हो वह अधिक मित्र वाला, महाकराल शरीर वाला, विनयी, सुखी, शूर और सर्वत्र विजय पाने वाला होता है।

जिसका जन्म अभिजित नक्षत्र में हो वह सुललित कान्ति वाला, सज्जनों का प्रिय, विनीत, अच्छी कीर्ति वाला, सुन्दर, ब्राह्मण और देवताओं में भक्ति करने वाला स्पष्ट वक्ता एवं अपनी जाति में राजा बनकर रहता है।

जिस जातक का जन्म श्रवण नक्षत्र में हो वह उपकार को मानने वाला, सुन्दर, दानी, सर्व गुणों से युक्त, धनी एवं अधिक संतान वाला होता है।

धनिष्ठा जन्म नक्षत्र होने से आदमी गान का प्रेमी, परिवार में मान्य, सुवर्ण, मोती आदि आभूषणों से शोभित एंव सैकडों आदमियों का अधिपति होकर रहता है।

जो आदमी शतभिषा नक्षत्र में जन्म ले वह कृपण, धनी, परस्त्री सेवी, और देशांतर में अधिक काम चेष्टा रखने वाला होता है।

पूर्वाभाद्रपद जन्म नक्षत्र वाला पुरूष वक्ता, सुखी, सम्मान वाला, अधिक सोने वाला एवं निरर्थक याने स्वये किसी विशेष काम लायक नहीं होता है।

उत्तराभाद्रपद जन्म नक्षत्र होने से आदमी गौरवर्ण, सत्व गुण प्रधान, धर्म ज्ञाता, शत्रुओं का नाश करने वाला, उत्कृष्ट देवता के समान, एवं साहस करने वाला होता है।

जिस आदमी का जन्म नक्षत्र रेवती में हो वह सब अंगों से परिपूर्ण, पवित्र कार्य मात्र में दक्ष शूर पण्डित एवं धन धान्य से सर्वदा अलंकृत रहता है।

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 1- पंचमी तिथि को जन्में जातक की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
प्रश्न 2- अमावस्या को जन्म लेने वाला व्यक्ति कैसा होता है, बताइए।
प्रश्न 3- रविवार को जन्मे जातक की खूबियों पर प्रकाश डालिए।
प्रश्न 4- शुक्रवार के दिन जन्म लेने वाला मनुष्य कैसा होता है ?
प्रश्न 5- आश्लेषा नक्षत्र में जन्मे जातक की विशेषताओं को बताइए।
प्रश्न 6- शतभिषा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक कैसा होता है ?
प्रश्न 7- रेवती नक्षत्र में जन्मे जातक की विशेषताएं बताइए।

योग परिचय -

योग शब्द का सामान्य अर्थ है - जोड़। चन्द्रमा और सूर्य मिलकर जब 800 कलाएं चल लेते हैं तो एक योग व्यतीत होता है। ज्योतिष में दो प्रकार के योग होते हैं। नैसर्गिक योग तथा तात्कालिक योग। नैसर्गिक योगों का क्रम एक समान होता है लेकिन तात्कालिक योग तिथि वार और नक्षत्र के विशेष संयोग से बनते है। पंचांग में योग तालिका में नैसर्गिक योग कुमानुसार दिये जाते हैं जिनका विवरण आगे दिया जा रहा है -

योग का नाम	योग के स्वामी
विष्कुम्भ	यम
प्रीति	विष्णु
आयुष्मान	चन्द्रमा
सौभाग्य	ब्रह्मा
शोभन	बृहस्पति
अतिगण्ड	इन्द्र
सुकर्मा	जल
धृति	सर्प
शूल	अग्नि
गण्ड	सूर्य
वृद्धि	भूमि
ध्रुव	वायु
व्याघात	भग

हर्षण	वरुण
वज्र	गणेश
सिद्धि	रुद्र
व्यतिपात	कुबेर
वरियान	मित्र
परिघ	कार्तिकेय
शिव	सावित्री
सिद्ध	लक्ष्मी
साध्य	पार्वती
शुभ	अश्विनी कुमार
शुक्ल	पितर
ब्रह्मा	दिति
इन्द्र	
वैधृति	

योग का शुभाशुभ प्रभाव

जिसका जन्मकालिक योग विष्कुम्भ हो वह आदमी सुन्दर, भाग्यवान, सब प्रकार के अंलकारों से परिपूर्ण, महाबुद्धिमान और शास्त्रों में विशारद होता है।

जो आदमी प्रीति योग में जन्म लिया हो वह ललनाओं का परम स्नेही, व्यवहार मात्र से सार को जानने वाला, महा उत्साही एवं स्वार्थ साधन में प्रतिदिन उन्नत रहता है।

जिसका जन्म आयुष्मान योग में हुआ हो वह मानी, धनी, काव्यकर्ता, दीर्घायु, सब प्रकार के पशु पक्षियों से युक्त, एवं युद्ध में किसी न हारने वाला होता है।

जिसका जन्मयोग सौभाग्य हो वह राजा का मंत्री, सब कामों में प्रवीण, एवं स्त्रियों का प्रेमी बना रहता है।

जो व्यक्ति शोभन योग में जन्म लिया हो वह देखने में सुन्दर, अधिक पुत्र एवं अधिक स्त्री वाला, सब कामों में आतुरता दिखाने वाला और युद्धक्षेत्र में सम्मिलित होने के लिये सर्वदा तैयार रहता है।

जो अतिगण्ड योग में जन्म लेता है वह भातृद्वेषी होता है। यदि वह गउान्त में जन्म लिया हो तो सारे कुल को नाश करने वाला होगा ऐसा जानना चाहिये।

जिसका जन्मयोग सुकर्मा हो वह जातक सुकर्म करने वाला, मनुष्य मात्र का प्रेमी, सुशील, रोगवान, भोगवान और अधिक गुण वाला होता है।

धृतियोग का उत्पन्न बालक धीरज रखने वाला, कीर्तिमान, दृष्ट, पुष्ट, धनी, भाग्यवान, सुखी, विद्वान, एवं गुणी होता है।

जिसका जन्मयोग शूल हो वह हृदयशुल वाला, धार्मिक पुरूष, शास्त्रों का परम विद्वान, विद्या और धन का उपार्जन में प्रवीण तथा यज्ञकर्ता होता है।

जिसके जन्मकाल में गण्डयोग समाप्त हो वह जातक गलगण्ड रोग से पीडित, अधिक क्लेश वाला, बडा एवं मोटा सिर वाला, पतला शरीर वाला, महाशूरवीर, अधिक भोग करने वाला तथा दृढ प्रतिज्ञ अर्थात जो बोले उसको अवश्य पूरा करने वाला होता है।

जो आदमी वृद्धि योग में जन्म लेता है वह सुन्दर, अधिक पुत्र तथा स्त्री पाने वाला, धनी, भोगी और बली बना रहता है।

ध्रुव योग जन्म योग होने से जातक की दीर्घायु, देखने में सभी को आनन्द देने वाला, विचार पुरस्सर सुस्थिर काम करने वाला, कार्यमात्र में अत्यंत समर्थ और निश्चित बुद्धि रखने वाला यानि कभी अपने लक्ष्य से च्युत नहीं होने वाला होता है।

जिसके जन्कालीन योग व्याघात हो वह सब विषयों का पूरा ज्ञाता, सभी आदमी से पूजित, काममात्र में अपनी दक्षता दिखाने वाला, लोक में प्रसिद्ध एवं सांसारिक सभी कामों में प्रख्यात रहता है।

जिसका जन्म योग हर्षण हो वह लोक में महाभाग्यशाली, राजा का प्रेमी, उत्साह करने वाला, सर्वदा धनों से युक्त और वेदशास्त्र का अद्धितीय पण्डित होता है।

जिसके जन्मकाल में वज्र योग उपस्थित हो वह वज्र के समान कठोर मुठठी वाला, सब विद्याओं और अस्त्रों में पारंगत, धन धान्य से परिपूरित, विषय मात्र में तत्व का ज्ञाता एवं अधिक पराक्रमशाली होता है।

सिद्धियोग में जन्म ग्रहण किया हुआ आदमी सर्वसिद्धि से सहित याने सभी कामों में सिद्धि पाने वाला, दानी, भोगी, सुखी, मनोहर, शोक रखने वाला तथ रोगी बना रहता है।

जिसका जन्म व्यतिपात योग में हो वह बड़ा कष्ट से जीवित रहता है, कदाचित उसके जीने में प्रतिबन्धा न पड़ा तो लोक में सर्वश्रेष्ठ होकर जीता रहता है।

जिसके जन्म योग वरियान हो वह बालक खूब बली, चित्र आदि खींचने की कल में पूरा निपुण, गाना एवं नाच आदि का पण्डित होता है।

परिघ योग में जन्म लेने से आदमी निज कुल में पूरी उन्नति करने वाला, शास्त्रों को जानने वाला, अच्छी कविता बनाने वाला, अधिक वक्ता, दाता भोक्ता तभा सभी से प्रिय वाणी कहलाने वाला होता है।

शिवयोग में जो आदमी जन्म लेता है वह कल्याण का पात्र, लोक में साक्षात महादेव के समान परिगणित होने वाला अर्थात अहर्निश उन्हीं के ध्यान, पूजा आदि में रुद्राक्ष माला प्रभृति उनके चिन्हों का धारण करने से महादेव ही समझने लायक और बुद्धिमान् होता है।

जिसक जन्मकाल में सिद्धि योग पड़े वह कार्यमात्र में सिद्धि देने वाला, मन्त्रों को अनुष्ठानादि से सिद्धि करने वाला, अच्छी खूबसूरत स्त्री वाला एवं सब तरह की सम्पति रखने वाला होतो है।

जिसका जन्म साध्योग में हो उसको सिद्धि केवल मानसिक हुआ करती है, अधिक यश तथा निःशेष सुख पानेवाला, सभी कामों को विलम्ब से करने वाला, प्रसिद्ध ओर सबके मन के अनुकूल रहता है।

शुभ योग में जन्म लेने से आदमी सर्वदा अनेक शुभ कामों से युक्त, धनी, सब तरह के ज्ञानों से परिपूरित, दानी और ब्राह्मणों की सेवा करने में तत्पर रहता है।

शुक्लयोग में जन्मग्रहण किया हुआ मनुष्य सब तरह की कलाओं को जानने वाला सवोर्थ ज्ञानी, कवि, प्रतापी, शूर, धनी और सब आदमियों का प्रेमी होता है।

जिसका जन्म ब्रह्मयोग में हो वह बड़ा भारी विद्वान, वेदशास्त्रा में अद्वितीय विद्वान, परब्रह्म की पहिचान में अहर्निश समय बितानेवाला और सभी कामों में पण्डित है।

ऐन्द्र योग का समुद्भू बालक यदि क्षत्रिय कुल का हो तो निश्चय किसी विशेष साम्राज्य का अधिपति होकर राजा कहावे, थोड़े दिन तक जीनेवाला, सुखी तथा भोगी भी होता है।

वैधृति योग में उत्पन्न हुआ आदमी उत्साहीन, सदा क्षुधा रखने वाला, दूसरे लोगों से प्रेम करता हुआ भी स्वयं उनका प्रेमी नहीं होता है।

करण परिचय

करण का मान तिथि से आधा होता है। इस कारण एक तिथि में दो करण होते है। शुक्लपक्ष और कृष्ण पक्ष की तिथियों में करण अलग अलग होते हैं। करणों के नाम और उनके स्वामी की तालिका आगे दी जा रही है -

करण का नाम	करण का स्वामी
बव	इन्द्र
बालव	ब्रह्मा

कौलव	सूर्य
तैत्तिल	सूर्य
गर	पृथ्वी
वणिज	लक्ष्मी
विष्टि	यम
शकुनि	कलयुग
चतुष्पद	रुद्र
नाग	कलयुग
किंस्तुघ्न	वायु

करण का शुभाशुभ प्रभाव

1. जिस जातक के जन्म समय में बव करण हो वह मान रखनेवाला, सर्वदा धर्मकार्य में रत, शुभ और मंगल कर्मों को करने वाला एवं उसी काम को वह करने वाला होगा जो कि खूब स्थायी समझा जाय।

2. जिसका जन्म वालब करण में हो वह तीर्थ (काशी, प्रयाग, वृन्दावन आदि) देवता, पितृगण, आदि का सेवक, विद्या, धन और सुख तीनों से परिपूर्ण तथा राजाओं का मान्य होता है।

3. जिसका जन्म कौलव कारण में सिद्ध हो वह सब आदमियों से प्रीति रखने वाला, अपने मित्रों के साथ सहानुभूति दिखाने वाला एंव अभिमानी होता है।

4. तैतिल करण में जन्म लेने से कल्याण और धन से पूर्ण, प्रत्येक मनुष्य से स्नेह रखनेवाला, पूरी सजावट के साथ अनेक चित्रित गृहों का मालिक बना रहता है।

5. जिस जातक का जनम गर-संज्ञक करण में हो वह गृहस्थी का काम (खेती बारी) में प्रवीण, घर के कामों में निपुण और जो उसके वांच्छित हो वह उसे कठिन उपाय द्वारा भी प्राप्त करने वाला होता है।

6. जो वाणिज करण का जन्मा हुआ हो वह व्यापार कर्म से अपनी जीविका चलाने वाला और देशान्तर में जाने आने का व्यवहार करने सवे सभी कामनाओं का पूर्ण करने वाला होता है।

7. जिसका जन्मकरण विष्ठिसंज्ञक (भद्रा) हो वह अशुभ कामों का आरम्भ करने वाला परस्त्री के साथ सम्भोग एवं विषय कार्य में चतुर हो जाता है।

8. शकुनि नाम करण में जन्म लेने वाला जातक पौष्टिक आदि क्रियाओं के द्वारा दवाई बनाने से प्रवीण एवं उसी से अपनी जीविका चलाने वाला हेगा ऐसा जानना चाहिये।

9. जो आदमी चतुष्पद में पैदा होता है वह सर्वदा के लिये देवता और ब्राह्मण में रत, गौओं की सेवा में तत्पर तथा उसी काम से लोक में प्रशंसित एवं चौपालों का चिकित्सा करने वाला होता है। (जैसे कि आज कल पशु अस्पताल में डाक्टर लोग चिकित्सा करते हैं।)

10. जिसका जन्म नाग करण में सिद्ध हो वह मल्लाहों से प्रेम करने वाला, महा कठोर कर्म करने वाला, देखने में कुरूप और चंचल आँख रखने वाला होता है याने उसकी आँखें कभी स्थिर नहीं रह सकतीं, हर समय इतस्ततः व्यर्थ ही घूमती रहती हैं।

11. जिसका जन्म किस्तुघ्न करण में हो वह अच्छे कामों को करने वाला होता है और सन्तोष, पुष्टि एवं सिद्धि को प्राप्त करता है।

अथ गणानयनम्

1. अब नक्षत्रों के गण निरूपण के लिये पहले देवगण कहते हैं - जैसे अश्विनी, मृगशिरा, रेवती, हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा श्रवण और स्वाती इतने नक्षत्र देवगण कहे गये हें, इनमें जन्म लेने से आदमी देवगण कहलाता है।

2. पूर्वाफल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वभाद्रा, उत्तराफल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्र, आर्द्रा, रोहिणी और भरणी इतने नक्षत्रा मनुष्यगण शास्त्र में कहे गये हैं।

3. अब तीसरा राक्षण गण कहते हैं- कृतिका, मघा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चित्रा, ज्येष्ठा और मूल इतने नक्षत्र राक्षसगण माने गये हैं।

गणफलम्

1. देवगण में जन्म लेने वाला आदमी देखने में सुन्दर, दान करने वाला, बुद्धिमान, सीधा, थोड़ा खानेवाला और बड़ा भारी पण्डित (अनेक शास्त्रों का ज्ञाता) होता है।

2. मनुष्यगण में जन्मग्रहण किया हुआ आदमी अभिमान करने वाला, धनिक, लम्बी आँख वाला, अपने लक्ष्य को वेध करने वाला, यान जिस चीज के ऊपर शर फेंके कभी व्यर्थ न हो, पहले ही बार में लक्ष्य बेधित हो जाय, धनुष को धारण करने वाला, गौर वर्ण, अपने ग्राम के वाशिन्दों के साथ पूरी सहानुभूति रखने वाला होता है।

3. जो आदमी राक्षणगण में जन्म लेता है वह उन्मादी (पागल) देखने में बड़ा भयानक, सर्वदा झगड़ने की इच्छा रखने वाला, कठोर एवं प्रमेह (धातु के बिगड़ जाने से यह रोग पैदा होता है।) रोग वाला बना रहता है।

1.5 सारांश -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि ज्योतिष के मुहूर्त खण्ड में अनेक प्रकार

के नित्य उपयोगी मुहूर्तों को ज्ञात करने के लिए पंचांग नामक पुस्तक की आवश्यकता होती है। पंचांग का शाब्दिक अर्थ है - पाँच अंग। ज्योतिषीय पंचांग के ये पाँच अंग - तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण है। इन पाँचो की दैनिक गणना पंचांग नामक पुस्तक में व्यवस्थित रुप से प्रकाशित रहती है। पंचांग की गणना का आधार सूर्योदय होता है । अतः स्थान परिवर्तन के साथ सूर्योदय में अन्तर आने के कारण पंचांग की गणनाओं में अन्तर आ जाता है। यही कारण है कि बाजार में प्रमुख शहरों के अक्षांश, रेखांश का आधार लेकर ज्योतिषीय गणना की जाती है। ज्योतिष प्रेमी पाठकों को ऐसे पंचांग को खरीदना चाहिए जिसकी गणना उनके शहर के आधार पर की गई हो। पंचांग से लग्न सारिणी और ग्रह स्पष्ट तालिका देखकर उस संवत् में जन्में जातक की जन्मकुंडली कुछ ही मिनटों में तैयार की जा सकती है। पंचांग का सर्वाधिक प्रयोग मुहूर्त गणना के लिए किया जाता है ।

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

तिथि - सूर्य एवं चन्द्रमा का 12 अंश का अन्तर ।

वार – वार सात होते है । रविवार, सोमवार, मंगलवार, बुधवार, गुरूवार, शुक्रवार एवं शनिवार

नक्षत्र - तारों का समूह ।

योग - चन्द्रमा और सूर्य मिलकर बनने वाला जोड़ ।

करण - योग का आधा भाग ।

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 1- ऐसा जातक व्यवहारकुशल, दानी, गुणी, पिता की रक्षा करने वाला व स्वयं की आकृति से प्रसन्न रहने वाला होता है।

उत्तर 2- अमावस्या को जन्मा जातक आलसी, ईष्यालु, क्रोधी, मूर्ख, पराक्रमी, मूढ़ राजा का मन्त्री व ज्ञानवान होता है।

उत्तर 3- रविवार को जन्मा जातक अधिपित्त वाला, परम चतुर, उग्र तेज वाला, युद्ध का प्रेमी, दानी और महा उत्साही होता है।

उत्तर 4- ऐसा जातक चंचल, देवताओं से द्वेष करने वाला, धन के द्धारा खेल में रत, बुद्धिमान, मनोहर रुप वाला, और अनवसर में भी अधिक बोलने वाला होता है।

उत्तर 5- आश्लेषा नक्षत्र में जन्म लेने वाला व्यक्ति भक्ष्य अभक्ष्य का कुछ भी विचार न कर सब चीजों को खाने वाला, यमराज के समान आचरण करने वाला, कृतघ्न, दुर्जन और किए गए कर्मों को ही करने वाला होता है।

उत्तर 6- शतभिषा नक्षत्र में जन्म लेने वाला व्यक्ति कंजूस, धनी, परस्त्री सेवी और देशान्तर में अधिक काम चेष्टा रखने वाला होता है।

उत्तर 7- रेवती नक्षत्र में जातक सब अंगो से परिपूर्ण, पवित्र, कार्यमात्र में दक्ष, शूर, पण्डित एवं धन धान्य से सर्वदा अलंकृत रहता है।

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

बृहत्पाराशर होराशास्त्रम्
मानसागरी
भारतीय कुण्डली विज्ञान
जातक पारिजात

1.9 सहायक / उपयोगी पाठ्यसामग्री

भारतीय कुण्डली विज्ञान
जन्मपत्र व्यवस्था
ज्योतिष रहस्य

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. तिथि से आप क्या समझते है। स्पष्ट कीजिये।
2. वार, नक्षत्र एवं योग का वर्णन कीजिये।
3. पंचांग का विस्तृत वर्णन कीजिये।
4. पंचांग की उपयोगिता पर प्रकाश डालिये।

इकाई – 2 स्वस्तिवाचन, संकल्प एवं न्यास

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 स्वस्तिवाचन परिचय
2.4 संकल्प एवं न्यास
2.5 सारांश
2.6 शब्दावली
2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना -

प्रस्तुत इकाई द्वितीय खण्ड की दूसरी इकाई से सम्बन्धित है। इसके पूर्व की इकाई में आपने पंचांग का ज्ञान कर लिया है। इस इकाई में कर्मकाण्ड से सम्बन्धित स्वस्तिवाचन, संकल्प एवं न्यास का अध्ययन करेंगे। किसी भी पूजन के आरम्भ में स्वस्तिवाचन का विधान है। स्वस्ति का अर्थ है – कल्याण। उसी क्रम में सकाम एवं निष्काम संकल्प तथा न्यास की बात कही गई है।
पूजन में संकल्प के बिना उसकी सिद्धि नहीं होती। अत: संकल्प एक आवश्यक अंग है।
इस इकाई में आप स्वस्तिवाचन, संकल्प एवं न्यास का विधिवत् अध्ययन करेंगे, जिससे आपको तत्सम्बिन्धत ज्ञान हो जायेगा।

2.2 उद्देश्य -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- ❖ स्वस्तिवाचन कैसे किया जाता है, जान लेंगे।
- ❖ संकल्प का क्या महत्व है। समझा सकेंगे।
- ❖ सकाम एवं निष्काम संकल्प को बता सकेंगे।
- ❖ न्यास क्या है। स्पष्ट कर पायेंगे।
- ❖ कर्मकाण्ड में स्वस्तिवाचन, संकल्प एवं न्यास की विधि को बता सकेंगे।

2.3 स्वस्तिवाचन

भारतीय सनातन परम्परा की पूजन सम्बन्धी क्रिया में स्वस्तिवाचन का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है। स्वस्ति का शाब्दिक अर्थ है – कल्याण। पूजन क्रिया में प्रथमतया स्वस्तिवाचन कर्म देवताओं को प्रसन्न करने के लिए , वातावरण को शुद्ध करने के लिए तथा सभी अनिष्टों का शमन कर शान्ति की स्थापना करने के लिए किया जाता है। सर्वप्रथम आचमन पवित्रादि करके गौरी गणेश की प्रतिमा के समक्ष हाथ में अक्षत, पुष्प जलादि लेकर स्वस्तिवाचन करना चाहिये। इसका मन्त्र इस प्रकार है –

हरि: ॐ आ नो भद्रा: क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतासउद्भिद: । देवा नो यथा सदमिद् वृधे असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे ।। देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवाना गॅू रातिरभि नो निवर्तताम् ।

देवाना गॅू सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयु: प्रतिरन्तु जीवसे। तान्पूर्वया निविदा हूमहे वयं भगं मित्रमदितिं दक्षमस्रिधम्। अर्यमणं वरूण गॅू सोममश्विना सरस्वती न: सुभगा मयस्करत्। तन्नो वातो मयोभु वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौ:। तद् ग्रावाण: सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना श्रृणुतं धिष्णया युवम्। तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियंजिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेदसामसदवृधे रक्षिता पायुरदब्ध: स्वस्तये।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवा: स्वस्ति न: पूषा विश्ववेदा:। स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमि: स्वस्ति नो वृहस्पतिर्दधातु। पृषदश्वा मरूत: पृश्निमातर: शुभं यावानो विदथेषु जग्मय:। अग्निजिह्वा मनव: सूरचक्षसो विश्वे नो देवा अवसागमन्निह। भद्रं कर्णेभि: श्रृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्रा:। स्थिरैरंगैस्तुष्टुवा गॅू सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायु:। शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम्। पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तो:। अदितिद्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्र:। विश्वे देवा अदिति: पंच जना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्। द्यौ: शान्तिरन्तरिक्ष गॅू शान्ति:पृथिवी शान्तिराप: शान्तिरोषधय: शान्ति:। वनस्पतय: शान्तिर्विश्वे देवा: शान्तिर्ब्रह्म शान्ति: सर्व गॅू शान्ति:। शान्तिरेव शान्ति: सा मा शान्तिरेधि। यतो यत: समीहसे ततो नो अभयं कुरू। शं न: कुरू प्रजाभ्योऽभयं न: पशुभ्य:। सुशान्तिर्भवतु।

श्रीमन्महागणाधिपतये नम:। लक्ष्मीनारायणाभ्यां नम:। उमामहेश्वराभ्यां नम:। वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नम:। शचीपुरन्दराभ्यां नम:। मातृपितृचरणकमलेभ्यो नम:। इष्टदेवताभ्यो नम:। कुलदेवताभ्यो नम:। ग्रामदेवताभ्यो नम:। वास्तुदेवताभ्यो नम:। स्थानदेवताभ्यो नम:। सर्वेभ्यो देवेभ्यो नम:। सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नम:। ऊँ सिद्धिबुद्धिसहिताय श्रीमन्महागणाधिपतये नम:

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णक:।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायक:॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजानन:।
द्वादशैतानि नामानि य: पठेच्छृणुयादपि॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्ण चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये॥

अभीप्सितार्थसिद्धयर्थं पूजितो यः सुरासुरैः।
सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः॥
सर्वमंगलमंगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते॥
सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममंगलम्।
येषां हृदिस्थो भगवान् मंगलायतनं हरिः॥
तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव।
विद्याबलं देवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि॥
लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः।
येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः॥
यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम॥
अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥
स्मृतेः सकलकल्याणं भाजनं यत्र जायते।
पुरूषं तमजं नित्यं व्रजामि शरणं हरिम्॥
सर्वेष्वारम्भकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः।
देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः॥
विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम्।
वन्दे काशीं गुहां गंगा भवानीं मणिकर्णिकाम्॥
वक्रतुण्ड महाकाय कोटिसूर्यसमप्रभ।
निर्विघ्नं कुरू मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा॥

गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। हाथ में लिये अक्षत - पुष्प को गणेशाम्बिका पर चढ़ा दे। इसके बाद दाहिने हाथ में जल, अक्षत और द्रव्य लेकर संकल्प करें –

निष्काम संकल्प –

ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरूषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे

जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे ..... नगरे : / ग्रामे / क्षेत्रे ..... वैक्रमाब्दे ..... संवत्सरे ..... मासे..... शुक्ल/ कृष्णपक्षे ..... तिथौ ..... वासरे ..... प्रात: / सायंकाले ..... गोत्र: ..... शर्मा / वर्मा / गुप्त: अहं ममोपात्तदुरितक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं ..... देवस्य पूजनं करिष्ये ।

सकाम संकल्प -

यदि सकाम पूजा करनी हो तो कामना - विशेष का नाम लेना चाहिये - या निम्नलिखित संकल्प करना चाहिये -

ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णु: श्रीमद्भगवतो महापुरूषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे ..... नगरे : / ग्रामे / क्षेत्रे ..... वैक्रमाब्दे ..... संवत्सरे ..... मासे..... शुक्ल/ कृष्णपक्षे ..... तिथौ ..... वासरे ..... प्रात: / सायंकाले ..... गोत्र: ..... शर्मा / वर्मा / गुप्त: अहं श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य क्षेमस्थैर्यायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थमाधिभौतिकाधिदैविकाध्यात्मिकत्रिविधतापशमनार्थं धर्मार्थकाममोक्षफलप्राप्त्यर्थं नित्यकल्याणलाभाय भगवत्प्रीत्यर्थं ..... देवस्य पूजनं करिष्ये इस प्रकार पूजन करने के लिए इच्छारिहत निष्काम संकल्प तथा इच्छासहित सकाम संकल्प करना चाहिए।

संकल्प के पश्चात् न्यास करना चाहिये। वृहत्पाराशरस्मृति में लिखा है कि –

यथा देवे तथा देहे न्यासं कुर्याद् विधानत:। अर्थात् यथा देवताओं के लिए न्यास करते हैं वैसे ही सम्पूर्ण शरीर के रक्षार्थ न्यास करना चाहिये। न्यास करने से मनुष्य में देवत्व का आधान होता है।

अंग न्यास –

सहस्रशीर्षा पुरूष: सहस्राक्ष: सहस्रपात्।
स भूमि गॅू सर्वत स्पृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशागुंलम्॥ (बायॅा हाथ का स्पर्श करें)
पुरूष एवेद गॅू सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति॥ (दाहिने हाथ का स्पर्श करें)
एतावानस्य महिमातो ज्यायॅाश्च पुरूष:।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि॥ (बायें पैर का स्पर्श करें)

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरूष: पादोऽस्येहाभवत् पुन: ।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि ।। (दाहिने पैर का स्पर्श करें)
ततो विराडजायत विराजो अधि पुरूष: ।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुर: ।। (बायॉ जानु का स्पर्श करें)
तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत: सम्भृतं पृषदाज्यम् ।
पशूँस्तॉश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ।। (दायॉ जानु का स्पर्श करें)
तस्माद्यज्ञात् सर्वहुत ऋच: सामानि जज्ञिरे ।
छन्दा गूँ सि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ।। (बायॉ कटि भाग का स्पर्श करें)
तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादत: ।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावय: ।। (दायॉ कटि भाग का स्पर्श करें)
तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरूषं जातमग्रत: ।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये ।। (नाभि का स्पर्श करें)
यत्पुरूषं व्यदधु: कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुखं किमस्यासीत् किं बाहू किमुरू पादा उच्येते ।। (हृदय का स्पर्श करें)
ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीदबाहू राजन्य: कृत: ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्य: पदभ्या गूँ शूद्रो अजायत ।। (वाम बाहु का स्पर्श करें)
चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षो: सूर्यो अजायत ।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत ।। (दाहिने बाहु का स्पर्श करें)
नाभ्या आसीदन्तरिक्ष गूँ शीर्ष्णो द्यौ: समवर्तत ।
पदभ्यां भूमिर्दिश: श्रोत्रात्तथा लोकॉ अकल्पयन् ।। (कण्ठ का स्पर्श करें)
यत्पुरूषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्म: शरद्धवि: ।। (मुख का स्पर्श करें)
सप्तास्यासन् परिधयस्रि: सप्त समिध: कृता: ।
देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन् पुरूषं पशुम् ।। (ऑख का स्पर्श करें)
यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमान: सचन्त यत्र पूर्वे साध्या: सन्ति देवा: ।। (मूर्धा का स्पर्श करें)

पंचांग न्यास –

अदभ्य: सम्भृत: पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्मण: समवर्तताग्रे।

तस्य त्वष्टा विदधद्रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानमग्रे॥ (हृदयाय नम:)

वेदाहमेतं पुरूषं महान्तमादित्यवर्णं तमस: परस्तात् ।

तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्य: पन्था विद्यतेऽयनाय ॥ (शिरसे स्वाहा)

प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरजायमानो बहुधा विजायते ।

तस्य योनिं परि पश्यन्ति धीरास्तस्मिन् ह तस्थुर्भुवनानि विश्वा ॥ (शिखाय वषट्)

यो देवेभ्य आतपति यो देवानां पुरोहित:।

पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रूचाय ब्राह्मये॥ (कवचाय हुम दोनों कंधो स्पर्श करें)

रूचं ब्राह्मं जनयन्तो देवा अग्रे तदब्रुवन् ।

यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्तस्य देवा असन् वशे ॥ (अस्त्राय फट, बॉयी हथेली पर ताली बजाये)

करन्यास –

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्य: कृत:।

उरू तदस्य यद्वैश्य: पद्भ्या गॅू शूद्रो अजायत ॥ अंगुष्ठाभ्यां नम: (दोनों अंगूठों का स्पर्श करें)

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षो: सूर्यो अजायत।

श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत। तर्जनीभ्यां नम: । (दोनों तर्जनीयों का स्पर्श करें)

नाभ्यां आसीदन्तरिक्ष गॅू शीर्ष्णो द्यौ: समवर्तत।

पदभ्यां भूमिर्दिश: श्रोत्रात्तथा लोकॉ अकल्पयन् । मध्यमाभ्यां नम: (दोनों मध्यमा अंगूलियों का स्पर्श करें)

यत्पुरूषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।

वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्म: शरद्धवि: ॥ अनामिकाभ्यां नम: (दोनों अनामिकाओं का स्पर्शकरें)

सप्तास्यासन् परिधयस्रि: सप्त समिध: कृता: ।

देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन् पुरूषं पशुम्॥ कनिष्ठिकाभ्यां नम: (दोनों कनिष्ठिकाओं का स्पर्श करें)

ते ह नाकं महिमान: सचन्त यत्र पूर्वे साध्या: सन्ति देवा: ।

करतलकरपृष्ठाभ्यां नम: (दोनों करतल और करपृष्ठों का स्पर्श करें)

अभ्यास प्रश्न –

1. स्वस्ति का शाब्दिक अर्थ है –
   क. स्वागत ख. कल्याण ग.सत्कार घ. पूजन
2. निम्नलिखित में 'विनायक' किसे कहा जाता है –
   क. गणेश ख. महेश ग. सुरेश घ. महेश
3. संकल्प कितने प्रकार के होते है-
   क. दो ख. तीन ग. चार घ. पॉच
4. पंचांग न्यास के अन्तर्गत 'अद्भ्य: सम्भृत:..... 0 मन्त्र से किसका स्पर्श करते है –
   क. हाथ का ख. सिर का ग. हृदय का घ. कोई नहीं
5. यत्र योगेश्वर: कृष्णो यत्र पार्थो ..... ।
   क. जनार्दन: ख. धनुर्धर: ग. विजय: घ.सुरेश्वर:

2.5 सारांश -

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आपने जाना कि भारतीय सनातन परम्परा की पूजन सम्बन्धी क्रिया में स्वस्तिवाचन का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है। स्वस्ति का शाब्दिक अर्थ है – कल्याण। पूजन क्रिया में प्रथमतया स्वस्तिवाचन कर्म देवताओं को प्रसन्न करने के लिए , वातावरण को शुद्ध करने के लिए तथा सभी अनिष्टों का शमन कर शान्ति की स्थापना करने के लिए किया जाता है। संकल्प दो प्रकार के होते है – सकाम एवं निष्काम। पूजन की क्रिया में स्वस्तिवाचन एवं संकल्प के पश्चात् शारीरिक शुद्धि हेतु मन्त्रों द्वारा न्यास का विधान है।

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

स्वस्ति - कल्याण। पूजन के आरम्भ में कल्याणार्थ पढ़े जाना वाला मन्त्र
संकल्प – प्रतिज्ञा, प्रकार - दो सकाम एवं निष्काम
न्यास - अंगों का पवित्रीकरण
शुक्लाम्बर - श्वेत वस्त्र
शशि वर्ण - चन्द्र के समान वर्ण या रंग
चतुर्भुज - चार भुजा वाला

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. क
3. क

4. ग

5. ख

2.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

नित्यकर्मपूजा प्रकाश

सन्ध्या कर्म उपासना

कर्मकलाप

आह्निक पूजन विधि

2.9 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

संध्योपासना

कर्मकाण्ड पूजन पद्धति

2.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. स्वस्तिवाचन से आप क्या समझते है। स्पष्ट कीजिये।
2. संकल्प का परिचय देते हुए महत्व प्रतिपादित कीजिये।
3. न्यास क्या है । स्पष्ट कीजिये।

इकाई – 3 गणेश एवं षोडशमातृका पूजन

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 गणेश पूजन
3.3.1 गणेश एवं षोडशमातृका पूजन
3.4 सारांश
3.5 शब्दावली
3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना-

प्रस्तुत इकाई सी0वी0के - 01 की द्वितीय खण्ड की तृतीय इकाई **'गणेश एवं षोडशमातृका पूजन'** से सम्बन्धित है । इससे पूर्व की इकाई में आपने स्वस्तिवाचन, पंचांगन्यास एवं करन्यास का अध्ययन कर लिया है । इस इकाई में आप गणेश एवं षोडशमातृका पूजन का अध्ययन करने जा रहे है ।

सर्वविदित है कि पूजन में सर्वप्रथम गणेश जी की पूजा होती है । पश्चात् उसी क्रम में अन्य पूजन में षोडशमातृका पूजन होती है । कर्मकाण्ड में इन दोनों पूजन का ही विशेष महत्व है ।

गणेश को 'विघ्नहर्ता' कहा गया है, अत: पूजन में सर्वप्रथम इनकी पूजन करने से सम्बन्धित कार्य में बाधा नहीं आती है । आइए गणेश एवं षोडशमातृका पूजन का अध्ययन करते है ।

3.2 उद्देश्य-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- ❖ गणेश जी का पूजन कैसे किया जाता है, जान जायेंगे ।
- ❖ गणेश पूजन का क्या महत्व है, इसे समझा पायेंगे ।
- ❖ षोडश मातृका क्या है, परिभाषित कर सकेंगे ।
- ❖ षोडशमातृकापूजन विधि क्या है, बता सकेंगे ।
- ❖ षोडशमातृका पूजन का महत्व समझा सकेंगे ।

3.3 गणेश पूजन खण्ड एक

भारतीय सनातन परम्परा में यह निर्विवाद है कि सभी पूजन कर्मो में सर्वप्रथम गणेश जी की पूजा होती है, साथ में गौरी माता की पूजा भी होती है । पूजन की प्रक्रिया में क्या क्या होता है इसका अध्ययन आप पूर्व के इकाई में कर चुके हैं । प्राचीन काल में पूजन कर्म केवल वैदिक मन्त्रों से किये जाते थे, क्योंकि वह वेदप्रधान युग था । कालांतर में स्थितियॉ बदली, तो अब संस्कृतज्ञों एवं वेदज्ञों की संख्या भी घटती चली गई है । ऐसी परिस्थिति में आचार्यों ने लौकिक मन्त्र का निर्माण किया । इस प्रकार अब लौकिक और वेद मन्त्र से पूजन की जाती है । यहॉ दोनों का समावेश किया जा रहा है आइए गणपति और गौरी पूजन का अध्ययन करते है –

सर्वप्रथम हाथ में अक्षत लेकर गणपति – गौरी का ध्यान निम्नलिखित मन्त्र से करना चाहिए –

गजाननं भूतगणादिसेवितं कपित्थजम्बूफलचारूभक्षणम् ।

उमासुतं शोकविनाशकारकं नमामि विघ्नेश्वरपादपंकजम् ।।

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।

नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ।।

श्रीगणेशाम्बिकाभ्यां नमः , ध्यानं समर्पयामि ।

इसके पश्चात् हाथ में अक्षत पुष्प लेकर आवाहन करना चाहिए । आवाहन के निम्न मन्त्रों का उच्चारण करें –

ऊँ गणानां त्वा गणपति गूँ हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपति गूँ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपति गूँ हवामहे व्वसो मम् ।। आहमजानि गर्ब्भधमा त्त्वमजासि गर्ब्धधम् ।।

एह्योहि हेरम्ब महेशपुत्र समस्तविघ्नौघविनाशदक्ष ।

मांगल्यपूजाप्रथमप्रधान गृहाण पूजां भगवन् नमस्ते ।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहिताय गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि च ।

हाथ के अक्षत गणेश जी पर चढ़ा दे । पुनः अक्षत लेकर गणेश जी की दाहिनी ओर गौरी जी का **आवाहन करें** –

ऊँ अम्बे अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन ।

ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम् ।।

हेमाद्रितनयां देवीं वरदां शंकरप्रियाम् ।

लम्बोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम् ।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गौर्ये नमः, गौरीमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि च ।

आवाहन के पश्चात् गणपति और गौरी को स्पर्श करते हुए निम्नलिखित मन्त्र से उनकी प्राण प्रतिष्ठा करनी चाहिए -

प्रतिष्ठा -

ऊँ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य वृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञ गूँ समिमं दधातु । विश्वे देवास इह मादयन्तामो ३ प्रतिष्ठ ।

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च ।

अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन ।।

गणेशाम्बिके सुप्रतिष्ठिते वरदे भवेताम् ।।

प्रतिष्ठापूर्वकम् आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि गणेशाम्बिकाभ्यां नमः।

आसन के लिए अक्षत समर्पित करे।

पश्चात् निम्न मन्त्र से पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, स्नान, पुनराचमनीय करें –

ऊँ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्॥

एतानि पाद्यार्घ्याचनमनीयस्नानीयपुनराचमनीययानि समर्पयामि गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। इतना कहकर जल चढ़ा दे।

दुग्ध स्नान –

ऊँ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयो धाः। पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्॥

कामधेनुसमुद्भूतं सर्वेषां जीवनं परम्।

पावनं यज्ञहेतुश्च पयः स्नानार्थमर्पितम्।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः पयः स्नानं समर्पयामि। दूध से स्नान कराये।

दधिस्नान -

ऊँ दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः। सुरभि नो मुखा करत्प्राण आयू गूँ षि तारिषत्॥

पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम्।

दध्यानीतं मया देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः दधिस्नानं समर्पयामि। दधि से स्नान कराये।

घृत स्नान –

ऊँ घृतं मिमिक्षे घृतमस्य योनिघृते श्रितो घृतम्वस्य धाम। अनुष्वधमा वह मादयस्व स्वाहाकृतं वृषभ वक्षि हव्यम्॥

नवनीतसमुत्पन्नं सर्वसंतोषकारकम्।

घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः घृतस्नानं समर्पयामि। घृत से स्नान कराये।

मधुस्नान –

ऊँ मधुवाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः॥ मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिव गूँ रजः। मधु द्यौरस्तु नः पिता॥

पुष्परेणुसमुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु।

तेजः पुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: मधुस्नानं समर्पयामि। मधु से स्नान कराये।

शर्करास्नान –

ऊँ अपा गॅू रसमुद्वयस गॅू सूर्ये सन्त गॅू समाहितम् । अपा गॅू रसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् ॥

इक्षुरससमुद्भूतां शर्करां पुष्टिदां शुभाम् ।
मलापहारिकां दिव्यां स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: शर्करास्नानं समर्पयामि। शर्करा से स्नान कराये।

पञ्चामृत स्नान –

ऊँ पञ्च नद्य: सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतस:। सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित्।

ऊँ पञ्चामृतं मयानीतं पयो दधि घृतं मधु।
शर्करया समायुक्तं स्नानार्धं प्रतिगृह्यताम्॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि। पञ्चामृत से स्नान कराये।

गन्धोदक स्नान –

ऊँ अ गॅू शुना ते अ गॅू शु: पृच्यतां परूषा परू: । गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसो अच्युत:।

मलयाचलसम्भूतचन्दनेन विनि:सृतम् ।
इदं गन्धोधकस्नानं कुंकुमाक्तं च गृह्यताम् ॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: गन्धोदकस्नानं समर्पयामि। गन्धोदक से स्नान कराये।

शुद्धोद्धक स्नान –

ऊँ शुद्धवाल: सर्वशुद्धवालो मणिवालस्त आश्विना: । श्येत: श्येताक्षोऽरूणस्ते रूद्राय पशुपतये कर्णा यामा अवलिप्ता रौद्रा नभोरूपा: पार्जन्या: ॥

गंगा च यमुना चैव गोदावरी सरस्वती ।
नर्मदा सिन्धु कावेरी स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: शुद्धोद्धकस्नानं समर्पयामि। शुद्धोद्धक स्नान कराये।

आचनम - शुद्धोद्धकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। आचमन के लिए जल दे।

वस्त्र –

ऊँ युवा सुवासा: परिवीत आगात् स उ श्रेयान् भवति जायमान:। तं धीरास: कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो ३ मनसा देवयन्त:।

शीतवातोष्णसंत्राणं लज्जाया रक्षणं परम्।

देहालंकरणं वस्त्रमत: शान्तिं प्रयच्छ मे॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: वस्त्रं समर्पयामि। वस्त्र समर्पित करे ।

आचमन – वस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

उपवस्त्र –

ऊँ सुजातो ज्योतिषा सह शर्म वरूथमाऽसदत्स्व:। वासो अग्ने विश्वरूप गूँ सं व्ययस्व विभावसो

यस्याभावेन शास्त्रोक्तं कर्म किंचिन्न सिध्यति।

उपवस्त्रं प्रयच्छामि सर्वकर्मोपकारकम्॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: उपवस्त्रं समर्पयामि। उपवस्त्रभावे रक्तसूत्र समर्पित करे ।

आचमन - उपवस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि ।

यज्ञोपवीत -

ऊँ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् ।

आयुष्यमग्रयं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेज:॥

यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि।

नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम्॥

उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर।

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: यज्ञोपवीतं समर्पयामि। यज्ञोपवीत समर्पित करे ।

आचमन - यज्ञोपवीतान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि ।

चन्दन –

त्वां गन्धर्वा अखनॅस्त्वामिन्द्रस्त्वां वृहस्पति:। त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान् यक्ष्मादमुच्यत।।

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढयं सुमनोहरम्।

विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम्॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: चन्दनानुलेपनं समर्पयामि। चन्दन समर्पित करे ।

अक्षत –

ऊँ अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया अधूषत। अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजा न्विन्द्र ते हरी

अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुंकुमाक्ता: सुशोभिता:।

मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर ॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः अक्षतान् समर्पयामि। अक्षत अर्पित करे ।

पुष्पमाला –

ऊँ ओषधीः प्रति मोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः। अश्वा इव सजित्वरीर्वीरूधः पारयिष्णवः॥

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो।
मयाहृतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः पुष्पमालां समर्पयामि। पुष्पमाला समर्पित करे ।

दूर्वा –

ऊँ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परूषः परूषस्परि । एवा नो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च॥

दूर्वांकुरान् सुहरितानमृतान् मंगलप्रदान् ।
आनीतांस्तव पूजार्थं गृहाण गणनायक ॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः दूर्वांकुरान् समर्पयामि। दुर्वा समर्पित करे ।

सिन्दूर –

ऊँ सिन्धोरिव प्राध्वने शूघनासो वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः।
घृतस्य धारा अरूषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः॥

सिन्दूरं शोभनं रक्तं सौभाग्यं सुखवर्धनम्
शुभदं कामदं चैव सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम्॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः सिन्दूरं समर्पयामि। सिन्दूर समर्पित करे ।

अबीर – गुलाल -

ऊँ अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिबाधमानः। हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान्
पुमान् पुमा गॅू सं परि पातु विश्वतः।

अबीरं च गुलालं च हरिद्रादिसमन्वितम्।
नाना परिमलं द्रव्यं गृहाण परमेश्वर ॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि। अबीर आदि समर्पित करे ।

सुगन्धित द्रव्य –

ऊँ अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिबाधमानः। हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान्
पुमान् पुमा गॅू सं परि पातु विश्वतः।

दिव्यगन्धसमायुक्तं महापरिमलाद्भूतम्।

गन्धद्रव्यमिदं भक्त्या दत्तं वै परिगृह्यताम्॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः सुगन्धितद्रव्यं समर्पयामि। द्रव्य समर्पित करे ।

धूप –

ऊँ धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्व तं योऽस्मान् धूर्वति तं धूर्व यं वयं धूर्वामः। देवानामसि वह्नितम गूँ सस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम्॥

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढयो गन्ध उत्तमः।

आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः धूपमाघ्रापयामि। धूप दिखाये।

दीप –

ऊँ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योति : सूर्यः स्वाहा। अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा। ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।

साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निा योजितं मया।

दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापहम्॥

भक्त्या दीपं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने।

त्राहि मां निरयाद् घोराद् दीपज्योतिर्नमोऽस्तुते॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः दीपं दर्शयामि। दीप दिखाये ।

हस्त प्रक्षालन - ऊँ ह्रीषीकेशाय नमः कहकर हाथ धो ले।

नैवेद्य –

ऊँ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष गूँ शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकॉ अकल्पयन् ।

ऊँ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा।

ऊँ प्राणाय स्वाहा । ऊँ अपानाय स्वाहा । ऊँ समानाय स्वाहा। ऊँ उदानाय स्वाहा। ऊँ व्यानाय स्वाहा । ऊँ अमृतापिधानमसि स्वाहा।

शर्कराखण्डखाद्यानि दधिक्षीरघृतानि च।

आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः नैवेद्यं निवेदयामि। नैवेद्य निवेदित करे ।

नैवद्यान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

ऋतुफल –

ॐ या: फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणी:। वृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुंचन्त्व गॅू हस: ॥

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव।

तेन मे सफलवाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि॥

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: , ऋतुफलानि समर्पयामि।

फलान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि

उत्तरापोशन - उत्तरापोऽशनार्थे जलं समर्पयामि। गणेशाम्बिकाभ्यां नम:।

करोद्वर्तन -

ॐ अ गॅू शुना ते अ गॅू शु: पृच्यतां परूषा परू:। गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसो अच्युत:।

चन्दनं मलयोद्भूतं कस्तूर्यादिसमन्वितम् ।

करोद्ववर्तनकं देव गृहाण परमेश्वर॥

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: , करोद्वर्तनकं चन्दनं समर्पयामि।

ताम्बूल –

ॐ यत्पुरूषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत । वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्म: शरद्धवि:॥

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्।

एलादिचूर्णसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: , ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ।

दक्षिणा –

ॐ हिरण्यगर्भ: समवर्तताग्रे भूतस्य जात: पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसो।

अनन्तपुण्यफलदमत: शान्तिं प्रयच्छ मे॥

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: , कृताया: पूजाया: सांगुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि ।

आरती –

ॐ इद गॅू हवि: प्रजननं मे अस्तु दशवीर गॅू सर्वगण गॅू स्वस्तये। आत्मसनि प्रजासनि पशुसनि लोकसन्यभयसनि॥ अग्नि: प्रजां बहुलां मे करोत्वन्नं पयो रेतो अस्मासु धत्त॥

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम्।
आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, आरार्तिकं समर्पयामि।

पुष्पांजलि –

ऊँ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्। ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, पुष्पांजलिं समर्पयामि।

प्रदक्षिणा -

ऊँ ये तीर्थाथ्न प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषडिंगणः। तेषा गूँ सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिण पदे पदे ॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, प्रदक्षिणां समर्पयामि।

विशेषार्घ्य -

ताम्रपात्र में जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प , दूर्वा और दक्षिणा रखकर अर्घ्यपात्र को हाथ में लेकर निम्नलिखित मन्त्र पढ़े -

रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्यरक्षक।
भक्तानामभयं कर्ता त्राता भव भवार्णवात्॥
द्वैमातुर कृपासिन्धो षाण्मातुराग्रज प्रभो।
वरदस्त्वं वरं देहि वांछितं वांछितार्थद ।
अनेन सफलार्घ्येण वरदोऽस्तु सदा मम॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, विशेषार्घ्य समर्पयामि।

अन्त में हाथ जोड़कर प्रार्थना करे –

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।
नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय
गौरीसुताय गणनाथ नमो नमोस्ते॥
भक्तार्तिनाशनपराय गणेश्वराय

सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय ।
विद्याधराय विकटाय च वामनाय
भक्तप्रसन्नवरदाय नमो नमोस्ते ॥
नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय करिरूपाय ते नम:
विश्वरूपस्वरूपाय नमस्ते ब्रह्मचारिणे ।
भक्तप्रियाय देवाय नमस्तुभ्यं विनायक
त्वां विघ्नशत्रुदलनेति च सुन्दरेति ॥
भक्तप्रियेति सुखदेति फलप्रदेति
विद्याप्रदेत्यघहरेति च ये स्तुवन्ति।
तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्यमेव
त्वां वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या ॥
विश्वस्य बीजं परमासि माया
सम्मोहितं देवि समस्तमेतत् ।
त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतु: ॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: , प्रार्थनापूर्वकं नमस्कारान् समर्पयामि।

गणेशपूजने कर्म यन्नयूनमधिकं कृतम्।
तेन सर्वेण सर्वात्मा प्रसन्नोऽस्तु सदा मम।
अनया पूजया गणेशाम्बिके प्रीयताम् न मम ॥

ऐसा कहकर समस्त पूजन कर्म को गणपति – गौरी को समर्पित कर दे तथा पुन: नमस्कार करना चाहिए।

बोध प्रश्न-

1. समस्त पूजन में प्रथम पूजन होता है ?
   क. विष्णु ख. शिव ग. गणेश घ. ब्रह्मा
2. गजानन का अर्थ है -
   क. घोड़े के समान मुख ख. हाथी के समान मुख ग. ग्राह के समान मुख घ. कोई नहीं
3. गौरी जी का स्थान गणेश जी के होता है -
   क. दायॉ ख. बायॉ ग. सामने घ. पीछे

4. गणेशाम्बिका का अर्थ है -
   क. गणेश ख. गणेश – गौरी ग. गणेश – दुर्गा घ. शिव – गणेश
5. हिरण्यगर्भगर्भस्थं ..... विभावसो।
   अनन्तपुण्यफलदमत: शान्तिं प्रयच्छ मे ॥
   क. हेमबीज ख. ताम्बूलं ग. कर्पूरं घ. कोई नहीं

3.3.1 षोडश मातृका पूजनम्

मातृका पूजन पंचांग पूजन का अंग है गणेश पूजन के अनन्तर मातृकाओं का पूजन होता है।

सर्वप्रथम प्रधान संकल्प करें ------

ऊँ विष्णःविष्णुःविष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरूषस्य विष्णो राज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे विष्णुपदे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे युगे कलियुगे कलिप्रथमचरणे भूर्लोके जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तैकदेशे विक्रमशके बौद्धावतारे अमुकनामसंवत्सरे श्रीसूये अमुकायने अमुकऋतौ महामांगल्यप्रदमासोत्तमे मासे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे एवं ग्रहगुण - विशेषण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुकगोत्रः अमुकशर्मा सपत्निकोऽहं मम इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सर्वपापक्षयपूर्वक- दीर्घायुर्विपुल - धन-धान्य- पुत्र-पौत्राद्यनवच्छिन्न- सन्ततिवृद्धि-स्थिरलक्ष्मी-कीर्तिलाभ शत्रु पराजय सदभीष्टसिद्ध्यर्थं ..... गणेशपूजनं करिष्ये।

षोडश मातृका चक्र

स्थापना -

षोडशमातृकाओं की स्थापना के लिये पूजक दाहिनी ओर पॉच खड़ी पाइयों और पॉच पड़ी पाइयों का चौकोर मण्डल बनायें। इस प्रकार सोलह कोष्ठक बन जायेंगे। पश्चिम से पूर्व की ओर मातृकाओं का आवाहन और स्थापन करें। कोष्ठकों में रक्त चावल, गेहूँ या जौ रख दे। पहले कोष्ठक में गौरी का आवाहन होता है, अत: गौरी के आवाहन के पूर्व गणेश का भी आवाहन पुष्पाक्षतों द्वारा कोष्ठक में करे । इसी प्रकार अन्य कोष्ठकों में भी निम्नांकित मन्त्र पढ़ते हुए आवाहन करे -

आवाहन एवं स्थापन मन्त्र –

ऊँ गणपतये नम:, गणपतिमावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ गौर्यै नम:, गौरीमावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ पद्मायै नमः, पद्मावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ शच्यै नमः, शचीमावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ मेधायै नमः मेधामावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ सावित्र्यै नमः, सावित्रीमावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ विजयायै नमः, विजयामावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ जयायै नमः , जयामावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ देवसेनायै नमः, देवसेनामावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ स्वधायै नमः, स्वधामावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ स्वाहायै नमः, स्वाहामावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ मातृभ्यों नमः, मातृः आवाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ लोकमातृभ्यो नमः लोकमातृः आवाहयामि स्थापयामि।

ऊँ धृत्यै नमः, धृतिमावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ पुष्टयै नमः पुष्टिमावाहयामि, स्थापयामि

ऊँ तुष्टयै नमः तुष्टिमावाहयामि, स्थापयामि

ऊँ आत्मनः कुलदेवतायै नमः, आत्मनः कुलदेवतामावाहयामि, स्थापयामि।

षोडशमातृका - चक्र

आत्मनः कुलदेवता १६	लोकमातरः १२	देवसेना ८	मेधा ४
तुष्टिः १५	मातरः ११	जया ७	शची ३
पुष्टि १४	स्वाहा १०	विजया ६	पद्मा २
धृति १३	स्वधा ९	सावित्री ५	गौरी गणेश १

इस प्रकार षोडशमातृकाओं का आवाहन, स्थापना कर **ऊँ मनोर्जूति जुषतामा... 0 ,** मंत्र से

अक्षत छोड़ते हुए मातृका मण्डल की प्रतिष्ठा करनी चाहिये। तत्पश्चात् निम्नलिखित नाम मन्त्र से गन्धादि उपचारों द्वारा पूजन करनी चाहिये –

ऊँ गणेशसहितगौर्यादिषोडशमातृकाभ्यो नमः ।

विशेष : - मातृकाओं को यज्ञोपवीत नही चढ़ाना चाहिये।

नैवेद्य के साथ - साथ घृत और गुड़ का भी नैवेद्य लगाना चाहिये।

विशेष अर्घ्य दे।

फल का अर्पण - नारियल आदि फल अंजलि में लेकर प्रार्थना करे –

ऊँ आयुरारोग्यमैश्वर्यं ददध्वं मातरो मम।

निर्विघ्नं सर्वकार्येषु कुरूघ्वं सगणाधिपाः ।।

इस तरह प्रार्थना करने के पश्चात् नारियल आदि फल चढ़ाकर हाथ जोड़कर बोले –

गेहे वृद्धिशतानि भवन्तु, उत्तरे कर्मण्यविघ्नमस्तु ।

इसके बाद –

अनया पूजया गणेशसहितगौर्यादिषोडशमातरः प्रीयन्ताम् न मम।

इस वाक्य का उच्चारण कर मण्डल पर अक्षत छोड़कर प्रणाम करना चाहिये -

गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया।

देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः ।।

धृतिः पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मनः कुलदेवता।

गणेशेनाधिका ह्येता वृद्धौ पूज्याश्च षोडश ।।

3.4 सारांश -

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि भारतीय सनातन परम्परा में यह निर्विवाद है कि सभी पूजन कर्मो में सर्वप्रथम गणेश जी की पूजा होती है, साथ में गौरी माता की पूजा भी होती है। पूजन की प्रक्रिया में क्या क्या होता है इसका अध्ययन आप पूर्व के इकाई में कर चुके हैं। प्राचीन काल में पूजन कर्म केवल वैदिक मन्त्रों से किये जाते थे, क्योंकि वह वेदप्रधान युग था। कालांतर में स्थितियॉ बदली, तो अब संस्कृतज्ञों एवं वेदज्ञों की संख्या भी घटती चली गई है। ऐसी परिस्थिति में आचार्यों ने लौकिक मन्त्र का निर्माण किया। इस प्रकार अब लौकिक और वेद मन्त्र से पूजन की जाती है। गणपति – गौरी पूजन के साथ – साथ मातृका पूजन में षोडशमातृका पूजन (जिसमें 16 कोष्ठक बने होते है) का भी ज्ञान प्राप्त किया है।

3.5 शब्दावली-

वेदप्रधान – जहॉ वेद की प्रधानता हो ।

लौकिक - सांसारिक।

वैदिक – वेद से सम्बन्धित ।

विघ्नेश्वर - विघ्न को हरने वाले ईश्वर ।

आवाहयामि – आवाहन करता हूँ

पूजयामि – पूजन करता हूँ

च – और

घृत – घी

मधु – शहद

शर्करा – चीनी

पंचामृत – दूध, दही, घी, शहद, गंगाजल का मिश्रण

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. ख
3. क
4. ख
5. क

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1- कर्मकाण्ड प्रदीप

2- संस्कार दीपक

3. नित्यकर्मपूजाप्रकाश

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. गणपति - गौरी पूजन का विस्तार से वर्णन कीजिये।
2. षोडशमातृका से आप क्या समझते है ? स्पष्ट कीजिये।

खण्ड - 3
विविध पूजन

इकाई – 1 कलश पूजन एवं पुण्याहवाचन

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 कलश पूजन
1.3.1 पुण्याहवाचन
1.4 सारांश
1.5 पारिभाषिक शब्दावली
1.6 बोध प्रश्नों के उत्तर
1.7 सहायक पाठ्यसामग्री
1.8 सन्दर्भग्रन्थ सूची
1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना -

प्रस्तुत इकाई सी0वी0के – 01 के तृतीय खण्ड की प्रथम इकाई 'कलश पूजन एवं पुण्याहवाचन' से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने पंचांग परिचय, गणेश – गौरी पूजन एवं पंचांग पूजन का अध्ययन कर लिया है । प्रस्तुत इकाई में आप कलश पूजन एवं पुण्याहवाचन का अध्ययन करने जा रहे हैं।

पूजन के क्रम में गणेशाम्बिका पूजन के पश्चात् कलश पूजन का विधान है तथा उसी क्रम में पुण्याहवाचन का भी स्थान आता है। कलश में देवताओं का निवास होता है, और वह शुभता का प्रतीक माना जाता है।

आइए इस इकाई में कलश पूजन एवं पुण्याहवाचन से सम्बन्धित विषयों का अध्ययन करते है, जिससे आपकी कर्मकाण्डजन्य ज्ञानधारा में अतिरिक्त प्रवाह हो सकें।

1.2 उद्देश्य -

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. कलश पूजन विधान को समझ लेंगे।
2. कलश पूजन के महत्व को समझा सकेंगे।
3. कलश पूजन के मन्त्रों को जान जायेंगे ।
4. पुण्याहवाचन क्या है, परिभाषित कर सकेंगे।
5. पुण्याहवाचन विधान का वर्णन कर सकेंगे।

1.3 कलश पूजन

कर्मकाण्ड में कलश पूजन का विशेष महत्व है । कलश मंगलकारक होने के साथ - साथ शुभता का प्रतीक भी माना जाता है। यदि कलश को परिभाषित करना हो तो इस प्रकार कर सकते हैं - देवताओं की कलायें (दिव्य तत्त्व या दिव्य अंश) जिसमें निवास करें वही 'कलश' है। इसका तात्पर्य यह है कि देवताओं के दिव्य अंश को मन्त्र पढकर हम इस कलश में आवाहन करते हैं तथा वे तत्त्व इस कलश में अनुष्ठान पूर्ण होने तक सुरक्षित रहते हैं जिनका दर्शन हमें दिव्य जल के रूप में होता है। इसीलिए कलशपूजन के समय - ''यावत् कर्म समाप्तिः स्यात् तावत्त्वं सुस्थिरो भव''' ऐसा कहते हैं। अस्तु !

इस प्रकार यह सिद्ध हुआ कि देवताओं की दिव्य कलाओं का जिसमें आवाहन किया जाय

तथा अनुष्ठानपूर्ण होने तक जिसमें उन दिव्यतत्त्वों को सुरक्षित रखा जाय उसी का नाम कलश है। संभवतः इसीलिए कलशपूजन के क्रम में यह प्रसिद्ध श्लोक भी पढ़ा जाता है।

''कला कला हि देवानां दानवानां कलाः कलाः

संगृह्य निर्मितो यस्मात् कलशस्तेन कथ्यते।''

अब हम आपसे इसके ऐतिहासिक स्वरूप की भी कुछ चर्चा संक्षेप में करेंगे जो यहाँ अनिवार्य है जिसे शायद आप जानते भी होंगे।

पौराणिक दृष्टि से इस कलश का प्रादुर्भाव समुद्र से होता है क्योंकि जब अमृत प्राप्ति के लिए समुद्र-मन्थन हो रहा था, तब उसमें से 14 रत्न निकले जिसमें स्वयं भगवान् धन्वन्तरि अमृत से भरे हुए कलश को लेकर प्रकट हुए। ये चौदह रत्न निम्नलिखित हैं -

1. लक्ष्मी,
2. मणि,
3. रम्भा,
4. वारुणी (मदिरा),
5. अमिय (अमृत),
6. शंख,
7. गजराज (ऐरावत हाथी),
8. कल्पद्रुम
9. चन्द्रमा
10. कामधेनु,
11. धन,
12. धन्वन्तरि (वैद्य),
13. विष,
14. उच्चैःश्रवा (घोड़ा)।

इसे याद रखने के लिए एक हिन्दी का प्रसिद्ध दोहा है जिसे मैं आपको बताने जा रहा हूँ।

श्रीमणिरम्भावारुणी अमियषंखगजराज।

कल्पद्रुमशशिधेनुधन धन्वन्तरिविषवाजि ।।

यह पूरा प्रसंग श्रीमद्भागवत के अष्टम-स्कन्ध में वर्णित है। प्रसंगवश इसे मैने बताया। इसे

विषयान्तर न समझें। इसी का संकेत कलषपूजन के समय वरुण-प्रार्थना के रूप में किया गया है।

देव दानव संवादे मथ्यमाने महोदधौ।

उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम्।।

इसके आगे के श्लोकों की चर्चा प्रसंग आने पर हम आपसे करेंगे।

यह कलश उसी समुद्रमन्थन का प्रतीक आज भी है। इसमें भरा हुआ जल ही अमृत है। जटाओं से युक्त ऊँचा नारियल ही मानो मन्दराचल है। कलश की ग्रीवा में लपेटे गये रक्षासूत्र ही वासुकि है। मन्थन करने वाले यजमान एवं पुरोहित हैं।

यदि इस कलश को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में वैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाय तो इस पृथिवी को ही कलश के रूप में स्थापित किया जाता है। चूँकि पृथिवी एक कलश की भाँति है जो जल को सम्भालकर लगातार वृत्ताकार में घूम रही है।

दूसरी बात यह है कि ब्रह्मा द्वारा निर्मित जगत् की पहली सृष्टि जल है (अप एव ससर्जादौ) जिसके देवता वरुण है। इसलिए भी आदि सृष्टि के प्रतीक के रूप में हम कलश स्थापन करते हैं।

यही नहीं और भी देखें, किसी भी अनुष्ठान के षुभारम्भ में हम आचमन जल से ही करते हैं, ऐसा क्यों? इसका समाधान देते हुए शतपथब्राह्मण ग्रन्थ में कहा गया है कि जल पवित्रतम होता है तथा उपासक या अनुष्ठान करने वाला व्यक्ति (अमेध्य) अपवित्र होता है क्योंकि वह स्वभावतः मिथ्या (झूठ) बोलता रहता है। अतः इस जल के आचमन से वह (उपासक) पवित्र हो जाता है, यही रहस्य आचमन का है। जिसका मूल-वचन भी प्रमाण के रूप में आपके सामने रखा जा रहा है। 'तद्यदप उपष्पृषति - अमेध्यो वै पुरुषो यदनृतं वदति तेन पूतिरन्तरतः। मेध्या वा आपः। मेध्यो भूत्वा व्रतमुपायानीति। पवित्रं वा आपः। पवित्रपूतो व्रतमुपायानीति तस्माद्वा अप उपस्पृषति।

इसका प्रसंग भी संक्षेप में आपको बताया जा रहा है - यह एक वैदिक यज्ञ है जिसका नाम दर्शपूर्णमास है। इसे करने के लिए उद्यत यजमान आहवनीय एवं गार्हपत्य अग्नि के बीच (मध्य) में पूर्वाभिमुख खड़े होकर व्रतग्रहण के लिए जल से आचमन करता है। तथा व्रत करने के लिये संकल्प लेता है। यही आचमन का प्रयोजन बताया गया है। अर्थात् जल अत्यन्त पवित्र होता है, मनुष्य उसे अनुष्ठानकाल में पीकर भीतर एवं बाहर से पवित्र होता है।

कलश स्थापन विधि एवं पूजन

सबसे पहले कलश को जल से पवित्र करना चाहिए। इसके बाद यदि सर्वतोभद्र-मण्डल या किसी भी मंडल के ऊपर जो छोटी चौकी पर बने हों उस पर यदि कलश स्थापन करना हो तो मण्डल के बीच

में पर्याप्त चावल रखकर जिससे कलश स्थिर रहे गिरे, न इस प्रकार रखना चाहिए। जो बड़े बड़े यागों मे आप देखते भी है। यदि पृथ्वी पर कलश स्थापन करना हो तो कलश के नीचे पर्याप्त मिट्टी रखकर उस पर कुंकुम या रोली आदि से अष्टदल कमल बनाकर, कलश मे स्वस्ति का चिन्ह बनाकर उसमे कलाबा (रक्षासूत्र) तीन बार लपेटकर बाँध देना चाहिए। कलश के ऊपर भी रखने के लिए एक कसोरे मे चावल भरकर उस पर अष्टदल या स्वस्ति का चिन्ह बनाकर नारियल में लाल रंग का वस्त्र लपेटकर पहले से ही तैयार रखना चाहिए।

दूसरी बात यह है कि पूजा की तैयारी पूजन से पहले ही कर लेनी चाहिए। सभी आवश्यक उपचारों को पहले से ही व्यवस्थित तरीके से रखकर तब पूजन प्रारम्भ करना या कराना चाहिये । इससे पूजन में व्यग्रता नहीं होती है। शान्ति बनी रहती है । अस्तु

यजमान कलश के नीचे की भूमि का स्पर्श करे इस मन्त्र को पढ़ते हुए-

ऊँ मही द्यौः पृथिवी च नऽइमं यज्ञ मिमिक्षताम् । पिपृतान्नो भरीमभिः।

एक बात अवश्य यहाँ ध्यान दें कि सम्पूर्ण मन्त्र पढ़ने के बाद ही क्रिया करनी चाहिए । क्योंकि मन्त्र द्रव्य एवं देवता के स्मारक होते हैं, जैसा कि लिखा है - ''प्रयोग समवेतार्थस्मारकाः मन्त्रा'' अतः मन्त्र के प्रारंभ में या आधे में क्रिया न करें मन्त्र पूरा हो जाने के बाद ही क्रिया करनी चाहिए। यही शास्त्रीय विधि है। इसके बाद -

ऊँ ओषधयः समवदन्त सोमेन सह राज्ञा ।

यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्तं राजन्पारयामसि ॥

उपरोक्त इस मन्त्र को पढ़कर कलश के नीचे की मिट्टी पर सप्तधान्य रखें । अब आप पूछेगे कि सप्तधान्य क्या होता है ? मैं बताता हूँ-

(सप्तधान्य)

(यव गोधूम धान्यानि तिलाः कंगुस्तथैव च ।

श्यामकाश्चणकाष्चैव सप्तधान्यानि संविदुः ॥)

अर्थात् यव, गेहूँ, धान, तिल, कंगु, (एक प्रकार का धान्य विशेष), सावाँ (धान्य विशेष), चना ये सप्त धान्य होते है । इन्हें कलश के नीचे रखना चाहिए । उपलब्ध न होने पर उस द्रव्य के अभाव में अक्षत (चावल) छोड़ना चाहिए।

नीचे लिखे मन्त्र को पढ़कर सप्तधान्य के ऊपर कलश रखें।

ऊँ आजिघ्र कलशं मह्यात्वाव्विशन्त्विन्दवः।

पुनरुर्जानिवर्तस्वसानः सहस्रन्धुक्ष्वोरुधारापयस्वती पुनर्म्मांविषताद्रयिः ।''

इसके बाद नीचे-लिखे मन्त्र को पढ़कर कलश में जल डाले। यहाँ जल डालने से अभिप्राय कलश को जल से भरने से है।

ऊँ वरुणस्योत्तम्भ नमसिव्वरुणस्य स्कम्भसर्ज्जनीस्थो व्वरुणस्यऽऋतसदन्न्यसि व्वरुणस्यऽऋत- सदनमसिव्वरुणस्यऽऋतसदनमासीद ।।

इसके बाद नीचे लिखे मन्त्र को पढ़कर कलश मे चन्दन छोड़ें-

ऊँ त्वांगन्धर्व्वाऽअखनँस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः ।

त्वामोषधे सोमोराजाव्विद्वान्न्यक्ष्मादमुच्यत ।।

इसके बाद नीचे लिखे मन्त्र को पढ़कर सर्वौषधी कलश के भीतर छोड़े-

ऊँ याऽओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगम्पुरा ।

मनैनुबभ्रूणामह षतन्धामानि सप्त च ।।

यहाँ सर्वौषधी किसे कहते हैं आपको बताया जा रहा है-

(मुरा माँसी वचा कुष्ठं शैलेयं रजनी द्वयम्।

सठी चम्पकमुस्ता च सर्वौषधि गणः स्मृतः।।)

इसके बाद कलश में हरी दूर्वा छोड़ें-

ऊँ काण्डात् काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि।

एवा नो दूर्व्वे प्रतनु सहस्रेण षतेन च।।

दूर्वा (दूब) छोड़ने के बाद पंचपल्लव को कलश में नीचे लिखे मत्र से छोड़ें-

ऊँ अश्वत्थे निषदनम्पर्ण्णेवोव्वसतिष्कृता ।

गोभाजऽइत्किलासथयत्सनवथपूरुषम् ।।

पंचपल्लव में वट, गूलर, पीपल, आम तथा पाकड के पल्लव (पत्ते) लिए जाते है । जैसा कि लिखा है-

''न्यग्रोधोदुम्बरोऽष्वत्थश्चूतः पलक्षस्तथैव च''।

पंचपल्लव छोड़ने के बाद कलश में सप्तमृत्तिका निम्न मंत्र से छोड़े-

ऊँ स्योना पृथिवि नो भवान्नृक्षरा निवेषनी यच्छा नः शर्म्म सप्रथाः।

सात जगह की मिट्टी को सप्तमृत्तिका कहते है । जैसे-

(अश्वस्थानाद्गजस्थानादवल्मीकात्संगमाध्रूरदात्

राजद्वाराच्च गोष्ठाच्च मृदऽआनीय निःक्षिपेत् ।।

अर्थात् घोड़े के स्थान की, हाथी के, स्थान की, दीमक, संगम, तालाब राजद्वार तथा गोशाले की मिट्टी को लाकर कलश में छोड़ना चाहिए।

सप्तमृत्तिका के बाद पूगीफल (सुपारी) कलश में नीचे लिखे मत्र से छोड़ें-

ऊँ याः फलिनीर्य्याऽअफलाऽपुष्पायाश्चपुष्पिणीः।

बृहस्पतिप्रसूतास्तानोमुंचत्व हसः।।

इसके बाद नीचे लिखे मंत्र को पढ़कर पंचरत्न कलश में छोड़ दे-

ऊँ परिवाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत । दधद्रत्नानि दाशुषे।।

पंचरत्नों के नाम निम्नलिखित है-

(कनकं कुलिषं भुक्ता पद्मरागं च नीलकम् ।

एतानि पंचरत्नानि सर्वकार्येषु योजयेत् ।।)

पंचरत्न के बाद सुवर्ण या चाँदी का सिक्का कलश में नीचे के मंत्र से छोड़े-

ऊँ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत् ।

स दाधारपृथिवीन्द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा व्विधेम ।।

इसके बाद कलश के उपरि भाग में वस्त्र से लपेटकर कलावे से बाँध दें-

ऊँ सुजातो ज्योतिषासहषर्म्मव्वरुथमासदत्स्वः।

व्वासोऽग्नेव्विश्वरूपं संव्ययस्वव्विभावसो।।

इसके बाद नीचे लिखे मंत्रों से कलश पर पूर्णपात्र अर्थात् पहले से एक कसोरे या ताम्रपात्र में कलश को ढकने के लिए चावल भरकर उस पर स्वस्ति या अष्टदल बनाकर रखें, तथा नारियल को उस पर रखकर कलश पर रखें

ऊँ पूर्णादर्व्विपरापतसुपूर्णापुनरापत ।

व्वस्न्नेवव्विक्रीणावहाऽइषमूर्ज्जं शतक्रतो ।।

कलश पर स्वात्माभिमुख नारिकेल सहित पूर्णपात्र रखकर नीचे के मंत्र से कलश पर वरुण देवता का आवाहन करें।

ऊँ तत्त्वायामि ब्रह्मणाव्वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानोहविर्भिः ।

अहेडमानोव्वरुणेहबोध्युरुषं समानऽआयुः प्रमोषीः ।।

अस्मिन् कलशे वरुणं सांगं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकमावाहयामि। स्थापयामि । अपांपतये

वरुणाय नमः। इसके बाद पंचोपचार से (गन्ध, अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य) से वरुण का पूजन करके कलश में गंगादि नदियों का आवाहन करें। आवाहन करते समय, अक्षत बायें हाथ में लेकर दाहिने हाथ से दो दो दाना कलश पर छोड़ें-

कला कला हि देवानां दानवानां कलाःकलाः।
संगृह्य निर्मितो यस्मात् कलषस्तेन कथ्यते।।
कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले त्वस्यस्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः।।
कुक्षौ तु सागराः सप्त सप्तद्वीपा च मेदिनी।
अर्जुनी गोमती चैव चन्द्रभागा सरस्वती।।
कावेरी कृष्णवेणा च गंगा चैव महानदी।
तापी गोदावरी चैव माहेन्द्री नर्मदा तथा।।
नदाष्च विविधा जाता नद्यः सर्वास्तथापराः।
पृथिव्यां यानि तीर्थानि कलषस्थानि तानि वै।।
सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदानदाः।
आयान्तु मम षान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः।।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदोऽह्यथर्वणः।
अंगैश्च सहिताः सर्वे कलषं तु समाश्रिताः।।
अत्र गायत्री सावित्री षान्तिः पुष्टिकरी तथा।
आयान्तु मम षान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः।।

(इमान् श्लोकान् पठेत्। ततो यजमानः स्वहस्ते पुनरक्षतान् गृहीत्वा-)

इन श्लोको को पढ़कर नीचे लिखे मंत्र के द्वारा कलश में वरुणादि-देवताओं का तथा पृथिवी पर स्थित समस्त तीर्थों एवं पवित्र पुण्यसलिला नदियों की कलश में प्रतिष्ठा करे।

ॐ मनोजूतिर्ज्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टं यज्ञं समिमन्दधातु । विश्वे देवासऽइहमादयन्तामों 3 प्रतिष्ठ ।।

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च।
अस्यै देवत्वमचार्यै मामहेति च कश्चन् ।।

‘‘अस्मिन् कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु।

ऊँ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः।

प्राणप्रतिष्ठा के बाद कलश पर आवाहित वरुणदेवता के साथ अन्य आवाहित देवों का भी विधि एवं श्रद्धा के साथ षोडशोपचार पूजन करें।

आसन -

ऊँ पुरुषऽएवेदं सर्व्वं यद्भूतं यच्च भाव्व्यम्।
उतामृतत्वस्येषानो यदन्नेनातिरोहति॥
विचित्ररत्नखचितं दिव्यास्तरणसंयुतम्।
स्वर्णसिंहासनं चारु गृह्णीष्व सुरपूजितम्॥)

ऊँ कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः आसनार्थे अक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। (आसन देने के लिए कलश पर अक्षत पुष्प चढावें)

पाद्य -

ऊँ एतावानस्य महिमातो ज्यायाँष्च पूरुषः।
पादोऽस्यव्विष्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि॥
सर्वतीर्थ समुद्भूतं पाद्यं गन्धादिभिर्युतम्।
जलाध्यक्ष! गृहाणेदं भगवन्! भक्तवत्सल!।

कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः। पादयोः पाद्यं समर्पयामि (पैर धोने के लिए एक आचमनी जल कलश पर छोड़ें)

अर्घ्य -

ऊँ त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरुषः पादोस्येहाभवत्पुनः।
ततोव्विष्वङ्व्यक्रामत्साषनानषने ऽअभि॥

(जलाध्यक्ष! नमस्तेऽस्तु गृहाण करुणाकर!
अर्घ्यं च फलसंयुक्तं गन्धमाल्याक्षतैर्युतम्॥)

कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि। (यहाँ एक छोटे से पात्र में गन्ध पुष्प अक्षत लेकर अर्घ्य प्रदान करें)

आचमन -

ऊँ ततो व्विराडजायतव्विराजोऽअधिपूरुषः।
सजातोऽअत्यरिच्यतपष्चाद्भूमिमथोपुरः॥

(जलाध्यक्ष! नमस्तुभ्यं त्रिदशैरभिवन्दितः ।

गंगोदकेन देवेश कुरुष्वाचमनं प्रभो!।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः आचमनीयं जलं समर्पयामि। (एक आचमनी कलश पर जल छोड़ें)

स्नान -

तस्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्ज्यम् ।

पशूँस्तॉश्चक्रेव्वायव्यानारण्याग्राम्याश्चये ।।

(मन्दाकिन्यास्तु यद्वारि सर्वपापहरं शुभम्।

तदिदं कल्पितं देव! स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः। स्नानीयं जलं समर्पयामि। (स्नान के लिए एक आचमनी जल कलश पर छोड़ें)

पंचामृत -

पंचनद्यः सरस्वतीमपियन्तिसस्रोतसः ।

सरस्वती तु पंचधा सोदेषे भवत्सरित् ।।

(पंचामृतं मयाऽऽनीतं पयोदधि घृतं मधु।

शर्करा च समायुक्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, मिलितपंचामृतस्नानं समर्पयामि।

(ध्यान दें पंचामृत में गाय का दूध, गाय की दधि, गाय का घृत, षहद तथा चीनी (षर्करा) मिली हुई होती है। कभी-कभी भगवान् षिव के अभिषेक या विषेषानुष्ठानों में अलग अलग द्रव्य जैसे पहले दूध से इसके बाद दधि से इस प्रकार से देवताओं को स्नान कराया जाता है। अतः अलग-अलग द्रव्य से भी स्नान के मंत्र आपके ज्ञानवृद्धि के लिए यहाँ बताया जा रहा है। जिसे आप अच्छी तरह अलग-अलग द्रव्यों (दूध, घी आदि) से करा सकते हैं) आप देश काल द्रव्य के अनुसार अलग-अलग द्रव्यों से एवं मिलित द्रव्यों से भी सुविधानुसार स्नान करा सकते हैं।

पयः (दूध) स्नानम् -

ऊँ पयः पृथिव्यां पयऽओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः।

पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्।

(कामधेनु समुद्भूतं सर्वेषां जीवनं परम्।

पावनं यज्ञहेतुष्च पयः स्नानार्थमर्पितम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः पयः स्नानं समर्पयामि। पयः स्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

दधिस्नानम् -

ऊँ दधिक्राब्णोऽअकारिषं जिष्णोरष्वस्यव्वाजिनः।

सुरभि नो मुखाकरत्प्रणऽआयूंषितारिषत ।।

(पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम्।

दध्यानीतं मया देव! स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, दधिस्नानं समर्पयामि। दधिस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

घृतस्नानम् -

ऊँ घृतं मिमिक्षे घृतमस्य योनिर्घृतेश्रितोघृतम्वस्य धाम।

अनुष्वधमावहमादयस्वस्वाहाकृतं वृषभव्वक्षिहव्यम्।।

(नवनीतसमुत्पन्नं सर्वसन्तोषकारकम्।

घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।)

कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः घृतस्नानं समर्पयामि। घृतस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि ।

मधुस्नानम् -

ऊँ मधुव्वाताऽऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्न्नः सन्त्वोषधीः। मधुनक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवंरजः मधुद्यौरस्तुनः पिता। मधुमान्नोव्वनस्पतिर्मधुमाँऽस्तु सूर्य्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः।

(पुष्परेणु समुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु।

तेजः पुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः मधुस्नानं समर्पयामि। मधुस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

शर्करास्नानम् -

ऊँ अपा रसमुद्वयस सूर्य्ये सन्तं समाहितम्।

अपांरसस्ययोरसस्तं व्वो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येश ते योनिरिन्द्राय त्वा

जुष्टतमम्।

(इक्षुरससमुद्भूतां शर्करां पुष्टिदां शुभाम्।

मलापहारिकां दिव्यां स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः षर्करास्नानं समर्पयामि। शर्करास्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

शुद्धोदकस्नानम् -

ऊँ शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्तआष्विनाः श्येत: श्येताक्षोरुणस्ते रुद्राय पषुपतये कर्णायामाऽअवलिप्ता रौद्रा नभो रूपाः पार्ज्जन्याः।

(गंगा च यमुना चैव गोदावरी सरस्वती।

नर्मदा सिन्धु कावेरी स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

वस्त्रम् -

सुजातो ज्योतिषा सह शर्म्मव्वरुथमासदत्स्वः।

व्वासोऽअग्ने विष्वरूपं संव्ययस्वव्विभावसो।।

(शीतवातोष्णसन्त्राणं लज्जायाः रक्षणं परम्।

देहालंकरणं वस्त्रमतः षान्तिं प्रयच्छ मे।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, वस्त्रं समर्पयामि। तदन्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

उपवस्त्रम् -

ऊँ युवा सुवासा परिपीतऽआगात्सउश्रेयान्भवतिजायमानः।

तन्धीरासऽकवयऽउन्नयन्तिसाध्योमनसा देवयन्तः।।

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः उपवस्त्रार्थे मांगलिकसूत्रं (मौली) समर्पयामि। तदन्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

यज्ञोपवीतम् -

ऊँ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत् सहजं पुरस्तात् ।

आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुंच शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ।।

(नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम्।

उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेष्वर।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः उपवीतं (जनेऊ) समर्पयामि। तदन्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

चन्दनम् -

ऊँ त्वांगन्धर्व्वाऽअखनँस्तवामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः।

त्वामोषधे सोमोराजा व्विद्वान्न्यक्षमादमुच्यत।।

(श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।

विलेपनं सुरश्रेष्ठ! चन्दनं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः अलंकारार्थे अक्षतान् समर्पयामि।

पुष्पाणि (फूल एवं माला) -

ऊँ ओषधीः प्रतिमोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः।

अष्वाऽइव सजित्वरीर्व्वीरुधः पारयिष्णवः।।

(माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो।

मयाहृतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः पुष्पाणि पुष्पमालां च समर्पयामि।

ऊँ अहिरिव भोगैः पर्य्येतिबाहुंज्यायाहेतिम्परिबाधमानः।

हस्तघ्नो व्विष्वाव्वयुनानिव्विद्वान्पुमान्पुमां सम्परिपातु व्विष्वतः।।

(नानापरिमलैर्द्रव्यैर्निर्मितं चूर्णमुत्तमम्।

अबीरनामकं चूर्णं गन्धं चारुप्रगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

ऊँ सिन्धोरिवप्राद्ध्वनेषूघनासोव्वातप्रमियःपतयन्तियहवाः घृतस्य धाराऽअरुषोनव्वाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः।

(सिन्दूरं शोभनं रक्तं सौभाग्यं सुखवर्द्धनम्।

शुभदं कामदं चैव सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः सिन्दूरं समर्पयामि।

सुगन्धित द्रव्यम् -

ऊँ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्।

उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्।।

कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः सुगन्धिद्रव्यम् अनुलेपयामि। (सुगन्धिद्रव्य का अर्थ यहाँ इत्र एवं सुगन्धित तैल से है)

''नैवेद्यं पुरतः संस्थाप्य धूप-दीपौ च देयौ''

धूपम् -

ऊँ ब्राह्मणोऽस्यमुखमासीद्बाहूराजन्यः कृतः।

ऊरुतदस्ययद्वैष्यः पद्भ्यां शूद्रोऽअजायत।।

(वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।

आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्।।)

आवाहितदेवताभ्यो नमः। धूपमाघ्रापयामि।

दीपम् -

ऊँ चन्द्रमामनसो जातष्चक्षोः सूय्योऽअजायत।

श्रोत्राद्वायुष्च प्राणष्चमुखादग्निरजायत।।

(साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया।

दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्य तिमिरापहम्।।

भक्त्या दीपं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने।

त्राहि मां निरयाद्घोराद् दीपज्योतिर्नमोऽस्तु ते।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः दीपं दर्षयामि हस्तप्रक्षालनम्।

नैवेद्यम् -

ऊँ नाब्भ्याऽआसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।

पद्भ्यां भूमिर्द्दिश: श्रोत्रात्तथालोकाँ2ऽअकल्पयन्।।

(नैवेद्यं गृह्यतां देव! भक्तिं मे ह्यचलां कुरु।

इप्सितं मे वरं देहि परत्र च परां गतिम्।।

शर्करा खण्डखाद्यानि दधिक्षीरघृतानि च।

आहारं भक्ष्य-भोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः। नैवेद्यं निवेदयामि नैवेद्यान्ते, ध्यानं, ध्यानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। प्रणायस्वाहा, अपानायस्वाहा, व्यानायस्वाहा, उदानायस्वाहा समानायस्वाहा। इति

ग्रासमुद्रां प्रदर्ष्य नैवेद्यं निवेदयेत्।

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, आचमनीयं जलं मध्ये पानीयं उत्तरापोषनं च समर्पयामि।

करोद्वर्तनम् -

ऊँ अ गूँ षुना तेऽअं गूँ षुः पृच्यतां परुषा परुः।

गन्धस्ते सोममवतु मदायरसोऽच्युतः ॥

(चन्दनं मलयोद्भूतं केसरादिसमन्वितम्।

करोद्वर्तनकं देव! गृहाण परमेश्वर !॥)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, करोद्वर्तनार्थे गन्धानुलेपनं समर्पयामि।

(ध्यान दें! करोद्वर्तन का अर्थ दोनों हाथों के अनामिका एवं अंगुष्ठ में केसरयुक्त चन्दन लगाकर देवताओं पर छिड़कें)

ऋतुफलम् -

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव ।

तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥

(ऊँ याः फलिनीर्य्याऽअफलाऽअपुष्पायाष्च पुष्पिणीः।

बृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुंचन्त्वं हसः॥)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, इमानि ऋतुफलानि समर्पयामि।

ताम्बूलम् -

यत्पुरुषेणहविषादेवायज्ञमतन्वत।

व्वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म्मऽइध्मः शरद्धविः॥

(पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्।

एलालवंगसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्॥)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, मुखवासार्थे ताम्बूलपत्रं पूगीफलं एलालवंगानि च समर्पयामि।

दक्षिणा -

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत् ।

स दाधार पृथिवीन्द्यामुते मां कस्म्मै देवाय हविषा विधेम ॥

(हिरण्यगर्भ गर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः।

अनन्तपुण्यफलदभतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।

प्रदक्षिणा -

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिणां पदे पदे।।
प्रदक्षिणां समर्पयामि।

कर्पूरनीराजनम् (आरती) -

कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारम् ।
सदावसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानी सहितं नमामि ।।

(कदलीगर्भसम्भूतं कपूरं तु प्रदीपितम्।
आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव।।)

ऊँ इदं गूँ हविः प्रजननम्मेऽस्तु दशवीरं सर्व्वगणं गूँ स्वस्तये
आत्मसनिप्रजासनि पशुशनिलोकसन्यभयसनि अग्निः ।
प्रजां बहुलाम्मे करोत्वन्नं पयोरेतोऽअस्मासु धत्त ।।
वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः कर्पूरनीराजनं समर्पयामि ।

हस्तौ प्रक्षाल्य मंत्रपुष्पांजलिः -

यज्ञेन यज्ञमयजन्तदेवास्तानिधर्म्माणिप्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकम्महिमानः सचन्तयत्र पूर्वे साद्धयाः सन्ति देवाः ।।
नाना सुगन्धि पुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च ।
पुष्पांजलिर्मया दत्तो गृहाणपरमेश्वर ।।

वरुणाद्यावाहितं देवताभ्यो नमः मंत्रपुष्पांजलिं समर्पयामि ।

प्रार्थना - हस्ते पुष्पाणि गृहीत्वा -

देवदानव संवादे मथ्यमाने महोदधौ ।
उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्यवम् ।।
त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः ।
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ।।
षिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः ।
आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः ।।

त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः ।

त्वत्प्रसादादिमं यज्ञं कर्तुमीहं जलोद्भव ॥

सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा ।

नमो नमस्ते स्फटिकप्रभाय

सुश्वेतहाराय सुमंगलाय ।

सुपाषहस्ताय झषासनाय

जलाधिनाथाय नमो नमस्ते ॥

पाशपाणे! नमस्तुभ्यं पद्मिनीजीवनायक ।

यावत् कर्म करिष्येऽहं तावत्त्वं सुस्थिरो भव ॥

कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः । प्रार्थनापूर्वकनमस्कारान् समर्पयामि । हस्ते जलमादाय अनेन यथालब्धोपचारपूजनाख्येन कर्मणा वरुणाद्यावाहितदेवताः प्रीयन्ताम् न मम ।

पुण्याहवाचन कलश पूजन के ठीक बाद में होता है । इसीलिए यहाँ भी कलश पूजन के ठीक बाद में पुण्याहवाचन दिया गया है, क्योंकि पूजन का शास्त्रीय क्रम इस प्रकार है-

क. गणेशाम्बिका पूजन

ख. कलश पूजन

ग. पुण्याहवाचन

घ. अभिषेक

ङ. षोडशमातृकापूजन

च. सप्तघृतमातृकापूजन

छ. आयुष्यमंत्रजप

ज. नान्दीश्राद्ध

झ. आचार्यादिवरण

खण्ड-1

ग्रहतत्त्वदीपिका ग्रन्थ में कहा गया है-

पुण्याहवाचने विप्राः युग्मा वेदविदः शुभाः।

यज्ञोपवीतिनः षस्ताः प्राङ्मुखाः स्युः पवित्रिणः॥

इस कर्म में कम से कम दो ब्राह्मण अवश्य रहते हैं। जैसा कि उपरोक्त वचन से ज्ञात होता है। इसमें ब्राह्मणों का हस्तपूजन एवं उनसे आशीर्वाद के लिए यजमान प्रार्थना करता है। पुण्याहवाचन के लिए एक ताम्बे या पीतल का कमण्डलु होना चाहिए। जिसमें टोंटी लगी हो, जल गिरने के लिए।

विधि - यजमान दोनों घुटनों को पृथिवी पर मोड़कर अर्थात् वज्रासन में बैठे, तथा दोनों हाथों को उपर करके खिले हुए कमल के समान बनाये जिसमें आचार्य तीन बार पुण्याहवाचन-कलश को उठाकर यजमान के सिर पर रखते हैं तथा मंत्रपाठ करते हैं।

''ततो यजमानः अवनिकृतजानुमण्डलः कमलमुकुलसदृश मंजलिं शिरस्याधाय दक्षिणेन पाणिना (उभाभ्यां कराभ्याम्) पूर्णकलषं स्वांजलौ धारयित्वा स्वमूर्ध्ना संयोज्य च आशिषः प्रार्थयेत्।

ऊँ दीर्घानागा नद्यो गिरयस्त्रीणिविष्णुपदानि च।
तेनायुः प्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु॥
विप्राः - ''अस्तु दीर्घमायुः''
ऊँ त्रीणि पदाव्विचक्रमेव्विष्णुर्गोपाऽअदाब्भ्यः।
अतो धर्माणि धारयन्॥
तेनायुः प्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु। (इति यजमानो ब्रूयात्)।
विप्राः - ''अस्तु दीर्घमायुः। इस प्रकार तीन बार इस मंत्र का पाठ एवं क्रिया करनी चाहिये।

ततो यजमानः ब्राह्मणानां हस्ते जलं दद्यात् -
अपां मध्ये स्थिता तोयाः सर्वमप्सु प्रतिष्ठितम्।
ब्राह्मणानां करे न्यस्ताः षिवा आपो भवन्तु ते॥

''ऊँ शिवा आपः सन्तु'' इति जलं दद्यात्। ''सन्तु शिवा आपः'' इति विप्रा वदेयुः।

यजमानः -

लक्ष्मीर्वसति पुष्पेषु लक्ष्मीर्वसति पुष्करे।
सा मे वसतु वै नित्यं सौमनस्यं तथाऽस्तु नः॥
''सौमनस्यमस्तु'' (इति विप्रहस्तेषु पुष्पं दद्यात्)
विप्राः - ''अस्तु सौमनस्यम्''।

यजमानः -

अक्षतं चास्तु मे पुण्यं दीर्घमायुर्यशोबलम्।
यद्यच्छ्रेयस्करं लोके तत्तदस्तु सदा मम॥

''अक्षतंचारिष्टं चास्तु'' (इति विप्रहस्तेषु अक्षतान् दद्यात्)

विप्रा: - अस्त्वक्षतमरिष्टं च।

यजमान: - ''गन्धाः पान्तु'' इति विप्रहस्तेषु गन्धं दद्यात्।

विप्रा: - सुमंगल्यं चास्तु।

यजमान: - ''पुनरक्षताः पान्तु'' इति विप्रहस्तेषु अक्षतान् दद्यात्।

विप्रा: - ''आयुष्यमस्तु''

यजमान: - ''पुष्पाणि पान्तु''

विप्रा: - ''सौश्रियमस्तु''

यजमान: - ''सफलताम्बूलानि पान्तु''

विप्रा: - ''ऐश्वर्यमस्तु''

यजमान: - दक्षिणाः पान्तु

विप्रा: - बहुधनमस्तु

यजमान: - ''पुनरत्रापः पान्तु।

विप्रा: - सकलाराधने स्वर्चितमस्तु

यजमान: - दीर्घमायुः शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिः श्रीर्यषोविद्याविनयोवित्तं बहुपुत्रं बहुधनं चायुष्यं चास्तु। (इति वाक्येन विप्रान् प्रार्थयेत्)

विप्रा: - तथास्तु।

यजमान: - यं कृत्वा सर्ववेदयज्ञक्रियाकरणकर्मारम्भाः शुभाः शोभनाः प्रवर्तन्ते, तमहमोंकारमादिं कृत्वा यजुराशीर्वचनं बहुऋषिसंमतं भवद्भिरनुज्ञातं पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये।

विप्रा: - वाच्यताम्।

यजमान: - ऊँ द्रविणोदाः पिपीषति जुहोतप्रचतिष्ठत। नेष्ट्रादृतुभिरिष्यत ।।1।।

सवितात्वा सवानां सुवतामग्निर्गृहपतीनां सोमोव्वनस्पतीनाम् । बृहस्पतिर्व्वाचऽइन्द्रोज्ज्यैष्ठ्याय रुद्रः पशुभ्यो मित्रः सत्योव्वरुणो धर्मपतीनाम् ।।2।।

न तद्रक्षां सि न पिषाचास्तरन्ति देवानामोजः प्रथमजं ह्येतत्। यो बिभर्ति दाक्षायणं हिरण्यं स देवेषु कृणुते दीर्घमायुः। स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः ।।3।।

उच्चा ते जातमन्धसो दिविसद्भूम्याददे। उग्रं षर्म्ममहिश्रवः ।।4।।

उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे। अभिदेवाँ2इयक्षते ।5।।

व्रत-जप-नियम-तप-स्वाध्याय-क्रतु-शम-दम-दया-दान-विशिष्टानां सर्वेषां ब्राह्मणानां मनः समाधीयताम्। (इति विप्रान् प्रार्थयेत्)

विप्राः - समाहितमनसः स्मः।

यजमानः - प्रसीदन्तु भवन्तः।

विप्राः - प्रसन्नाः स्मः

यजमानः - ऊँ शान्तिरस्तु। ऊँ पुष्टिरस्तु। ऊँ तुष्टिरस्तु। ऊँ वृद्धिरस्तु। ऊँ अविघ्नमस्तु। ऊँ आयुष्यमस्तु। ऊँ आरोग्यमस्तु। ऊँ शिवमस्तु। ऊँ शिवं कर्मास्तु। ऊँ कर्मसमृद्धिरस्तु। ऊँ धर्मसमृद्धिरस्तु। ऊँ वेदसमृद्धिरस्तु। ऊँ शास्त्रसमृद्धिरस्तु। ऊँ इष्टसम्पदस्तु। बहिः ऊँ अरिष्टनिरसनमस्तु। ऊँ यत्पापं रोगोऽषुभमकल्याणं तद्दूरे प्रतिहतमस्तु।

अन्तः ऊँ यच्छ्रेयस्तदस्तु। ऊँ उत्तरे कर्मणि निर्विघ्नमस्तु। ऊँ उत्तरोत्तरमहरहरभिवृद्धिरस्तु। ऊँ उत्तरोत्तराः क्रियाः षुभाः षोभनाः सम्पद्यन्ताम्। ऊँ तिथिकरणमुहूर्तनक्षत्रग्रहलग्नसम्पदस्तु। ऊँ तिथिकरणमुहूर्तनक्षत्रलग्नाधिदेवताः प्रीयन्ताम्। ऊँ तिबकरणे समुहूर्ते-सनक्षत्रे-सग्रहे-सलग्ने-साधिदैवते प्रीयेताम्। ऊँ दुर्गापांचाल्यौ प्रीयेताम्। ऊँ अग्निपुरोगा विश्वे देवाः प्रीयन्ताम्। ऊँ इन्द्रपुरोगा मरुद्गणाः प्रीयन्ताम्। ऊँ ब्रह्मपुरोगाः सर्वे वेदाः प्रीयन्ताम्। ऊँ विष्णुपुरोगाः एकपत्न्यः प्रीयन्ताम्। ऊँ ब्रह्म च ब्राह्मणाश्च प्रीयन्ताम्। ऊँ श्री सरस्वत्यौ प्रीयेताम्। ऊँ श्रद्धामेधे प्रीयेताम्। ऊँ भगवती कात्यायनी प्रीयताम्। ऊँ भगवती माहेष्वरी प्रीयताम्। ऊँ भगवती पुष्टिकरी प्रीयताम्। ऊँ भगवती तुष्टिकरी प्रीयताम्। ऊँ भगवती ऋद्धिकरी प्रीयताम्। ऊँ भगवती वृद्धिकरी प्रीयताम्। ऊँ भगवन्तौ विघ्नविनायकौ प्रीयेताम्। ऊँ सर्वाः कुलदेवताः प्रीयन्ताम्। ऊँ सर्वाः ग्रामदेवताः प्रीयन्ताम्। ऊँ सर्वाः इष्टदेवताः प्रीयन्ताम्। बहिः ऊँ हताष्च ब्रह्मद्विषः। ऊँ हताष्च परिपन्थिनः। ऊँ हताष्च विघ्नकर्तारः। ऊँ शत्रवः पराभवं यान्तु। ऊँ शाम्यन्तु घोराणि। ऊँ शाम्यन्तु पापानि। ऊँ शाम्यन्त्वीतयः। ऊँ शाम्यन्तूपद्रवाः। अन्तः ऊँ शुभानि वर्द्धन्ताम्। ऊँ शिवा आपः सन्तु। ऊँ शिवा ऋतवः सन्तु। ऊँ शिवा अग्नयः सन्तु। ऊँ शिवा आहुतयः सन्तु। ऊँ शिवा वनस्पतयः सन्तु। ऊँ शिवा ओषधयः सन्तु। ऊँ शिवा अतिथयः सन्तु। ऊँ अहोरात्रे शिवे स्याताम्। ऊँ निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्। ऊँ शुक्रांगारकबुधबृहस्पतिषनैष्चरराहुकेतुसोमसहितादिव्यपुरोगाः सर्वे ग्रहाः प्रीयन्ताम्। ऊँ भगवान् नारायणः प्रीयताम्। ऊँ पुरोऽनुवाक्यया यत्पुण्यं तदस्तु। ऊँ याज्यया यत्पुण्यं तदस्तु। ऊँ वषट्कारेण यत्पुण्यं तदस्तु। ऊँ प्रातः सूर्योदये यत्पुण्यं तदस्तु।

यजमानः - एतत्कल्याणयुक्तं पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये।

विप्राः - वाच्यताम्।

यजमानः -

ब्राह्मं पुण्यमहर्यच्च सृष्ट्युत्पादनकारकम्।

वेदवृक्षोद्भवं नित्यं तत्पुण्याहं ब्रुवन्तु नः।।

भो! ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे करिष्यमाण (अमुक) कर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः पुण्याह भवन्तो ब्रुवन्तु। (इति क्रमेण मन्द्रमध्यमोच्चस्वरेण त्रिर्ब्रूयात्।) ऊँ पुण्याहं, ऊँ पुण्याहं, ऊँ पुण्याहम् इति त्रिर्विप्राः ब्रूयुः। ऊँ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः। पुनन्तु व्विश्वाभूतानिजातवेदः पुनीहि मा।

यजमानः -

पृथिव्यामुद्धृतायां तु यत्कल्याणं पुराकृतम्।

ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैस्तत्कल्याणं ब्रुवन्तु नः।।

भो! ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे करिष्यमाण (अमुक) कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रवुन्तु।

विप्राः - ऊँ कल्याणं! ऊँ कल्याणं। ऊँ कल्याणम्।

ऊँ यथेमां व्वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वायचारणाय च। प्रियो देवानान्दक्षिणायै दातुरिहभूयासमयम्मेकामः समृद्ध्यतामुपमादोनमतु।।

यजमानः -

सागरस्य तु या ऋद्धिर्महालक्ष्म्यादिभिः कृता।

सम्पूर्णा सुप्रभावा च तां च ऋद्धिं ब्रुवन्तु नः।।

भो! ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे करिष्यमाण (अमुक) कर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रवुन्तु।

विप्राः -

ऊँ कर्म ऋध्यताम्। ऊँ कर्म ऋध्यताम्। ऊँ कर्म ऋध्यताम्। ऊँ सत्रस्यऽऋद्धिरस्यगन्मज्योतिरमृताऽभूम। दिवम्पृथिव्याऽअध्यारुहामाविदामदेवान्त्स्वर्ज्योतिः।

यजमानः -

स्वस्तिस्तु याऽविनाषाख्या पुण्यकल्याणवृद्धिदा ।

विनायकप्रिया नित्यं तां च स्वस्तिं ब्रवन्तु नः ॥

भो! ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे करिष्यमाण (अमुक) अस्मै कर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्मै कर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्मै कर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रवुन्तु।

विप्राः -

ऊँ आयुष्मते स्वस्ति। ऊँ आयुष्मते स्वस्ति। ऊँ आयुष्मते स्वस्ति।

ऊँ स्वस्तिनऽइन्द्रोवृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा विष्ववेदाः।

स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु॥

यजमानः -

समुद्रमथनाज्जाता जगदानन्दकारिका।

हरिप्रिया च मांगल्या तां श्रियं च बुवन्तु नः॥

भो! ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे करिष्यमाण (अमुक) कर्मणः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रवुन्तु।

विप्राः -

ऊँ अस्तु श्रीः। ऊँ अस्तु श्रीः। ऊँ अस्तु श्रीः।

श्रीष्चतेलक्ष्मीष्चपत्न्यावहोरात्रे पार्श्वेनक्षत्राणिरुपमश्विनौ व्यात्तम्।

इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाणसर्व्वलोकम्मऽइषाण ॥

यजमानः -

मृकण्डसूनोरायुर्यद्ध्रुवलोमषयोस्तथा।

आयुषा तेन संयुक्ता जीवेम षरदः षतम्॥

विप्राः -

शतं जीवन्तु भवन्तः। शतं जीवन्तु भवन्तः। शतं जीवन्तु भवन्तः।

ऊँ शतमिन्नु शरदोऽन्तिदेवायत्रानष्चक्राजरसन्तनूनाम्।

पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मानो मध्यारीरिषतायुर्गन्तोः॥

यजमानः -

शिवगौरीविवाहे या या श्रीरामे नृपात्मजे।

धनदस्य गृहे या श्रीरस्माकं साऽस्तु सद्मनि॥

भो! ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे श्रियं भवन्तो ब्रुवन्तु। श्रियं भवन्तो ब्रुवन्तु।

श्रियं भवन्तो ब्रवुन्तु।

विप्राः -

अस्तु श्रीः। अस्तु श्रीः। अस्तु श्रीः।

मनसः काममाकूतिं व्वाचः सत्यमशीय।

पशूनां रुपमन्नस्यरसो यशः श्रीः श्रयताम्मयि स्वाहा॥

यजमानः -

प्रजापतिर्लोकपालो धाताब्रह्मा च देवराट्।

भगवांछाष्वतो नित्यं नो रक्षन्तु च सर्वतः॥

विप्राः -

ऊँ भगवान्प्रजापतिः प्रीयताम्।

ऊँ प्रजापते न त्वदेतान्यन्योव्विष्वारूपाणिपरितो बभूव।

यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तु व्वयं स्याम पतयो रयीणाम्॥

यजमानः -

आयुष्मते स्वस्तिमते यजमानाय दाशुषे।

श्रिये दत्ताषिषः सन्तु ऋत्विग्भिर्वेदपारगैः॥

विप्राः -

ऊँ आयुष्मते स्वस्ति। ऊँ आयुष्मते स्वस्ति। ऊँ आयुष्मते स्वस्ति।

ऊँ प्रतिपन्थामपद्महिस्वस्तिगामनेहसम्।

येन व्विश्वाः परिद्विषो व्वृणक्ति व्विन्दते व्वसु॥

ऊँ स्वस्तिवाचन समृद्धिरस्तु।

ततो यजमानः हस्ते जलाक्षत द्रव्यं चादाय संकल्पं कुर्यात् -

कृतस्य स्वस्तिवाचनकर्मणः सांगतासिध्यर्थं तत् सम्पूर्णफलप्राप्त्यर्थं च पुण्याहवाचकेभ्यो ब्राह्मणेभ्य इमां दक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृजे।

पुनर्हस्ते जलमादाय अनेन पुण्याहवाचनेन भगवान् प्रजापतिः प्रीयताम्।

(इस पुण्याहवाचन का मूल प्रयोग पारस्करगृह्यसूत्र 1 कण्डिका के गदाधर भाष्य में किया गया है)

(किसी कारणवश या समयाभाव के कारण इस बृहद् पुण्याहवाचन को यदि न कर सकें तो बौधायनोक्त संक्षिप्त पुण्याहवाचन कर सकते हैं। जो अधोलिखित है)

बौधायनोक्त पुण्याहवाचन

यजमानः -

ब्राह्मं पुण्यमहर्यच्च सृष्ट्युत्पादनकारकम् ।

वेदवृक्षोद्भवं नित्यं तत्पुण्याहं ब्रवुन्तु नः ।।

भो ब्राह्मणाः मया क्रियमाणस्य (अमुकाख्यस्य) कर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मण पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु।

विप्राः -

ऊँ पुण्याहम्। ऊँ पुण्याहम्। ऊँ पुण्याहम्।

ऊँ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः।

पुनन्तु व्विष्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा।।

यजमानः -

पृथिव्यामुद्धृतायां तु यत्कल्याणं पुराकृतम्।

ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैस्तत्कल्याणं बुवन्तु नः।।

भो ब्राह्मणाः मया क्रियमाणस्य अमुकाख्यस्य कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु।

विप्राः -

ऊँ कल्याणम्। ऊँ कल्याणम्। ऊँ कल्याणम्।

ऊँ यथेमां व्वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।

ब्रह्मराजन्याभ्यां षूद्रायचार्याय च स्वायचारणाय च।।

प्रियोदेवादक्षिणायै दातुरिहभूयासमयम्मेकामः समृध्यताभुपमादो नमतु।।

यजमानः -

सागरस्य तु या ऋद्धिर्महालक्ष्म्यादिभिः कृताः।

सम्पूर्णा सुप्रभावा च तांच ऋद्धिं ब्रवुन्तु नः।।

भो ब्राह्मणाः मया क्रियमाणस्य अमुकाख्य कर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु । अस्मै कर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु । अस्मै कर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु ।

विप्राः -

ऊँ आयुष्मते स्वस्ति। ऊँ आयुष्मते स्वस्ति। ऊँ आयुष्मते स्वस्ति।

ऊँ स्वस्तिनऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा विष्ववेदाः

स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु।

यजमानः -

वैधृतौ च व्यतीपाते संक्रान्तौ राहुपर्वणि।

यादृग्वृद्धिमवाप्नोति तां च वृद्धिं ब्रवुन्तु नः ॥

भो ब्राह्मणाः मया क्रियमाणस्य अमुकाख्यस्य कर्मणः वृद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः वृद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः वृद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु।

ऊँ ज्यैष्ठ्यंच मऽआधिपत्यंचमे मन्युष्च मे भामश्च मेऽमष्चमेऽभश्च मे जेमा च मे महिमा च मे व्वरिमा च मे प्रथिमा च मे व्वर्षिमा च मे द्राघिमा च मे वृद्धं च मे वृद्धिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।

यजमानः -

सरित्पतेश्च या कन्या या श्रीर्विष्णुर्गृहेस्थिता।

सर्वसौख्यवती लक्ष्मीस्तां श्रियं च ब्रुवन्तु नः ॥

भो ब्राह्मणाः मया क्रियमाणस्य अमुकाख्यस्य कर्मणः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु।

विप्राः -

अस्तु श्रीः। अस्तु श्रीः। अस्तु श्रीः।

ऊँ मनसः काममाकूतिम्व्वाचः सत्यमषीय।

पशूनांरूपमन्यस्य रसो यशः श्रीः श्रयताम्मयि स्वाहा॥

यजमानः -

शंखासुरविपत्तौ च यथाशान्तिर्धरातले।

यथा च देव देवानां तां च शान्तिं ब्रुवन्तु नः॥

भो ब्राह्मणाः मया क्रियमाणे अस्मिन् कर्मणि मम गृहे च शान्तिं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्मिन् कर्मणि मम गृहे च शान्तिं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्मिन् कर्मणि मम गृहे च शान्तिं भवन्तो ब्रुवन्तु।

विप्राः -

ऊँ शान्तिः। ऊँ शान्तिः। ऊँ शान्तिः।

ऊँ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवीशान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः व्वनस्पतयः

शान्तिर्व्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः सर्वं गॅू शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि। ऊँ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रं तन्नऽआसुव।

मंत्रार्था सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः।
शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयस्तथा॥
भद्रमस्तु षिवं चास्तु महालक्ष्मीः प्रसीदतु।
रक्षन्तु त्वां सदा देवाः सम्पदः सन्तु सर्वदा॥
सपत्ना दुर्ग्रहा पापा दुष्टसत्वाद्युपद्रवाः।
पुण्याहं च समालोक्य निष्प्रभावा भवन्तु ते॥

(अन्ते च ब्राह्मणाः यजमान भाले तिलकं कृत्वा, हस्ते आशीर्वादं दद्युः।

इति बौधायनोक्तं पुण्याहवाचनम्।)

1.4 सारांश -

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि कर्मकाण्ड में कलश पूजन का विशेष महत्व है। कलश मंगलकारक होने के साथ - साथ शुभता का प्रतीक भी माना जाता है। यदि कलश को परिभाषित करना हो तो इस प्रकार कर सकते हैं - देवताओं की कलायें (दिव्य तत्त्व या दिव्य अंश) जिसमें निवास करें वही 'कलश' है। इसका तात्पर्य यह है कि देवताओं के दिव्य अंश को मन्त्र पढकर हम इस कलश में आवाहन करते हैं तथा वे तत्त्व इस कलश में अनुष्ठान पूर्ण होने तक सुरक्षित रहते हैं जिनका दर्शन हमें दिव्य जल के रूप में होता है। पुण्याहवाचन कर्म में कम से कम दो ब्राह्मण अवश्य होते हैं तथा इसमें ब्राह्मणों का हस्तपूजन एवं उनसे आशीर्वाद के लिए यजमान प्रार्थना करता है। पुण्याहवाचन के लिए एक ताम्बे या पीतल का कमण्डलु होना चाहिए, जिसके द्वारा जल का स्राव होता है।

1.5 शब्दावली-

कलश – देवताओं की कलायें जिसमें निवास करें, उसे कलश कहते है।

मंगलकारक - कल्याण करने वाला

वैदिक – वेद से सम्बन्धित ।

देवानां - देवताओं का

आवाहयामि – आवाहन करता हूँ

पूजयामि – पूजन करता हूँ

च – और

शत्रूणां – शत्रुओं का

भद्र – कल्याण

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. ख
3. क
4. ख
5. क

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1- कर्मकाण्ड प्रदीप

2- संस्कार दीपक

3. नित्यकर्मपूजाप्रकाश

1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. कलश पूजन विधान का वर्णन कीजिये ।
2. कलश पूजन का क्या महत्व है ।
3. पुण्याहवाचन से आप क्या समझते है ? स्पष्ट कीजिये।
4. भारतीय कर्मकाण्ड पद्धति में पुण्याहवाचन का क्या महत्व है।

इकाई - 2 नवग्रह पूजन

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 नवग्रह पूजन
2.4 सारांश
2.5 शब्दावली
2.6 अभ्यास प्रश्नो के उत्तर
2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना -

प्रस्तुत इकाई सी0वी0के – 01 के तृतीय खण्ड की द्वितीय इकाई नवग्रह पूजन से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने कलश पूजन एवं पुण्याहवाचन का अध्ययन कर लिया है। आइए इस इकाई में नवग्रह पूजन का ज्ञान करते है।

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार प्रधान ग्रहों की संख्या 9 है। कर्मकाण्ड में उन्हीं नवग्रहों के पूजन का विधान कहा गया है। ये ग्रह अपनी अपनी गत्यानुसार अपने – अपने पथ में निरन्तर भ्रमण करते रहते है। मानव जीवन पर इनका प्रभाव सर्वथा वैज्ञानिकता के साथ सिद्ध है। ज्योतिष विज्ञान इनके प्रभावों का व्यापक बोध कराता है।

इस इकाई के अध्ययन से आप नवग्रहों के पूजन के बारे में भली – भॉति समझ जायेंगे ।

2.2 उद्देश्य -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- ❖ नवग्रह को परिभाषित कर सकेंगे।
- ❖ नवग्रह पूजन विधान को समझा सकेंगे।
- ❖ नवग्रह पूजन के महत्व का निरूपण कर सकेंगे।
- ❖ नवग्रह पूजन के मन्त्रों का ज्ञान कर सकेंगे।
- ❖ नवग्रह पूजन के लाभ – हानि को बता सकेंगे।

2.3 नवग्रह पूजन

नवग्रह मण्डल के निर्माण के बिना हम किसी भी अनुष्ठानिक प्रक्रिया का सम्पादन नही कर सकते इसलिये 'नवग्रह मण्डल' का ज्ञान अति आवश्यक है। ईशाने ग्रह वेदिका कहते हुये यह बतलाया गया है कि नवग्रह मण्डल का स्थान ईशान कोण में होता है। किसी भी यज्ञ के सम्पादन में अग्नि कोण में योगिनी मण्डल, नैर्ऋत्य कोण में वास्तु मण्डल , वायव्य कोण में क्षेत्रपाल मण्डल एवं ईशान में नवग्रह मण्डल बनाने का नियम है। नवग्रह मण्डल पर कुल **44** चौवालीस देवता होतें है। जिसमें नवग्रह के रूप में सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु एवं केतु होते है। प्रत्येक ग्रहों के एक-एक अधिदेवता एवं एक-एक प्रत्यधि देवता होते है। अधि देवता का स्थान ग्रह के दक्षिण भाग में तथा प्रत्यधि देवता का स्थान ग्रह के वाम भाग में होता है।

शिवः शिवा गुहो विष्णु ब्रह्मेन्द्र यमकालकाः।

चित्रगुप्तो अथ भान्वादि दक्षिणे चाधिदेवताः ।।

अर्थात् शिव, शिवा, स्कन्द, विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र, यम, काल, एवं चित्रगुप्त को अधिदेवता तथा अग्नि, आप, धरा, विष्णु, शक्र, इन्द्राणी, प्रजापति, सर्प एवं ब्रह्मा प्रत्यधि देवता के रूप में जाने जाते है। तदनन्तर पंचलोकपालों के रूप गणेश, अम्बिका, वायु, आकाश एवं अश्विनी कुमार माने जाते है। इसके अलावा वास्तु एवं क्षेत्रपाल का भी स्थान होता है । दशदिक्पाल इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, पश्चिम, वायु, कुबेर, ईशान, ब्रह्मा एवं अनन्त होते हैं । इस प्रकार से कुल **44** देवताओं का स्थान नवग्रह मण्डल पर होता है ।

नवग्रहों में सूर्य को सभी ग्रहों में प्रधान ग्रह माना गया है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार सूर्य को अखिल ब्रह्माण्ड का केन्द्र कहा गया है। इसे ब्रह्माण्ड नायक भी कहा जाता है। वेदों में सूर्य को जगदात्मा सूर्य आत्मा जगतस्षुश्च कहकर किया गया है। सूर्य सम्पूर्ण सौर मण्डल का पिता एवं ग्रहों के अधिपति के रूप में जाना जाता है। यह सृष्टि की जीवनी शक्ति एवं गति का कारक है। उपनिषदों और पुराणों में सूर्य का वर्णन सृष्टि के उत्पादन एवं हिरण्यगर्भ के रूप में मिलता है। गायत्री छन्द के उपास्य देव यही भगवान् सविता है।

दूसरे ग्रह के रूप में चन्द्रमा को जाना जाता है। चन्द्रमा मनसो जातः शुक्लयजुर्वेद के इस मन्त्र से स्पष्ट होता है कि वैदिक काल में ऋषियों ने चन्द्र का मन से घनिष्ठ संबंध प्रत्यक्ष कर लिया था। कालान्तर में इस पर विचार करते हुये आचार्यों ने चन्द्रमा को मन के रूप में स्वीकार किया है। चन्द्रमा को ज्योतिष में कालपुरुष का मन मानते हुये व्यक्ति की मानसिकता का कारक एवं नियामक माना गया है। संक्षेपतः यह कहा जा सकता है कि बलवान चन्द्रमा स्वस्थ्य मानसिकता तथा निर्बल चन्द्रमा संकुचित मानसिकता का संसूचक होता है। व्यक्ति के जीवन में इस बात को ध्यान देने की जरूरत है कि लग्न शरीर का तथा चन्द्रमा मन का प्रतिनिधित्व करता है। शरीर ही वह क्षेत्र है जहां हम कृत कर्मों का फल भोगते है। यदि लग्न एवं चन्द्रमा दोनों ही पापग्रह से आक्रान्त हों तो दूषित मस्तिष्क चन्द्रमा की स्थिति को स्पष्ट करता है और जातक को बुरे कामों में लगाता है।

तीसरे ग्रह के रूप में मंगल की चर्चा की गयी है। ब्रह्मवैवर्त्त पुराण के अनुसार मंगल की माता का नाम पृथ्वी एवं पिता का नाम श्री विष्णु है। मंगल की उत्पत्ति भगवान विष्णु के पसीने की बूंद को पृथ्वी द्वारा धारण किये जाने के कारण मानी गयी है। वामन पुराण में वर्णन मिलता है कि भगवान् शिव के द्वारा अन्धकासुर का वध कर दिये जाने के कारण उनके शरीर से उत्पन्न पसीने से मंगल का जन्म हुआ। पद्म पुराण के अनुसार जब भगवान शंकर ने दक्ष का यज्ञ विध्वंस किया तब उनके पसीने

की बूंद से वीरभद्र उत्पन्न हुये एवं उनको पृथ्वी से दूर मंगल ग्रह के रूप में रहने का आदेश प्राप्त हुआ। सभी कथानकों के अनुसार मंगल का जन्म शिव या विष्णु के पसीना को पृथ्वी द्वारा धारण करने पर माना गया है। मंगल को काल पुरुष का सत्व कहा गया है। यह अत्यधिक क्रियात्मक एवं तामसिक ग्रह है तथा व्यक्ति के शारीरिक शक्ति, क्रिया और पाश्व प्रवृत्तियों का सूचक है।

चौथे ग्रह बुध को काल पुरुष की वाणी कहा गया है । व्यक्ति के स्नायु मण्डल एवं बुद्धि पर इसका विशेष प्रभाव रहता है । वाणी एवं भावाभिव्यक्ति के कारक इस ग्रह के पाप पीड़ित होने के कारण बुद्धि एवं बोलने में गतिरोध होता है । यह सौम्य एवं नपुंसक ग्रह है। शुभग्रह के साथ शुभ एवं पाप ग्रह के साथ पापी हो जाता है । सूर्य के साथ बैठकर भी उससे आक्रान्त नही होता अपितु बुधादित्य नामक विशिष्ट कल्याणकारी योग बनाता है ।

पांचवें ग्रह के रूप में बृहस्पति को माना गया है। बृहस्पति सौर मंडल का सबसे बड़ा एवं सर्वाधिक शुभग्रह है। इसे काल पुरुष के ज्ञान के रूप में स्वीकार किया गया है। ज्ञान एवं सुख का प्रधान कारक बृहस्पति को माना गया है। यह जिस भाव में उपस्थित रहता है उसके कारकत्व के लिये बाधक रहता है परन्तु इसकी दृष्टि परम शुभ मानी गयी है। यह जिस भाव को देखता है उस भाव के शुभता में वृद्धि कर देता है। ग्रहों में यह प्रधान मंत्री और आध्यात्मिक ग्रह के रूप में जाना जाता है ।

छठवें ग्रह के रूप में शुक्र को स्वीकार किया गया है। शुक्र को दैत्यों का आचार्य माना गया है। शुक्रवार को देवी की उपासना हेतु अच्छा माना गया है। जातक के भौतिक व्यक्तित्व का यह प्रतीक माना जाता है। व्यक्ति में आकर्षण का कारण शुक्र को माना गया है। ज्येतिष में शुक्र को शुभग्रह के रूप में स्वीकार किया गया है।

सातवें ग्रह के रूप में शनि का स्थान आता है। नवग्रहों में से सबसे क्रूर, कठोर एवं प्रभावशाली पापग्रह शनि को माना गया है। ऐसा नही है कि शनि सभी भावों में स्थित होने पर पाप फल ही देता है। कुछ भावों में शनि की स्थिति परम लाभप्रद भी होती है। किन्तु ऐसा अपवाद स्वरूप ही देखने में आता है। अधिकांश जातक शनि के प्रभाव से पीड़ा ही पाते है। दुष्ट, दुर्भाग्यशाली, अमंगल, हानिकारक एवं भयानक रूप वाले व्यक्ति को बोलचाल की भाषा में लोग शनिचर कह दिया करते है। इसका तात्पर्य यह है कि शनि अमंगल, हानि एवं दुर्भाग्य का प्रतीक माना जाता है। एक बात और सत्य है कि जिस प्रकार जीवन के साथ मृत्यु का संयोग अवश्यम्भावी है उसी प्रकार सृष्टि का प्रत्येक प्राणी किसी न किसी रूप में शनि से अवश्य प्रभावित होता है।

आठवें ग्रह के रूप में राहु तथा नवें ग्रह के रूप में केतु को माना गया है। पौराणिक कथाओं के

अनुसार राहु एक चतुर तथा धूर्त राक्षस था। जो समुद्र मन्थन से निकले अमृत वितरण के समय, मोहिनी रूपधारी भगवान विष्णु के छल को उसी क्षण समझकर अमृत पान के लिये रूप बदल कर देवताओं की पंक्ति में बैठ गया था। सूर्य एवं चन्द्रमा ने भगवान विष्णु को उसके इस कृत्य के बारे में बतलाया। राहु की सत्यता का ज्ञान होने पर भगवान विष्णु ने सुदर्शन चक्र से उसके शिर को काट दिया किन्तु वह अमृत पान कर चुका था इसलिये उसकी मृत्यु नही हो पायी। फलतः वह दो रूपों में सामने आया जिसमें शिर भाग का नामकरण राहु के रूप में एवं शरीर भाग का नामकरण केतु के रूप में किया गया। इसलिये राहु को सूर्य एवं चन्द्रमा का शत्रु माना जाता है तथा ग्रहण का कारण बनता है।

वैदिक मन्त्रों द्वारा नवग्रह स्थापना विधान -

आकृष्णेन इमं देवा अग्निर्मूधा दिवः ककुत्।
उद्बुध्यस्वेति च ऋचो यथासंख्यं प्रकीर्तिताः ।।
बृहस्पते अतियदर्यस्तथैवान्नात्परिस्रुतः।
शं नो देवीस्तथा काण्डात्केतुं कृण्वन्निमांस्तथा ।।

इस श्लोक में नवग्रहों के लिये वैदिक मन्त्रों का संकेत किया गया है कि आप किस मन्त्र से किसका स्थापन करेगें। इसका विशद विवरण इस प्रकार है-

नवग्रहों के आवाहन में सर्वप्रथम सूर्य का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में सूर्य का स्थान मध्य प्रकोष्ठ में वृत्ताकार होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर सूर्य के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही सूर्य का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

1- ॐ आकृष्णेन रजसा व्वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च। हिरण्ययेनसवितारथेनादेवोयाति भुवनानिपश्यन्।। ॐ भूर्भुवः स्वः कलिदेशोव काश्यपसगोत्र रक्तवर्ण भो सूर्य इहागच्छ इह तिष्ठ सूर्याय नमः। सूर्यमावाहयामि स्थापयामि ।।

सूर्य के आवाहन स्थापन के अनन्तर चन्द्रमा का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में चन्द्रमा का स्थान मण्डल के अग्नि कोण वाले प्रकोष्ठ में अर्ध चन्द्राकार के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर चन्द्र के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही चन्द्र का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

2- ॐ इमंदेवा ऽ असपत्न गुं सुबद्धम्महतेक्षत्राय महते ज्येष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय।। इममुष्यपुत्रममुष्यैपुत्रमस्यै व्विशऽएषवोमी राजा सोमो ऽ अस्माकं ब्राह्मणाना गुं राजा।। ॐ भूर्भुवः स्वः यमुनातीरोöव आत्रेयसगोत्र शुक्लवर्ण भो सोम इहागच्छ इह तिष्ठ सोमाय नमः।। सोममावाहयामि स्थापयामि।।

चन्द्र के आवाहन स्थापन के अनन्तर मंगल का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में मंगल का स्थान मण्डल के दक्षिण वाले रक्त वर्णीय प्रकोष्ठ में त्रिकोण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर मंगल के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही मंगल का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

3- ॐ अग्निमूर्मुर्द्धादिवः ककुत्पतिः पृथिव्या ऽअयम् । अपा गुं रेता गुं सी जिन्वति ।। ॐ भूर्भुवः स्वः अवंतिकापुरोव भारद्वाजसगोत्र रक्तवर्ण भो भौम इहागच्छ इह तिष्ठ भौमाय नमः भौममावाहयामि स्थापयामि।।

मंगल के आवाहन स्थापन के अनन्तर बुध का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में बुध का स्थान मण्डल के ईशान कोण वाले हरित वर्णीय प्रकोष्ठ में बाण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर बुध के उप ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही बुध का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

4- ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजाग्रहित्वमिष्टापूर्त्ते स गुं सृजेथामयं च।। अस्मिन्सधस्थे ऽ अध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवायजमानश्चसीदत।। ॐ भूर्भुवः स्वः मगधदेशोöव आत्रेयसगोत्र हरितवर्ण भो बुध इहागच्छ इह तिष्ठ बुधाय नमः बुधमावाहयामि स्थापयामि ।।

बुध के आवाहन स्थापन के अनन्तर बृहस्पति का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में बृहस्पति का स्थान मण्डल के उत्तर वाले पीत वर्णीय प्रकोष्ठ में अष्टकोण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर बृहस्पति के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही बृहस्पति का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

5- ॐ बृहस्पते ऽअतियदर्योऽअर्हाद्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु। यद्दीदयच्छवस ऽ ऋतप्रजाततदस्मासुüविणन्धेहि चित्रम्।। ॐ भूर्भुवः स्वः

सिंधुदेशोव आंगिरसगोत्र पीतवर्ण भो बृहस्पते इहागच्छ इह तिष्ठ बृहस्पतये नमः बृहस्पतिं आवाहयामि स्थापयामि ।।

बृहस्पति के आवाहन स्थापन के अनन्तर शुक्र का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में शुक्र का स्थान बुध एवं चन्द्रमा के बीच श्वेत वर्णीय प्रकोष्ठ में पंचकोण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर शुक्र के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही शुक्र का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

6- ॐ अन्नात्परिस्रुतो रसं ब्रह्मणाव्यपिबत्क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः। ऋतेन सत्यमिन्üयं व्विपान गुं शुक्रमन्धस ऽ इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोमृतं मधु।। ॐ भूर्भुवः स्वः भोजकट देशोöव भार्गवसगोत्र शुक्लवर्ण भो शुक्र इहागच्छ इह तिष्ठ शुक्राय नमः शुक्रमावाहयामि स्थापयामि।।

शुक्र के आवाहन स्थापन के अनन्तर शनि का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में शनि का स्थान पश्चिम तरफ राहु एवं केतु के बीच कृष्ण वर्णीय प्रकोष्ठ में मनुष्य की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर शनि के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही शनि का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

7- ॐ शन्नोदेवीरभिष्टयऽआपोभवन्तु पीतये। शंय्योरभिस्रवन्तुनः।। ॐ भूर्भुवः स्वः सौराष्ट्रदेशोöव काश्यपसगोत्र कृष्णवर्ण भो शनैश्चर इहागच्छ इह तिष्ठ शनैश्चराय नमः शनैश्चरमावाहयामि स्थापयामि ।।

शनि के आवाहन स्थापन के अनन्तर राहु का आवाहन किया जाता है । नवग्रह मण्डल में राहु का स्थान पश्चिम तरफ नैर्ऋत्य कोण की ओर कृष्ण वर्णीय प्रकोष्ठ में मकर की आकृति के रूप में दिया होता है । आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर राहु के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है । साथ ही राहु का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है । नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

8- ॐ कयानश्चित्र ऽआभुवदूतीसदावृधः सखा। कयाशचिष्ठयाव्वृता ।। ॐ भूर्भुवः स्वः राठिनापुरोöव पैठिनस गोत्र कृष्णवर्ण भो राहो इहागच्छ इह तिष्ठ राहवे नमः राहुं आवाहयामि स्थापयामि ।।

राहु के आवाहन स्थापन के अनन्तर केतु का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में केतु का स्थान पश्चिम तरफ वायव्य कोण की ओर कृष्ण वर्णीय प्रकोष्ठ में खड्ग की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर केतु के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही केतु का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

9- ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशोमर्याऽअपेशसे।। समुष रजायथाः ।। ॐ भूर्भुवः स्वः अन्तर्वेदिसमुöव जैमिनीसगोत्र कृष्णवणर भो केतो इहागच्छ इह तिष्ठ केतवे नमः केतुमावाहयामि स्थापयामि।

2.4 सारांश -

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि नवग्रह मण्डल के निर्माण के बिना हम किसी भी अनुष्ठानिक प्रक्रिया का सम्पादन नही कर सकते इसलिये 'नवग्रह मण्डल' का ज्ञान अति आवश्यक है। ईशाने ग्रह वेदिका कहते हुये यह बतलाया गया है कि नवग्रह मण्डल का स्थान ईशान कोण में होता है। किसी भी यज्ञ के सम्पादन में अग्नि कोण में योगिनी मण्डल, नैर्ऋत्य कोण में वास्तु मण्डल , वायव्य कोण में क्षेत्रपाल मण्डल एवं ईशान में नवग्रह मण्डल बनाने का नियम है। नवग्रह मण्डल पर कुल **44** चौवालीस देवता होतें है। जिसमें नवग्रह के रूप में सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु एवं केतु होते है। प्रत्येक ग्रहों के एक-एक अधिदेवता एवं एक-एक प्रत्यधि देवता होते है। अधि देवता का स्थान ग्रह के दक्षिण भाग में तथा प्रत्यधि देवता का स्थान ग्रह के वाम भाग में होता है।

2.5 शब्दावली-

वेदप्रधान – जहॉ वेद की प्रधानता हो ।

लौकिक - सांसारिक।

वैदिक – वेद से सम्बन्धित ।

विघ्नेश्वर - विघ्न को हरने वाले ईश्वर ।

आवाहयामि – आवाहन करता हूॅ

पूजयामि – पूजन करता हूॅ

च – और

घृत – घी

मधु – शहद

शर्करा – चीनी

पंचामृत – दूध, दही, घी, शहद, गंगाजल का मिश्रण

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. ख
3. क
4. ख
5. क

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1- कर्मकाण्ड प्रदीप

2- नवग्रह पूजन विधान

3. नित्यकर्म पूजाप्रकाश

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. नवग्रह पूजन का विस्तृत वर्णन कीजिये।
2. नवग्रह पूजन के वैदिक मन्त्रों का उल्लेख करते हुये वर्णन कीजिये।
3. पूजन में नवग्रहों का क्या महत्व है।

इकाई – 3 अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता एवं पंचलोकपाल पूजन

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3. अधिदेवता एवं प्रत्यधिदेवता का परिचय
3.4
3.4 सारांश
3.5 शब्दावली
3.6 अभास प्रश्नो के उत्तर
3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ
3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना-

सी0वी0के–01 के तृतीय खण्ड की तीसरी इकाई 'अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता एवं पंचलोकपाल पूजन' में आपका स्वागत है। इससे पूर्व की इकाई में आपने नवग्रह पूजन का ज्ञान प्राप्त कर लिया है। आइए अब इस इकाई में अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता एवं पंचलोकपाल पूजन का अध्ययन करते है।

कर्मकाण्ड पूजन में अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता एवं पंचलोकपाल पूजन का विशेष महत्व है। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, शिवादि देवता अधिदेवता तथा अग्नि, वरूणादि देवता प्रत्यधिदेवता के रूप में जाने जाते है, जिसका विधिवत् अध्ययन आप इस इकाई में करेंगे।

इस इकाई के अध्ययन से आप पूजन क्रम में अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता एवं पंचलोकपाल का भली – भॉति ज्ञान आप इस इस इकाई में कर लेंगे।

3.2 उद्देश्य-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- ❖ अधिदेवता का ज्ञान कर सकेंगे।
- ❖ प्रत्यधिदेवता कौन –कौन से है बता सकेंगे।
- ❖ पंचलोकपाल के अन्तर्गत किन किन देवताओं का पूजन होता है,समझ लेंगे।
- ❖ अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता पूजन का ज्ञान कर लेंगे।
- ❖ पंचलोकपाल पूजन विधि को समझा सकेंगे।
- ❖ कर्मकाण्ड में अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता एवं पंचलोकपाल पूजन के महत्व का निरूपण कर सकेंगे।

3.3 अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता एवं पंचलोकपाल पूजन

अधिदेवता एवं प्रत्यधिदेवता का परिचय -

यह सर्व विदित है कि जब भी हम कोई शान्ति करते हैं तो नवग्रह मण्डल का निर्माण कर नवग्रहों की स्थापना अवश्य करते हैं। न केवल शान्ति अपितु यज्ञों में भी नवग्रहों की स्थापना करनी पड़ती है। नवग्रहों की स्थापना के बिना हम किसी भी अनुष्ठानिक प्रक्रिया का सम्पादन नही कर सकते इसलिये नवग्रहों का ज्ञान अति आवश्यक है। ईशाने ग्रह वेदिका कहते हुये यह बतलाया गया है कि नवग्रह वेदी का निर्माण ईशान कोण में करके नवग्रहों की स्थापना करनी चाहिये। नवग्रहों के रूप में सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु एव केतु होते हैं। इन नवों ग्रहों के दक्षिण अधि देवता एवं बाम भाग में प्रत्यधि देवता विराजित होते हैं। कहा गया है-

अधि देवता दक्षिणे वामे प्रत्यधि देवता।

इसमें दक्षिण एवं वाम का विचार उन ग्रहों से करना चाहिये। प्रायः इस बात को समझने में भूल हो जाती है कि दक्षिण और बाम तो एक ओर होगा लेकिन ऐसा नही है। क्योंकि लिखा गया-

शुक्रार्कौ प्रांगमुखो ज्ञेयौ गुरुसौम्या उदंगमुखः।
प्रत्यंगमुखो सोम शनि शेषाः दक्षिणतो मुखाः।।

अर्थात् शुक्र एवं सूर्य का मुख पूर्व की ओर होता है। बुध एवं गुरु का मुख उत्तर की ओर होता है। सोम एवं शनि का मुख पश्चिम की ओर तथा शेष ग्रहों का मुख दक्षिण की ओर होता है। इस स्थिति पर विचार करना चाहिये। कोई व्यक्ति यदि पूर्व की ओर मुख करके खड़ा है तो उसका दाहिना जिधर होगा उधर पश्चिम की ओर मुख करके खड़े हुये व्यक्ति का नही होगा। ठीक उसी प्रकार उत्तर की ओर मुख करके खडे हुये व्ययक्ति का दहिना बाया भाग जिस ओर होगा दक्षिण की ओर मुख किये व्यक्ति का दायां बाया भाग उससे विपरीत होगा। इस लिये अधि देवता एवं प्रत्यधि देवता के स्थापन में हमें सावधानी पूर्वक ग्रहों के मूख का ज्ञान रखना होगा तभी अधि एवं प्रत्यधि देवताओं की स्थापना सम्यक् तरीके से हो पायेगी। इसके अलावा एक और भी विधान शास्त्रों में देखने को मिलता है-

आदित्याभिमुखाःसर्वेसाधिप्रत्यधिदेवताः।
अधिदेवता दक्षिणे वामे प्रत्यधिदेवताः।।

यहां भी उसी प्रकार की स्थिति उत्पन्न हो रही है। सूर्य सभी ग्रहों के मध्य में विराजमान है। अब सारे ग्रह सूर्य को देख रहे हैं ऐसी स्थिति में उनके मुख की दिशा अलग-अलग होगी जिसके कारण उनका दायां एवं बायां भाग बदल जायेगा और अधि-प्रत्यधि देवताओं का स्थान उसके अनुरूप होगा।

अब यहां विचारणीय होगा कि अधि देवता कौन-कौन है? इसके उत्तर के सन्दर्भ में मत्स्य पुराण एवं कोटि होम पद्धति में लिखा गया है कि-

ईश्वरश्च उमा चैव स्कन्दो विष्णुस्तथैव च। ब्रह्मेन्द्रौ यमकालाश्च चित्रगुप्ताधिदेवताः।

अर्थात् ईश्वर, उमा, स्कन्द्र, विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र, यम, काल एवं चित्रगुप्त ये अधिदेवता कहे गये है। इसको और अच्छी तरह हम इस प्रकार समझ सकते है। सूर्य के दक्षिण भाग में ईश्वर का स्थान होता है। चन्द्रमा के दक्षिण भाग में उमा का स्थान होता है। मंगल के दक्षिण भाग में स्कन्द का स्थान होता है। बुध के दक्षिण भाग में विष्णु का स्थान होता है। बृहस्पति के दक्षिण भाग में ब्रह्मा का स्थान होता है। शुक्र के दक्षिण भाग में इन्द्र का स्थान होता है। शनि के दक्षिण भाग में यम का स्थान होता है। राहु

के दक्षिण भाग में काल का स्थान होता है एवं केतु के दक्षिण भाग में चित्रगुप्त का स्थान होता है। इसी प्रकार प्रत्यधि देवताओं के बारे में विचार करते हुये कहा गया है कि-

अग्निरापो धरा विष्णुः इन्द्रश्चैन्द्री प्रजापतिः। सर्पाब्रह्मा च निर्दिष्टा प्रत्यधिदेवा यथाक्रमम्।।

अर्थात् अग्नि, अप, धरा, विष्णु, इन्द्र, ऐन्द्री, प्रजापति, सर्प एवं ब्रह्मा प्रत्यधि देवता होते हैं। इसको इस प्रकार सरलता से समझा जा सकता है। सूर्य के वाम भाग में अग्नि का स्थान होता है। चन्द्रमा के वाम भाग में अप का स्थान होता है। मंगल के वाम भाग में धरा का स्थान होता है। बुध के वाम भाग में विष्णु का स्थान होता है। बृहस्पति के वाम भाग में इन्द्र का स्थान होता है। शुक्र के वाम भाग में ऐन्द्री का स्थान होता है। शनि के वाम भाग में प्रजापति का स्थान होता है। राहु के वाम भाग में सर्प का स्थान होता है एवं केतु के वाम भाग में ब्रह्मा का स्थान होता है।

पंचलोकपाल का परिचय -

नवग्रह मण्डल पर पंच लोकपालों की स्थापना की जाती है। पंचलोकपालों के विषय में लिखा है कि ग्रहाणामुत्तरे पंच लोकपालाः व्यवस्थिताः। अर्थात् ग्रहों के उत्तर में पंच लोकपालों की व्यवस्था की गयी है। इन पंचलोकपालों के नाम के सन्दर्भ में प्राप्त होता है कि गणेशश्चाम्बिका वायु आकाशश्चाश्विनौ तथा। अर्थात् गणेश, अंबिका, वायु, आकाश एवं अश्विनी कुमार ये पॉच लोकपाल है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार प्राप्त होता है-

1- श्री गणेश का स्वरूप-

चतुर्भुजस्त्रिनेत्रश्च कर्तव्योत्र गजाननः। नागयज्ञोपवीतश्च शशांक कृतशेखरः।
दक्षे दन्तं करे दद्यात् द्वितीये चाक्षसूत्रकम्। तृतीये परशुं दद्याच्चतुर्थे मोदकं तथा।।

उपरोक्त श्लोक में श्री गणेश जी के स्वरूप का वर्णन करते हुये कहा गया है कि पंचलोकपाल के रूप में व्यवस्थित गणेश जी चार भुजा वाले हैं, तीन नेत्रों वाले हैं तथा उनका मुख गज का बना हुआ है। नाग के यज्ञोपवीत धारण करते है तथा उनके शिखर पर चन्द्रमा विराजमान रहता है। दाहिने हाथ में दांत धारण किये हुये है। ऐसी किंवदन्ती है कि गणेश जी के हाथी वाले मुख में दो दांत थे। एक दांत उन्होने स्वयं ही तोड़ दिया इसलिये अब केवल एक दांत ही बचा रह गया जिसके कारण वे एकदन्त हो गये। वहीं कहा गया एक दांत उनका कहां चला गया ? जिसे उन्होने तोड़ा तो बतलाया गया उसी को दाहिने हाथ में अस्त्र के रूप में धारण कर लिये। इसलिये श्री गणेश जी एकदन्त हो गये। दूसरे हाथ में अक्ष एवं सूत्र लिये हुये है। तीसरे हाथ में परशु लिये हुये है तथा चौथे हाथ में मोदक लिये हुये है। इस प्रकार का स्वरूप श्रीगणेश लाकपाल का है।

2- अम्बिका का स्वरूप-

शक्तिं बाणं तथा शूलं खड्गं चक्रं च दक्षिणे। चन्द्रबिम्बमधो वामे खेटमूर्ध्वे कपालकम्।

सुकंकटं च विभ्राणा सिंहारूढ़ा तु दिग्भुजा। एषा देवी समुद्दिष्टा दुर्गा दुर्गार्तिनाशिनी।

इस श्लोक में दूसरे लोकपाल अम्बिका का वर्णन किया गया है। इसके अनुसार अम्बिका नाम की दुर्गा देवि शक्ति, बाण, शूल, खड्ग, एवं चक्र दाहिनी ओर धारण की हुई है। वाम भाग में चन्द्र बिम्ब, ग्रह, कपाल एवं सुकंकट धारण की हुयी सिंह पर आरूढ़ दश भुजाओं वाली दुर्गा देवि का स्वरूप इस प्रकार है।

3- वायु का स्वरूप-

तीसरे लोकपाल के रूप में वायु को स्वीकार किया गया है। वायु के स्वरूप का वर्णन करते हुये दानमयूख में इस प्रकार कहा गया है।

धावद्धरणिपृष्ठस्थो ध्वजधारी समीरणः।

वरदानकरो धूम्रवर्णः कार्यो विजानता।

वायु के स्वरूप के बारे में कहा गया है कि वायु लोकपाल धरणिपृष्ठ यानी भूमि के पृष्ठ पर दौड़ रहे है। ये वायु देवता ध्वज धारण किये हुये है। एक हाथ से वरदान वाली मुद्रा बनाये हुये है। इनका वर्ण धूम्र है। इस प्रकार वायु लोकपाल का स्वरूप बतलाया गया है।

4-आकाश का स्वरूप-

चौथे लोकपाल के रूप में आकाश को स्वीकार किया गया है। आकाश नामक लोकपाल के स्वरूप का वर्णन करते हुये पाया गया है कि-

नीलोत्पलाभं गगनं तद्वर्णाम्बरधारि च।

चन्द्रार्क हस्तं कर्तव्यं द्विभुजं सौम्यखण्डवत्।

आकाश के स्वरूप के बारे में कहा गया है कि नीले उत्पल यानी कमल के समान गगन नामक दिग्पाल की आभा है। और उसी वर्ण का अम्बर भी धारण किया हुआ है। आकाश जी की दो भुजायें है इन दोनों भुजाओं में चन्द्रमा एवं सूर्य को धारण किये हुये है। आकाश अखण्ड स्वरूप में एवं सौम्य स्वरूप में विराजमान है।

5- अश्विनी कुमार का स्वरूप-

पॉचवे लोकपाल के रूप में अश्विनी कुमार को जाना जाता है। अश्विनी कुमार के स्वरूप की चर्चा करते हुये दानमयूख में कहा गया है कि -

द्विभुजौ सौम्य वरदौ कर्तव्यो रूपसंयुता। तयोरोषधयः कार्या दिव्या दक्षिण हस्तयोः । वामयोः पुस्तकौ कार्यौ दर्शनीयौ तथा द्विजाः । एकस्य दक्षिणे पार्श्वे वामे चास्य च यादवः । नारी युगं प्रकर्तव्यं सुरूपं चारुदर्शनम्। रत्नभाण्डकरे कार्ये चन्द्रशुक्लाम्बरे तथा ।

अश्विनी कुमार की विशेषता यह है कि ये देवता तो एक है लेकिन ये दो कुमारों के स्वरूप में रहते है। दो भुजायें धारण करने वाले उन भुजाओं से वर देने वाले तथा औषधि का काम करने वाले है। दक्षिण एवं वाम पार्श्व के रूप में विराजमान है। इनका दर्शन अत्यन्त मनोहर है। नारिओं जैसा ये दिखाई देते है रत्न भाण्ड यानी पात्र लिये हुये होते है ।

अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता एवं पंचलोकपाल का वैदिक मन्त्रों से आवाहन-

आप अधि देवताओं, प्रत्यधि देवताओं एवं पंचलोकपालों के बारे परिचय प्राप्त कर लिये है । अब इनका आवाहन इस प्रकार है-

अधिदेवता स्थापनम्

1-सूर्य के दक्षिण में ईश्वर का आवाहन- ॐ त्र्यंबकं यजामहे सुगंधिम्पुष्टिवर्द्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्। ओं भूर्भुवः स्वः ईश्वराय नमः। ईश्वरं आवाहयामि स्थापयामि।।

2- चन्द्रमा के दक्षिण में उमा का आवाहन- श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्न्या वहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रुपमश्विनौव्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुम्म ऽ इषाण सर्व्वलोकम्म ऽइषाण।। ॐ भूर्भुवः स्वः उमायै नमः उमामावाहयामि स्थापयामि।।

3- मंगल के दक्षिण में स्कन्द का आवाहन- ॐ यदक्रन्दः प्रथमं जायमान ऽउद्यन्त्समुद्रादुतवापुरीषात्। श्येनस्य पक्षाहरिणस्यबाहू उपस्तुत्यम्महिजातन्ते ऽ अर्व्वन्।। ॐ भूर्भुवः स्वः स्कन्दाय नमः स्कन्दं आवाहयामि स्थापयामि।।

4- बुध के दक्षिण में विष्णु का आवहन- ॐ विष्णोरराटमसि व्विष्णोः श्नप्त्रेस्थो व्विष्णोः स्यूरसिव्विष्णोर्ध्रुवोसि। व्वैष्णवमसि व्विष्णवे त्वा ।। ओं भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।।

5- बृहस्पति के दक्षिण में ब्रह्मा का आवाहन- ॐ आ ब्रह्मन्ब्राह्मणोब्रह्मवर्च्चसी जायतामाराष्ट्रे राजन्यः शूर ऽ इषव्योतिव्याधीमहारथोजायतांदोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरंधिर्योषाजिष्णूरथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य व्वीरो जायतान्निकामे निकामे नः पर्ज्जन्यो व्वर्षतु फलवत्यो न ऽओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्।। ओं भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि।।

6- शुक्र के दक्षिण में इन्द्र का आवाहन - ॐ सयोषा ऽ इन्द्र सगणो मरु सोमंपिबव्वृत्रहा शूर विद्वान्। जहिशत्रूँ **2** रपमृधोनुदस्वाथाभ्यङ्कृणुहि विश्वतो नः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रं आवाहयामि स्थापयामि ॥

7- शनि के दक्षिण में यम का आवाहन - ओं यमाय त्वांगिरस्वते पितृमते स्वाहा। स्वाहा घर्म्माय स्वाहा घर्म्मः पित्रे॥ ओं भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यमं आवाहयामि स्थापयामि ॥

8- राहु के दक्षिण में काल का आवाहन - ॐ कार्षिरसि समुüस्य त्वाक्षित्या ऽ उन्नयामि समापो ऽ अरग्मतसमोषधीभिरोषधीः॥ ॐ भूर्भुवः स्वः कालाय नमः कालं आवाहयामि स्थापयामि ॥

9- केतु के दक्षिण में चित्रगुप्त का आवाहन - ॐ चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय ॐ भूर्भुवः स्वः चित्रगुप्ताय नमः चित्रगुप्तमावाहयामि स्थापयामि ॥

प्रत्यधिदेवतास्थापनम्

1-सूर्य के वाम भाग में अग्नि का आवाहन- ॐ अग्निदूतं पुरोदधे हव्यावाहमुपब्रुवे। देवाँ आसादयादिह। ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निम् आवाहयामि स्थापयामि ॥

2- चन्द्रमा के वाम भाग में अप का आवाहन- ओं आपो हिष्ठामयोभुवस्तान ऽउर्ज्जे दधातन। महेरणाय चक्षसे॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अद्भ्यो नमः अपः आवाहयामि स्थापयामि ॥

3- मंगल के वाम भाग में पृथ्वी का आवाहन-ओ स्योनापृथिवी नो भवानृक्षरानिवेशनी। यच्छानः शर्म्म शप्प्रथाः ॥ ओं भूर्भुवः स्वः पृथिव्यै नमः पृथ्वीमावाहयामि स्थापयामि ॥

4- बुध के वाम भाग में विष्णु का आवाहन- ओं इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधानिदधे पदम्। समूढमस्य पा गुं सुरे स्वाहा ॥ ओं भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णुं आवाहयामि स्थापयामि ॥

5-बृहस्पति के वाम में इन्द्र का आवाहन- ॐ इन्द्रऽआसान्नेता बृहस्पतिर्दक्षिणायज्ञः पुर ऽ एतु सोमः। देवसेनानामभिभंजतीनांजयन्तीनांमरुतोयंत्वग्रम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रं आवाहयामि स्थापयामि ॥

6- शुक्र के वाम में इन्द्राणी का आवाहन- ॐ आदित्यै रास्ना सीन्द्राण्या उष्णीषः। पूषासि घर्माय दीष्व ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राण्यै नमः**,** इन्द्राणीं आवाहयामि स्थापयामि ॥

7- शनि के वाम में प्रजापति का आवाहन- ॐ प्रजापते नत्वदेतान्यन्योव्विश्वारुपाणि परिताबभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो ऽ अस्तु व्वय गुं स्यामपतयोरयीणाम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः प्रजापतये नमः प्रजापतिं आवाहयामि स्थापयामि ॥

8- राहु के वाम भाग में सर्प का आवाहन- ॐ नमोस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु। ये ऽ अन्तरिक्षे ये

दिवि तेभ्यः सर्प्पेभ्यो नमः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः सर्प्पेभ्यो नमः सर्पान् आवाहयामि स्थापयामि

9- केतु के वाम भाग में ब्रह्म का आवाहन- ॐ ब्रह्मयज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमितः सुरुचोव्वेन ऽ आवः। स बुध्न्याऽ उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च व्विवः॥ ऊँ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि ॥

विनायकादिपंचलोकपालानामावाहनम् -

1- गणेश का आवाहन- ॐ गणान्त्वा गणपति गुं हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपति गुं हवामहे निधीनान्त्वा निधिपति गुं हवामहे व्वसो मम। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भ्भधम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतये नमः गणपतिमावाहयामि स्थापयामि ॥

2- अम्बिका का आवाहन- ॐ अम्बे ऽ अम्बिके अम्बालिके न मा मयति कश्चन। ससत्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम्। ॐ भूर्भुवः स्वः दुर्गायै नमः दुर्गामावाहयामि स्थापयामि ॥

3- वायु का आवाहन- ॐ व्वायो ये ते सहस्रिणो रथासस्तेभिरागहि। नियुत्वान्सोमपीतये ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुं आवाहयामि स्थापयामि ॥

4- आकाश का आवाहन- ओं घृतं घृतपावानः पिबतव्वसां वसापावानः पिबतान्तरिक्षस्यहविरसि स्वाहा ॥ दिशः प्रदिश ऽ आदिशो व्विदिशिऽउद्दिशोदिग्भ्यः स्वाहा ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः आकाशाय नमः आकाशं आवाहयामि स्थापयामि ॥

5-अश्विनी कुमार का आवाहन- ओं यावांकशामधुमत्यश्विना सूनृतावती। तया यज्ञं मिमिक्षतम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विभ्यां नमः अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि ॥

पौराणिक मन्त्रों से अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का आवाहन

1-सूर्य के दाहिने भाग में ईश्वर का स्थान होता है। इनका आवाहन इस प्रकार है-

एह्येहि विश्वेश्वर नस्त्रिशूल कपालखड्वांगधरेण सार्धम्।

लोकेश यज्ञेश्वर यज्ञसिद्ध्यै गृहाण पूजा भगवन्नमस्ते॥

ओं भूर्भुवः स्वः ईश्वराय नमः। ईश्वरं आवाहयामि स्थापयामि॥

2- चन्द्रमा के दक्षिण में उमा का स्थान होता है। इनका आवाहन इस प्रकार है-

हेमाद्रि तनयां देवीं वरदां शंकरप्रियाम्।

लम्बोदरस्य जननीमुमामावाहयाम्यहम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः उमायै नमः उमामावाहयामि स्थापयामि।।

3- मंगल के दक्षिण में स्कन्द का स्थान है उनका आवाहन इस प्रकार है-

रुद्रतेजः समुत्पन्नं देवसेनाग्रगं विभुम्।

षण्मुखं कृत्तिकासूनुं स्कन्दं आवाहयाम्यहम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः स्कन्दाय नमः स्कन्दं आवाहयामि स्थापयामि।।

4- बुध के दक्षिण में विष्णु का स्थान है। अतः आवहन इस प्रकार है-

देवदेवं जगन्नाथं भक्तानुग्रहकारकम्।

चतुर्भुजं रमानाथं विष्णुमावाहयाम्यहम्

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।।

5- बृहस्पति के दक्षिण में ब्रह्मा का स्थान होता है जिनका आवाहन इस प्रकार है-

ॐ कृष्णाजिनांबरधरं पद्मसंस्थं चतुर्मुखम्।

वेदाधारं निरालम्बं विधिमावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूभुर्वः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि।।

6- शुक्र के दक्षिण में इन्द्र का स्थान है इनका आवाहन इस प्रकार किया जाता है-

ओं देवराजं गजारूढ़ं शुनासीरं शतक्रतुम्।

वज्रहस्तं महाबाहुमिन्द्रमावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रं आवाहयामि स्थापयामि ।।

7- शनि के दक्षिण में यम का सथान होता है जिसका आवाहन इस प्रकार है-

ओं धर्मराजं महावीर्यं दक्षिणादिक्पतिं प्रभुम्।

रक्तेक्षणं महाबाहुं यममावाहयाम्यहम्।।

ओं भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यमं आवाहयामि स्थापयामि।।

8- राहु के दक्षिण में काल का स्थान होता है जिसका आवाहन इस प्रकार है-

ओं अनाकारमनन्ताख्यं वर्तमानं दिने दिने।

कलाकाष्ठादिरूपेण कालमावाहयाम्यहम्।।

ओं भूर्भुवः स्वः कालाय नमः कालं आवाहयामि स्थापयामि।।

9- केतु के दक्षिण में चित्रगुप्त का स्थान होता है जिसका आवाहन इस प्रकार है-

ओं धर्मराजसभासंस्थं कृताकृतविवेकिनम्।

आवाहये चित्रगुप्तं लेखनी पत्रहस्तकम्।।

ओं भूर्भुवः स्वः चित्रगुप्ताय नमः चित्रगुप्तमावाहयामि स्थापयामि।।

प्रत्यधिदेवतास्थापनम्

1-सूर्य के वाम भाग में अग्नि का आवाहन-

ॐ रक्तमाल्याम्बरधरं रक्तपद्मासनस्थितम्।

वरदाभयदं देवमग्निमावाहयाम्यहम्।।

ओं भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निम् आवाहयामि स्थापयामि।।

2- चन्द्रमा के वाम भाग में अप का आवाहन-

ओं आदिदेवसमुद्भूत जगत्छुद्धिकराः शुभाः।

औषध्याप्यायनकरा अप आवाहयाम्यहम्।।

ओं भूर्भुवः स्वः अद्भ्यो नमः अपः आवाहयामि स्थापयामि।।

3- मंगल के वाम भाग में पृथ्वी का आवाहन-

ॐ शुक्लवर्णां विशालाक्षीं कूर्मपृष्ठोपरिस्थिताम्।

सर्वशस्याश्रयां देवीं धरामावाहयाम्यम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः पृथिव्यै नमः पृथ्वीमावाहयामि स्थापयामि।।

4- बुध के वाम भाग में विष्णु का आवाहन-

ॐ शंखचक्रगदापद्महस्तं गरुड़वाहनम्।

किरीटकुण्डलधरं विष्णुमावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णुं आवाहयामि स्थापयामि।।

5-बृहस्पति के वाम में इन्द्र का आवाहन-

ॐ ऐरावत गजारूढ़ं सहस्राक्षं शचीपतिम्।

वज्रहस्तं सुराधीशमिन्द्रमावाहयाम्यहम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रं आवाहयामि स्थापयामि।।

6- शुक्र के वाम में इन्द्राणी का आवाहन-

ॐ प्रसन्नवदनां देवीं देवराजस्य वल्लभाम्।

नानालंकारसंयुक्तां शचीमावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राण्यै नमः**,** इन्द्राणीं आवाहयामि स्थापयामि।।

7- शनि के वाम में प्रजापति का आवाहन-

ॐ आवाहयाम्यहं देवदेवेशं च प्रजापतिम्।

अनेकव्रतकर्तारं सर्वेषां च पितामहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः प्रजापतये नमः प्रजापतिं आवाहयामि स्थापयामि।।

8- राहु के वाम भाग में सर्प का आवाहन-

ओं अनन्ताद्यान् महाकायान् नानामणिविराजितान्।

आवाहयाम्यहं सर्पान् फणासप्तकमण्डितान्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः सर्प्पेभ्यो नमः सर्पान् आवाहयामि स्थापयामि ।।

9- केतु के वाम भाग में ब्रह्मा का आवाहन-

ओं हंसपृष्ठसमारूढं देवतागणपूजितम्।

आवाहयाम्यहं देवं ब्रह्माणं कमलासनम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि ।।

विनायकादिपंचलोकपालानामावाहनम्

1- गणेश का आवाहन-

ॐ लम्बोदरं महाकायं गजवक्त्रं चतुर्भुजम्।

आवाहयामयहं देवं गणेशं सिद्धिदायकम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतये नमः गणपतिमावाहयामि स्थापयामि ।।

2- अम्बिका का आवाहन-

ॐ पत्तने नगरे ग्रामे विपिने पर्वते गृहे।

नानाजाति कुलेशानीं दुर्गामावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः दुर्गायै नमः दुर्गामावाहयामि स्थापयामि ।।

3- वायु का आवाहन-

ॐ आवाहयाम्यहं वायुं भूतानां देहधारिणम्।

सर्वाधारं महावेगं मृगवाहनमीश्वरम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुं आवाहयामि स्थापयामि।।

4- आकाश का आवाहन-

ॐ अनाकारं शब्दगुणं द्यावाभूम्यन्तरस्थितम्।

आवाहयाम्यहं देवमाकाशं सर्वगं शुभम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः आकाशाय नमः आकाशं आवाहयामि स्थापयामि ।।

5-अश्विनी कुमार का आवाहन-

ॐ देवतानां च भैषज्ये सुकुमारौ भिषक्वरौ।

आवाहयाम्यहं देवावश्निौ पुष्टिवर्द्धनम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विभ्यां नमः अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि ।।

इस प्रकार से आवाहन करके प्रतिष्ठा करनी चाहिये। क्योंकि बिना प्रतिष्ठा के पूजन नही हो पायेगा। इसलिये हाथ में अक्षत लेकर अधोलिखित मन्त्र पढ़ते हुये प्राण प्रतिष्ठा करनी चाहिये।

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च।

अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चनः।।

3.4 अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का वैदिक विधि से पूजन

अब आप अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों के पूजन का विधान देखेगें।

आसनम्- पूजन में सर्वप्रथम आवाहन किया जाता है जो आप देख चुके है। आवाहन के अनन्तर आसन दिया जाता है। आसन हेतु हाथ में अक्षत लेकर दिये वैदिक मन्त्र को पढ़ते है और अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों के ऊपर अक्षत छोड़ते है।

ओं पुरुषऽएवेद गुं सर्व्वं यद भूतं यच्च भाव्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्ने नातिरोहति।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि।।

पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयं जलम्- आसन के बाद पाद्य, अर्घ्य एवं आचमन का जल चढ़ाया जाता है। इसमें पाद्य अर्थात् पाद प्रक्षालनार्थ जल, हस्त प्रक्षालनार्थ अर्घ्य, मुख प्रक्षालन हेतु आचमनीय का जल, स्नान हेतु स्नानीय जल एवं पुनः आचमन का जल इस प्रकार चढ़ाना चाहिये । ततः पादयोः पाद्यं हस्तयोरर्घ्यं आचमनीयं जलं -देवस्यत्वा सवितुः

प्रसवेश्विनोर्बाहुभ्याम्पूष्णोहस्ताभ्याम् ॥ श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः एतानि पाद्यार्घ्याचमनीयस्नानीय पुनराचमनीयानि समर्पयामि ॥

अब दूध, दही, घी, शहद एवं शक्कर को एक में मिलाकर पंचामृत बनाया जाता है । इससे स्नान कराया जाता है। कहीं कहीं पृथक्- पृथक् स्नान भी कराया जाता है । आचार्य याज्ञवल्क्य के अनुसार प्रत्येक स्नान में आचमनीय जल देना अति आवश्यक है -

पंचामृतस्नानम्- ओं पंचनद्यः सरस्वतीमपियन्ति सस्रोतसः सरस्वती तु पंचधा सो देशेभवत्सरित्॥ श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः पंचामृतस्नानं समर्पयामि आचमनीयं जलं समर्पयामि॥

पंचामृत स्नान के बाद शुद्धोदक स्नान जल से कराया जाता है।

ततः शुद्धोदकस्नानम्- शुद्धवालः सर्व्वशुद्धवालो मणिवालस्तऽआश्विनाः। श्येतः श्येताक्षोरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्ण्णायामाऽअवलिप्ता रौद्रानभो रूपाः पार्ज्जन्न्याः॥ शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः॥ स्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि॥

स्नान के अनन्तर वस्त्र चढ़ाया जाता है। वस्त्र में पुरुष देवता के लिये पुरुष वस्त्र एवं स्त्री देवता के लिये स्त्री वस्त्र चढ़ाया जाता है। इसके अभाव में मांगलिक सूत्र ही चढ़ा दिया जाता है।

वस्त्रम्- ओ युवा सुवासाः परिवीतऽ आगात्सऽउश्रेयान्भवति जायमानः। तं धीरासः कवयऽ उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयंतः॥ शीतवातोष्ण संत्राणं लज्जाया रक्षणं परम्। देहालंकरणं वस्त्रमतः शान्तिं प्रयच्छ मे। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः वस्त्रं समर्पयामि वस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि॥

वस्त्र के अनन्तर आचमनीय जल चढ़ाकर यज्ञोपवीत चढ़ाया जाता है।

यज्ञोपवीतम्- ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्। आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुंचशुभ्रं

यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमःयज्ञोपवीतं समर्पयामि तदन्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

उपवस्त्र का मतलब होता है उत्तरीय वस्त्र। उत्तरीय वस्त्र हेतु जो आवश्यक उपवस्त्र हो उसे चढ़ाना चाहिये या रक्षा सूत्र चढ़ाना चाहिये।

उपवस्त्रम्- ओं सुजातो ज्योतिषा सह शर्म्म वरुथ मासदत्स्वः।। व्वासो ऽअग्ने विश्वरूप गुं संव्ययस्व व्विभावसो।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः उपवस्त्रं समर्पयामि उपवस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

उवपस्त्र के अनन्तर चन्दन को गन्ध के रूप में चढ़ाते है। चन्दन के अभाव में रोली भी चढ़ा सकते है।

गन्धम्- ओं त्वांगन्धर्वाऽ अँखनसूँत्वा मिन्द्रस्त्वाम्बृहस्पतिः।। त्वामोषधे सोमोराजा व्विद्वान्न्यक्ष्मादमुच्चत।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि।

गन्ध के बाद अक्षत चढ़ाने का विधान है।

अक्षतान्- ओं अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रियाऽ अधूषत। अस्तोषत स्वभानवो व्विप्प्रा न विष्ठया मतीयोजान्विद्रतेहरी।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः अक्षतान् समर्पयामि।।

इसके बाद फूलों की गुथी हुयी माला चढ़ाने का विधान मिलता है।

पुष्पमालाम्- ओं ओषधीः प्रतिमोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः अश्वा इव सजीत्वरीर्व्विरुधः पारयिष्णवः। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः पुष्पमालां समर्पयामि।।

दूर्वाङ्कुरान्-ओं काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि। एवानो दूर्व्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः दूर्वाङ्कुरान् समर्पयामि।।

सौभाग्य सिन्दूरम्-ओ सिन्धोरिव प्प्राद्ध्वने शूघनासो व्वातप्प्रमियः पतयन्तियह्नाः। घृतस्यधाराऽ

अरुषो न व्वाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः सौभाग्यसिन्दूरं समर्पयामि।

नाना परिमल द्रव्य में अबीर गुलाल, अभ्रक, मेहदी चूर्ण, हल्दी चूर्ण इत्यादि को चढ़ाया जाता है। नानापरिमलद्रव्याणि- ओं अहिरिवभोगैः पर्य्येतिबाहुंज्यायाहेतिं परिबाधमानः। हस्तघ्नो विश्वा व्वयुनानि व्विद्वान्पुमान्पुमा गुं सं परिपातु विश्वतः।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

दिये जाने वाले नैवेद्य प्रसाद को देवता के सामने रखकर धूप एवं दीप घण्टी वादन पूर्वक देना चाहिये। नैवेद्यं पुरतः संस्थाप्य धूपदीपौ च देयौ- घण्टीवादनपूर्वकं धूपम्- ओं धूरसि धूर्व्व धूर्व्वन्तं धूर्वतं योऽ स्मान्धूर्वतितं धूर्व्वयं व्वयं धूर्व्वामः। देवानामसि व्वन्हितम् गुं सस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमन्देव हूतमम्।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः धूपमाघ्रापयामि।।

इसके बाद दीपक दिखाना चाहिये-

दीपम्-ओं अग्निर्ज्योति र्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्योज्योतिर्ज्योतिः सूर्य्यः स्वाहा । अग्नि र्व्वर्च्चो ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा सूर्य्यो व्वर्च्चो ज्योति र्व्वर्च्चः स्वाहा । ज्योतिः सूर्य्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः दीपं दर्शयामि ।। हस्तौ प्रक्षाल्य । दीप दिखाकर हस्त प्रक्षालन करके नैवेद्य चढ़ाना चाहिये। नैवेद्य चढ़ाकर ध्यान करके आचमनीय का जल पांच बार प्रदान किया जाता है ।

नैवेद्यम् - ओं नाभ्याऽ आसीदन्तरिक्ष गुं शीर्ष्णोद्यौः समवर्त्तत । पद्भ्यां भूमिर्द्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँऽ अकल्पयन् ।। नैवेद्यं निवेदयामि।। नैवेद्यान्ते ध्यानम् ।। ध्यानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि मुद्रां च प्रदर्श्य ओं प्राणाय स्वाहा ।। ओं अपानाय स्वाहा ।। ओं व्यानाय स्वाहा ।। ओं उदानाय स्वाहा ।। ओं समानाय स्वाहा ।। आचमनीयं मध्येपानीयं उत्तरापोशनं जलं समर्पयामि । श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

चन्दन से करोद्वर्तन करने का नियम है।

करोद्वर्तनम्-ओं अ गुं शुनाते अ गुं शुः पृच्यतां परुषांपरुः। गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसोऽ अच्युतः।। चन्दनेन करोद्वर्तनं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

इसके बाद फल प्रदान करते है। फल से मतलब सभी प्रकार के फलों से है। इसमें ऋतुफल एवं अखण्डऋतुफल दोनों आता है। अखण्ड ऋतुफल का मतलब सभी ऋतुओं में पाया जाने वाला फल है।

फलानि-ओं याः फलिनीर्य्याऽ अफलाऽ अपुष्पायाश्च पुष्पिणीः। बृहस्पति प्रसूतास्ता नो मुंचन्त्व गुं हसः।। इमानि फलानि नारिकेलंच समर्पयामि।।

इसके बाद ताम्बूल पत्र लवंग इलायची के साथ मुख सुगन्धी के लिये समर्पित करना चाहिये।

ताम्बूलपत्रं लवंग एलादिकं च- ओं यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत। व्वसन्तो स्यासी दाज्यङ्ग्रीष्मऽ इध्मः शरद्धविः।। मुखवासार्थे पूंगीफलताम्बूलपत्रं लवंग एलादिकंच समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

इसके अनन्तर पूजनीय द्रव्यों में कोई कमी रह गयी हो तो उस कमी को पूरा करने के लिये दक्षिणा चढ़ाने का विधान है।

ततो द्रव्यदक्षिणा-ओं हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽ आसीत्। सदाधार पृथिवीन्द्या मुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।। कृतायाः पूजायाः सदुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

इसके बाद आरती करना चाहिये।

आरार्तिक्यम् - इद गुं हविः प्रजननम्मे ऽअस्तु दशव्वीर गुं सर्व्वगण गुं स्वस्तये । आत्मशनि प्प्रजाशनि पशुशनि लोकसन्न्यभयसनि। अग्निः प्रजाम्बहुलाम्मे करोत्वन्नं पयोरेतोऽ अस्मासु धत्त।।

आ रात्रि पार्थिव गुं रजः पितुर प्रायिधामभिः। दिवः सदा गुं सि वृहती व्वितिष्ठस ऽआत्वेषं वर्त्तते तमः॥ कर्पूरनीराजनं समर्पयामि ॥

तदनन्तर हाथ में पुष्प लेकर पुष्पांजलि देना चाहिये-

मन्त्रपुष्पांजलिः- ऊँ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्रथमान्यासन्न्। तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्व्वे साध्याः सन्ति देवाः॥ मन्त्रपुष्पांजलिं समर्पयामि॥ श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः॥

प्रदक्षिणा- ऊँ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृका हस्ता निषंगिणः॥ तेषा गुंसहस्र योजनेव धन्वानि तन्मसि॥ प्रदक्षिणापूर्वक नमस्कारान् समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः॥

हस्ते जलमादाय अनया पूजया अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपाल देवता प्रीयन्तां न मम॥

3.5 सारांश -

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि नवग्रहों के रूप में सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु एव केतु होते हैं। इन नवों ग्रहों के दक्षिण अधि देवता एवं बाम भाग में प्रत्यधि देवता विराजित होते हैं। नवग्रहों में शुक्र एवं सूर्य का मुख पूर्व की ओर होता है। बुध एवं गुरु का मुख उत्तर की ओर होता है। सोम एवं शनि का मुख पश्चिम की ओर तथा शेष ग्रहों का मुख दक्षिण की ओर होता है। इस स्थिति पर विचार करना चाहिये। कोई व्यक्ति यदि पूर्व की ओर मुख करके खड़ा है तो उसका दाहिना जिधर होगा उधर पश्चिम की ओर मुख करके खड़े हुये व्यक्ति का नही होगा। ठीक उसी प्रकार उत्तर की ओर मुख करके खडे हुये व्ययक्ति का दहिना बाया भाग जिस ओर होगा दक्षिण की ओर मुख किये व्यक्ति का दायां बाया भाग उससे विपरीत होगा। इस लिये अधि देवता एवं प्रत्यधि देवता के स्थापन में हमें सावधानी पूर्वक ग्रहों के मूख का ज्ञान रखना होता है तभी हमें अधि एवं प्रत्यधि देवताओं की स्थापना सम्यक् तरीके से हो पाती है। ईश्वर, उमा, स्कन्द्र, विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र, यम, काल एवं चित्रगुप्त ये अधिदेवता कहे गये है। अग्नि, अप, धरा, विष्णु, इन्द्र, ऐन्द्री, प्रजापति, सर्प एवं ब्रह्मा प्रत्यधि देवता होते हैं।

3.6 शब्दावली-

नवग्रह – सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, गुरू, शुक्र, शनि, राहु एवं केतु।

अधिदेवता - नवग्रहों के दक्षिण में स्थित देवता को अधिदेवता कहते है।

प्रत्यधिदेवता – नवग्रहों के वाम भाग में स्थित प्रत्यधिदेवता।

विघ्नेश्वर - विघ्न को हरने वाले ईश्वर।

आवाहयामि – आवाहन करता हूँ

पूजयामि – पूजन करता हूँ।

च – और

सद्गुण – अच्छा गुण।

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. ख
3. क
4. ख
5. क

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1- कर्मकाण्ड प्रदीप

2- संस्कार दीपक

3. नित्यकर्मपूजाप्रकाश

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. अधिदेवता का परिचय दीजिये ।
2. अधिदेवता एवं प्रत्यधिदेवताओं का वैदिक मन्त्रों से पूजन विधान का लेखन कीजिये ।
3. पंचलोकपाल का वैदिक विधि से पूजन लिखिये।
4. कर्मकाण्ड प्रक्रिया में अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता एवं पंचलोकपाल का महत्व निरूपण कीजिये।

इकाई - 4 वास्तोष्पत्ति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पाल पूजन

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3. वास्तोष्पत्ति एवं क्षेत्रपाल
4.4 दश दिक्पाल पूजन
4.5 सारांश
4.6 शब्दावली
4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना-

प्रस्तुत इकाई सी0वी0के – 01 के तृतीय खण्ड की चौथी इकाई 'वास्तोष्पत्ति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पाल पूजन' से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता, एवं पंचलोकपाल का ज्ञान प्राप्त कर लिया है। आइए अब इस इकाई में वास्तोष्पत्ति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पाल पूजन का अध्ययन करते है।

कर्मकाण्ड में अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता एवं पंचलोकपाल पूजन के पश्चात् वास्तोष्पत्ति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पाल पूजन का स्थान आता है। इनके पूजन विधान का ज्ञान आप इस इकाई में करेंगे।

इस इकाई के अध्ययन से आपकों वास्तोष्पत्ति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्तपाल का भली – भॉति ज्ञान हो जायेगा।

4.2 उद्देश्य-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- ❖ वास्तोष्पत्ति पूजन विधान समझ लेंगे ।
- ❖ क्षेत्रपाल पूजन कैसे किया जाता है, बता सकेगें ।
- ❖ दश दिक्पाल पूजन क्रम को समझा सकेगें।
- ❖ इनका पूजन क्रम बता सकेंगे।
- ❖ कर्मकाण्ड में वास्तोष्पत्ति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पाल पूजन महत्व को समझा सकेंगे।

4.3 वास्तोष्पत्ति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पाल पूजन

वास्तोष्पति एवं क्षेत्रपाल का परिचय

नवग्रह मण्डल पर वास्तोष्पति एवं क्षेत्रपाल की स्थापना की जाती है। इन दोनों देवताओं को नवग्रह मण्डल पर अंग देवता के रूप में जाना जाता है। वास्तोष्पति को 'वास्तु देवता' भी कहा जाता है। निरुक्तकार महर्षि यास्क ने इसकी व्याख्या करते हुये कहा है कि ''वासतुर्वसतेर्निवास कर्मणः।' अर्थात् जहॉ हम निवास करते हैं वहॉ वास्तु देवता का वास होता है। इसीलिये जब किसी नवीन ग्रह में प्रवेश करते हैं तो वहॉ वास्तु पूजन कराते है। जब हम किसी नवीन भवन के प्रारम्भ का उद्घाटन करते है तो वहॉ भी वास्तु पूजन कराने का विधान है। परन्तु इन स्थानों पर जो वास्तु शान्ति करायी जाती है वह नवग्रह के वास्तोष्पति से भिन्न होती है क्योकि वहॉ अलग से वास्तुमण्डल बनाकर पूजन किया जाता है। यहॉ अर्थात् नवग्रह मण्डल पर एक स्थान पर वास्तोष्पति के रूप में अक्षत पुंज को रखा जाता है और उनकी पूजा की जाती है। वास्तु के आवाहन मन्त्र के रूप में वास्तोष्पते

प्रतिजानीह्यस्मान्स्वावेशो अनमीवो भवा नः। यत्वेमहे प्रतितन्नो जुषस्व शं न्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे। मन्त्र को जाना जाता है।

क्षेत्रपाल के परिचय में भी यह बतलाया गया है कि क्षेत्र के स्वामी को 'क्षेत्राधिपति' कहते है। ये देवता समस्त क्षेत्रों से हमारी रक्षा करते है। क्षेत्रपाल के ध्यान का यह श्लोक अत्यन्त महत्वपूर्ण है जो इस प्रकार है-

नमो वै क्षेत्रपालस्त्वं भूतप्रेतगणैस्सह। पूजा बलिं गृहाणेम सौम्यो भवति सर्वदा।
पुत्रान्देहिधनं देहि सर्वान्कामांश्च देहि मे। आयुरारोग्य मे देहि निर्विघ्नं कुरु सर्वदा।।

इसमें यह स्पष्ट रूप से बतलाया गया है कि भूत प्रेत गणों के साथ क्षेत्रपाल जी रहते है इसलिये उनको इन गणों के साथ नमस्कार है। मेरे द्वारा दी गयी पूजा एवं बलि को ग्रहण करें और हमारे प्रति सौम्य रहे। मुझे पुत्र, धन एवं सभी कामनाओं को दे और आयु एवं आरोग्य को प्रदान करे तथा हमारे सारे कार्य निर्विघ्न सम्पन्न करें। वैसे तो क्षेत्रपाल का पृथक् मण्डल बनाया जाता है तो एकोनपंचाशत् यानी उन्चास या एकपंचाशत् अर्थात् इक्यावन देवता होते है। परन्तु यहॉ एक ही स्थान पर अक्षत पुंज रखकर क्षेत्रपाल का आवाहन किया जाता है।

इस प्रकार से वास्तोष्पति एवं क्षेत्रपाल देवता को नवग्रह मण्डल पर अंग देवता के रूप में स्वीकार किया गया है। पृथक् मण्डल बनाये जाने पर एवं पूजित होने पर भी इनका नवग्रह मण्डल पर पूजन किया ही जाता है।

दश दिक्पालों का परिचय-

इससे पूर्व में आपने वास्तोष्पति एवं क्षेत्रपाल के विषय में परिचय प्राप्त किया। अब हम इस प्रकरण में दश दिक्पालों के विषय में ज्ञान प्राप्त करने जा रहे हैं। दश दिक्पाल को विच्छेदित करने पर तीन भागों में उसका विभाजन देखने को मिलता है जो दश, दिक् और पाल है। दश का अर्थ दश संख्या, दिक् का अर्थ दिशायें एवं पाल का अर्थ है पालने वाला अर्थात् दसों दिशाओं से हमारा पालन करने वाला दश दिक्पाल कहलाता है। अब प्रश्न उठता है कि ये दशो दिशायें कौन है? क्योंकि चार दिशा पूर्व, पश्चिम, उत्तर एवं दक्षिण को तो हम जानते है। हम यह भी जानते है कि चार विदिशा यानी अग्नि कोण, नैर्ऋत्य कोण, वायव्य कोण एवं ईशान कोण है। लेकिन फिर कुल मिलाकर आठ ही हुआ। अभी दो और दिशायें बाकी हैं जिन्हे ऊपर और नीचे के रूप में जानते है। एक प्रश्न और यहां खड़ा होता है कि ऊपर और नीचे दो दिशायें हैं तो उनके स्वामिओं को नवग्रह मण्डल पर कैसे दिखाया जायेगा? इसका उत्तर देते हुये बतलाया गया है पूर्व एवं ईशान के बीच में आकाश का स्थान

एवं नैर्ऋत्य पश्चिम के बीच में पाताल का स्थान नवग्रह मण्डल पर होता है । इस प्रकार उनके स्वामिओं को वहां दिखाया जा सकता है। अब क्रमशः दिशाओं के अधिपतियों का नाम इस प्रकार जाना जा सकता है।

इन्द्रोवह्निपितृपतिनैर्ऋतोवरुणोमरुत् । कुबेरईशोब्रह्मा च अनन्तो दश दिक्पतिः।।

इसको यदि और स्पष्ट किया जाय तो इस प्रकार कहा जा सकता है। पूर्व दिशा का स्वामी इन्द्र है। आग्नेय कोण का स्वामी अग्नि है। दक्षिण दिशा का स्वामी यम है। नैर्ऋत्य कोण का स्वामी निर्ऋति है। पश्चिम दिशा का स्वामी वरुण है। वायव्य कोण का स्वामी वायु है। उत्तर दिशा का स्वामी कुबेर है। ईशान कोण का स्वामी ईशान है। पूर्व एवं ईशान के बीच का स्वामी ब्रह्मा है तथा पश्चिम एवं नैर्ऋत्य के बीच का स्वामी अनन्त है । अब हम इन दिक्पालों के स्वरूपों की चर्चा करेगें जिससे इनका परिचय और प्रगाढ़ हो जायेगा।

1- **इन्द्र का स्वरूप-**

चतुर्दन्तगजारूढ़ो वज्री कुलिशभृत्करः। शचीपति प्रकर्तव्यो नानाभरणभूषितः।।

इन्द्र के स्वरूप का वर्णन करते हुये कहा गया है कि चार दांतों वाले हाथियों पर इन्द्र विराजमान है। इन्द्र के हाथी का नाम ऐरावत है। वज्र एवं ठाल हाथों में लिये हुये हैं। शची के पति हैं तथा विभिन्न प्रकार के आभूषणों से विभूषित है।

2- अग्नि का स्वरूप- दूसरे दिक्पाल के रूप में अग्नि को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

पिंगलशमश्रुकेशाक्षः पीनांगोजवरो अरुण। छागस्थः साक्षसूत्रोग्निः सप्तार्चिः शक्तिधारकः।।

अर्थात् पिंगल वर्ण की मूछें, पिंगल वर्ण के केश एवं पिंगल वर्ण की आंखें है। अग्नि का अंग पीनांग है, इनके अंगों से तीव्र तेज लाल स्वरूप में निकलता रहता है। छाग अग्नि देवता का वाहन हैं। अक्ष माला एवं सूत्र धारण किया हुआ है। सात जिह्वाओं वाला इनका मुख है और शक्ति को धारण करने वाले ये देवता है।

3- यम का स्वरूप- तीसरे दिक्पाल के रूप में यम को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

ईषन्नीलो यमः कार्यो दण्डहस्तो विजानता। रक्तदृक्पाशहस्तश्च महामहिषवाहनः।

अर्थात् थोड़ा नीला लिये हुये काला यम का स्वरूप है। इनको दण्ड हाथ में लिये हुये जाना जाता है। लाल-लाल इनकी आंखे है, हाथों में पाश लिये हुये हैं। इसी पाश से ये मनुष्यों को खीचकर लाते हैं।

महा महिष के वाहन पर विराजते है।

4- निर्ऋति का स्वरूप- चौथे दिक्पाल के रूप में निर्ऋति को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

खड्गचर्मधरोबालो निर्ऋतिर्नरवाहनः । ऊर्ध्वकेशो विरूपाक्षः करालः कालिकाप्रियः ।।

निर्ऋति के बारे में बतलाया गया कि तलवार और ठाल धारण किये हुये नर के वाहन पर सवार, सदा ऊर्ध्व केश रखने वाले विरूप अक्षों वाले किराल स्वरूप वाले कालिका के प्रिय निर्ऋति देवता है।

5- वरुण का स्वरूप- पांचवें दिक्पाल के रूप में वरुण को जाना जाता है । इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है -

नागपाशधरो रक्तभूषणः पद्मिनीपतिः । वरुणो अंबुपतिः स्वर्णवर्णो मकरवाहनः ।।

अर्थात् नागों के पाश को धारण करने वाले, लाल आभूषण धारण करने वाले, पद्मिनी के पति वरुण देवता जल के स्वामी है और स्वर्ण वर्ण वाले है तथा मकर के वाहन पर विराजमान है ।

6- वायु का स्वरूप- छठवें दिक्पाल के रूप में वायु को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है -

धावद्धरणिपृष्ठस्थो ध्वजधारी समीरणः। वरदानकरो धूम्रवर्णः कार्यो विजानता।।

अर्थात् धरणिपृष्ठ यानी भूमि के ऊपर वायु देवता दौड़ते रहते हैं। वायु देवता ध्वज धारण किये रहते हैं। वरदान करने वाले धूम्रवर्ण के रूप में इनको जाना जाता है।

7- कुबेर का स्वरूप- सातवें दिक्पाल के रूप में कुबेर को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

नरयुत पुष्पकविमानस्थं कुण्डलकेयूरहारविभूषितं वरदगदाधरदक्षिणवामहस्तं मुकुटिनं महोदरं स्थूलकायं ह्रस्व पिंगलनेत्रं पीतविग्रहं शिवसखं विमानस्थं कुबेरं ध्यायेत्।

अर्थात् मनुष्य के स्वरूप वाले पुष्पक विमान पर स्थित, कुण्डल एवं केयूर हार से विभूषित, वरद मुद्रा एवं गदा धारण करने वाले, मुकुट पहने हुये, बड़े पेट वाले, स्थूल शरीर वाले, छोटे-छोटे पिंगल नेत्रों वाले, पीले विग्रह को धारण करने वाले शिव के सखा कुबेर का स्वरूप है।

8- ईशान का स्वरूप- आठवें दिक्पाल के रूप में ईशान को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

एह्येहि विश्वेश्वरनस्त्रिशूलकपालखड्वांगधरेणसार्द्धम्।
लोकेन यज्ञेश्वर यज्ञसिद्ध्यै गृहाणपूजां भगवन्नमस्ते।।

अर्थात् विश्वेश्वर के रूप में जाने जाने वाले, कपाल एवं खट्वांग धारण करने वाले, लोक के यज्ञ के सिद्धि के लिये पूजा ग्रहण करने वाले है। इनको नमस्कार है।

सर्वाधिपो महादेव ईशानो शुक्ल ईश्वरः। शूलपाणिर्विरूपाक्षः तस्मै नित्यं नमो नमः।।

इसे भी ईशान का स्वरूप बतलाया गया है।

9- ब्रह्मा का स्वरूप- नवें दिक्पाल के रूप में ब्रह्मा को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

पद्मासनस्थो जटिलो ब्रह्माकार्यश्चतुर्मुखः। अक्षमाला स्रुवं विभ्रत्पुस्तकं च कमण्डलुम्।।

अर्थात् ब्रह्मा कमल के आसन पर विराजमान, जटा धारण किये हुये, चार मुखों वाले, रुद्राक्ष की माला धारण किये हुये, स्रुव , पुस्तक एवं कमण्डल धारण किये हुये है।

10- अनन्त का स्वरूप- दसवें दिक्पाल के रूप में अनन्त को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

अनन्तं शमनासीनं फणसप्तकमण्डितम्।।

योसावनन्तरूपेण ब्रह्माण्डं सचराचरं। पुष्पवद्धारयेनमूर्ध्नी तस्मै नित्यं नमो नमः।।

अनन्त सात फणों वाले है। पृथ्वी को इस प्रकार धारण किये रहते है जैसे कोई पुष्प धारण किया रहता है।

अभ्यास प्रश्न –

1. वास्तोष्पत्ति को भी कहा जाता है –
   क. वास्तु देवता ख. दिक्पाल ग. वास्तु घ. क्षेत्रपाल
2. दिक्पालों में प्रथम दिक्पाल का नाम क्या है –
   क. इन्द्र ख. वरूण ग. अग्नि घ. यम
3. निम्नलिखित में उत्तर दिशा के स्वामी कौन है –
   क. यम ख. कुबेर ग. इन्द्र घ. सूर्य
4. निरूक्त के रचयिता है –
   क. कणाद ख. यास्क ग. च्यवन घ. जैमिनि
5. क्षेत्र का स्वामी कहलाता है –
   क. क्षेत्रपाल ख. दिगपाल ग. दिक्पाल घ. कोई नहीं

वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों का वैदिक मन्त्रों से आवाहन -

नवग्रह मण्डल पर पंचलोकपालों के आवाहन के अनन्तर वास्तोष्पति का आवाहन किया जाता है। जिसका मन्त्र इस प्रकार है-

1- वास्तोष्पति के आवाहन का मन्त्र-

ॐ वास्तोष्पतेप्रतिजानीह्यस्मान्स्वावेशो ऽअनमीवोभवानः । यत्वेमहे प्रतितन्नो जुषस्वशन्नोभव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः वास्तोष्पतये नमः वास्तोष्पतिं आवाहयामि स्थापयामि ॥

2- क्षेत्रपाल के आवाहन का मन्त्र- ॐ नहिस्पशमविदन्नन्यमस्माद्वैश्वानरात्पुर ऽ एतारमग्नेः॥ एमेनमवृधन्नमृता ऽअमर्त्यंवैश्वानरं क्षेत्रजित्यायदेवाः॥ ॐ भूर्भुवः स्वः क्षेत्राधिपतये नमः॥ क्षेत्राधिपतिं आवाहयामि स्थापयामि॥

मण्डल से बाहर दश दिक्पालों का आवाहन करना चाहिये जो इस प्रकार है।

मण्डलाद्बाह्ये दशदिक्पिालानामावाहनम्

1- इन्द्र का आवाहन-

ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्र गुं हवे हवे सुहव गुं शूरमिन्द्रम्। ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्र गुं स्वस्तिनोमघवाधात्विन्द्रः॥ ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रं आवाहयामि स्थापयामि॥

2- अग्नि का आवाहन-

ॐ त्वं न्नो अग्ने तवदेवपायुभिर्मघोनोरक्षतन्वश्चवन्द्य। त्रातातोकस्य तनये गवामस्य निमेष गुं रक्षमाणस्तवव्रते ॥ ॐ भूर्भुव: स्वः अग्नये नमः ॥ अग्निम् आवाहयामि स्थापयामि ॥

3- यम का आवाहन-

ॐ यमाय त्वां गिरस्वते पितृमते स्वाहा। स्वाहा घर्म्माय स्वाहा घर्मः पित्रे। ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यमं आवाहयामि स्थापयामि॥

4- निर्ऋति का आवाहन-

ॐ असुन्वन्त मयजमानमिच्छस्तेनस्येत्यामन्विहि तस्करस्य। अन्यमस्मदिच्छसात इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु ॥ ॐ भूर्भवः स्वः निर्ऋतये नमः निर्ऋतिं आवाहयामि स्थापयामि ॥

5- वरुण का आवाहन-

ॐ तत्वायामि ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्ब्भिः। अहडमानो वरुणेह बोध्युरुश गुं समान आयुः प्रमोषीः॥ ॐ वरुणाय नमः वरुणं आवाहयामि स्थापयामि ॥

6- वायु का आवाहन-

ॐ आनो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वर गुं सहस्त्रिणी भिरुपयाहि यज्ञम्। व्वायोऽअस्मिन्सवने मादयस्वयूयम्पात स्वस्तिभिः सदा नः॥ ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुं आवाहयामि स्थापयामि॥

7- कुबेर का आवाहन-

ॐ उपयामगृहीतो अस्यश्विभ्यां त्वा सरसवत्यै त्वेन्द्राय त्वा सुत्राम्ण। एष ते योनिस्तेजसे त्वा वीर्याय त्वा॥ ऊँ भूर्भुवः स्वः कुबेराय नमः कुबेरं आवाहयामि स्थापयामि॥

8- ईशान का आवाहन-

ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिन्धियन्जिन्वमवसे हूमहे व्वयम्। पूषानो यथा व्वेद सामद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः ईशानाय नमः ईशानं आवाहयामि स्थापयामि॥

9- ब्रह्मा का आवाहन-

ॐ अस्मै रुद्रा मेहना पर्व्वतासो वृत्रहत्यै भरहूतौ सजोषाः। यः श गुं सते स्तुवते धायि पज्ज्र ऽ इन्द्र ज्येष्ठा ऽ अस्माऽ **2** ऽ अवन्तु देवाः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि॥

10- अनन्त का आवाहन-

ॐ स्योनापृथिवीनोभवानृक्षरानिवेशनी। यच्छाः नः शर्म्म सप्रथाः॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्ताय नमः अनन्तं आवाहयामि स्थापयामि ॥

इस प्रकार आवाहन करके प्राण प्रतिष्ठा अधोलिखित मन्त्रों से करनी चाहिये-

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च॥ अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन॥ ॐ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टं यज्ञ गुं समिमन्दधातु ॥ विश्वेदेवास इहमादयन्तामों **3** प्रतिष्ठ॥ ॐ सूर्यादि अनन्तान्तदेवताः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु ॥

इस प्रकार से वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों का वैदिक मन्त्रों से आवाहन किया जाता है।

वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों का वैदिक मन्त्रों से पूजन -

अब हम वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों का वैदिक मन्त्रों से पूजन की विधि बताने जा रहे है। जो इस प्रकार है-

आसनम्- पूजन में सर्वप्रथम आवाहन किया जाता है जो आप देख चुके है। आवाहन के अनन्तर आसन दिया जाता है। आसन हेतु हाथ में अक्षत लेकर दिये वैदिक मन्त्र को पढ़ते है और वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों के ऊपर अक्षत छोड़ते है।

ॐ पुरुषऽएवेद गुं सर्व्वं यदभूतं यच्च भाव्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्ने नातिरोहति॥

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि॥

पद्यं अर्घ्यं आचमनीयं जलम्- आसन के बाद पाद्य, अर्घ्य एवं आचमन का जल चढ़ाया जाता है। इसमें पाद्य अर्थात् पाद प्रक्षालनार्थ जल, हस्त प्रक्षालनार्थ अर्घ्य, मुख प्रक्षालन हेतु आचमनीय का जल, स्नान हेतु स्नानीय जल एवं पुनः आचमन का जल इस प्रकार चढ़ाना चाहिये।

ततः पादयोः पाद्यं हस्तयोरर्घ्यं आचमनीयं जलं - ॐ देवस्यत्वा सवितुः प्रसवेश्विनोर्बाहुभ्याम्पूष्णोहस्ताभ्याम्।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः एतानि पाद्यार्घ्याचमनीयस्नानीय पुनराचमनीयानि समर्पयामि।।

अब दूध, दही, घी, शहद एवं शक्कर को एक में मिलाकर पंचामृत बनाया जाता है। इससे स्नान कराया जाता है। कहीं-कहीं पृथक्- पृथक् स्नान भी कराया जाता है। आचार्य याज्ञवल्क्य के अनुसार प्रत्येक स्नान में आचमनीय जल देना अति आवश्यक है

पंचामृतस्नानम्- ॐ पंचनद्यः सरस्वतीमपियन्ति सस्रोतसः सरस्वती तु पंचधा सो देशेभवत्सरित्।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः पंचामृतस्नानं समर्पयामि आचमनीयं जलं समर्पयामि।।शुद्धोदक स्नान जल से कराया जाता है।

ततः शुद्धोदकस्नानम्- ॐ शुद्धवालः सर्व्वशुद्धवालो मणिवालस्तऽआश्विनाः। श्येतः श्येताक्षोरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्ण्णायामाऽअवलिप्ता रौद्रानभो रूपाः पार्ज्जन्न्याः।। शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।। स्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

स्नान के अनन्तर वस्त्र चढ़ाया जाता है। वस्त्र में पुरुष देवता के लिये पुरुष वस्त्र एवं स्त्री देवता के लिये स्त्री वस्त्र चढ़ाया जाता है। इसके अभाव में मांगलिक सूत्र ही चढ़ा दिया जाता है।

वस्त्रम्- ॐ युवा सुवासाः परिवीतऽ आगात्सऽउश्रेयान्भवति जायमानः। तं धीरासः कवयऽ उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयंतः।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः वस्त्रं समर्पयामि वस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

वस्त्र के अनन्तर आचमनीय जल चढ़ाकर यज्ञोपवीत चढ़ाया जाता है।

यज्ञोपवीतम्- ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्। आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुंचशुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि तदन्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

उपवस्त्र का मतलब होता है उत्तरीय वस्त्र। उत्तरीय वस्त्र हेतु जो आवश्यक उपवस्त्र हो उसे चढ़ाना चाहिये या रक्षा सूत्र चढ़ाना चाहिये।

उपवस्त्रम्- ॐ सुजातो ज्योतिषा सह शर्म्म वरुथ मासदत्स्वः।। व्वासो ऽअग्ने विश्वरूप गुं संव्ययस्व व्विभावसो।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः उपवस्त्रं समर्पयामि उपवस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

उवपस्त्र के अनन्तर चन्दन को गन्ध के रूप में चढ़ाते है। चन्दन के अभाव में रोली भी चढ़ा सकते है।

गन्धम्- ॐ त्वांगन्धर्वाऽ अँखनसूँत्वा मिन्द्रस्त्वाम्बृहस्पतिः।। त्वामोषधे सोमोराजा व्विद्वान्न्यक्ष्मादमुच्चत।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि।

गन्ध के बाद अक्षत चढ़ाने का विधान है ।

अक्षतान्- ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रियाऽ अधूषत। अस्तोषत स्वभानवो व्विप्प्रा न विष्ठया मतीयोजान्विद्रतेहरी।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः अक्षतान् समर्पयामि ।।

इसके बाद फूलों की गुथी हुयी माला चढ़ाने का विधान मिलता है।

पुष्पमालाम्- ॐ ओषधीः प्रतिमोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः अश्वा इव सजीत्वरीर्व्विरुधः पारयिष्णवः। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः पुष्पमालां समर्पयामि।।

दूर्वाङ्कुरान्-ओं काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि। एवानो दूर्व्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः दूर्वाङ्कुरान् समर्पयामि।।

सौभाग्य सिन्दूरम्- ॐ सिन्धोरिव प्प्राद्ध्वने शूघनासो व्वातप्प्रमियः पतयन्तियह्वाः। घृतस्यधाराऽ अरुषो न व्वाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः सौभाग्यसिन्दूरं समर्पयामि।

नाना परिमल द्रव्य में अबीर गुलाल, अभ्रक, मेहदी चूर्ण, हल्दी चूर्ण इत्यादि को चढ़ाया जाता है।

नानापरिमलद्रव्याणि- ॐ अहिरिवभोगैः पर्य्येतिबाहुंज्यायाहेतिं परिबाधमानः। हस्तघ्नो विश्वा व्वयुनानि व्विद्वान्पुमान्पुमा गुं सं परिपातु विश्वतः।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

दिये जाने वाले नैवेद्य प्रसाद को देवता के सामने रखकर धूप एवं दीप घण्टी वादन पूर्वक देना चाहिये।

नैवेद्यं पुरतः संस्थाप्य धूपदीपौ च देयौ- घण्टीवादनपूर्वकं धूपम्- ॐ धूरसि धूर्व्व धूर्व्वन्तं धूर्वतं योऽ स्मान्धूर्वतितं धूर्व्वयं व्वयं धूर्व्वामः। देवानामसि व्वन्हतम् गुं सस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमन्देव हूतमम्।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः धूपमाघ्रापयामि।।

इसके बाद दीपक दिखाना चाहिये-

दीपम्- ॐ अग्निर्ज्योति र्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्योज्योतिर्ज्योर्तिः सूर्य्यः स्वाहा। अग्नि र्व्वर्च्चो ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा सूर्य्यो व्वर्च्चो ज्योति र्व्वर्च्चः स्वाहा। ज्योतिः सूर्य्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः दीपं दर्शयामि।। हस्तौ प्रक्षाल्य।

दीप दिखाकर हस्त प्रक्षालन करके नैवेद्य चढ़ाना चाहिये। नैवेद्य चढ़ाकर ध्यान करके आचमनीय का जल पांच बार प्रदान किया जाता है।

नैवेद्यम् - ॐ नाभ्याऽ आसीदन्तरिक्ष गुं शीर्ष्णोद्यौः समवर्त्तत। पद्भ्यां भूमिर्द्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँऽ अकल्पयन् ।। नैवेद्यं निवेदयामि।। नैवेद्यान्ते ध्यानम्।। ध्यानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि मुद्रां च प्रदर्श्य ओं प्राणाय स्वाहा।।ओं अपानाय स्वाहा।। ओं व्यानाय स्वाहा।। ओं उदानाय स्वाहा।। ओं समानाय स्वाहा।। आचमनीयं मध्येपानीयं उत्तरापोशनं जलं समर्पयामि। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः नैवेद्यं निवेदयामि।।

चन्दन से करोद्वर्तन करने का नियम है।

करोद्वर्तनम्- ॐ अ गुं शुनाते अ गुं शुः पृच्यतां परुषांपरुः। गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसोऽ अच्युतः।। चन्दनेन करोद्वर्तनं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।।

इसके बाद फल प्रदान करते है । फल से मतलब सभी प्रकार के फलों से है । इसमें ऋतुफल एवं अखण्डऋतुफल दोनों आता है । अखण्ड ऋतुफल का मतलब सभी ऋतुओं में पाया जाने वाला फल है ।

फलानि- ॐ याः फलिनीर्य्याऽ अफलाऽ अपुष्पायाश्च पुष्पिणीः। बृहस्पति प्रसूतास्ता नो मुंचन्त्व गुं हसः।। इमानि फलानि नारिकेलंच समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः

इसके बाद ताम्बूल पत्र लवंग इलायची के साथ मुख सुगन्धी के लिये समर्पित करना चाहिये।

ताम्बूलपत्रं लवंग एलादिकं च- ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत। व्वसन्तो स्यासी दाज्यङ्ग्रीष्मऽ इध्मः शरद्धविः।। मुखवासार्थे पूंगीफलताम्बूलपत्रं लवंग एलादिकंच समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।।

इसके अनन्तर पूजनीय द्रव्यों में कोई कमी रह गयी हो तो उस कमी को पूरा करने के लिये दक्षिणा चढ़ाने का विधान है ।

ततो **द्रव्यदक्षिणा** - ॐ हिरण्यगर्भः समवर्ततााग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत्। सदाधार पृथिवीन्द्या मुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ कृतायाः पूजायाः सादुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि ॥ श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः ॥ इसके बाद आरती करना चाहिये।

आरार्तिक्यम् - ॐ इद गुं हविः प्रजननम्मे ऽअस्तु दशव्वीर गुं सर्व्वगण गुं स्वस्तये । आत्मशनि प्प्रजाशनि पशुशनि लोकसन्न्यभयसनि। अग्निः प्रजाम्बहुलाम्मे करोत्वन्नं पयोरेतोऽ अस्मासु धत्त॥ आ रात्रि पार्थिव गुं रजः पितुर प्रायिधामभिः। दिवः सदा गुं सि वृहती व्वितिष्ठस ऽआत्वेषं वर्त्तते तमः॥ कर्पूरनीराजनं समर्पयामि॥

तदनन्तर हाथ में पुष्प लेकर पुष्पांजलि देना चाहिये-

मन्त्रपुष्पांजलि:- ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्रथमान्यासन्न्। तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्व्वे साध्याः सन्ति देवाः॥ मन्त्रपुष्पांजलिं समर्पयामि॥ श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः॥

प्रदक्षिणा- ॐ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृका हस्ता निषंगिणः॥ तेषा गुंसहस्र योजनेव धन्वानि तन्मसि॥ प्रदक्षिणापूर्वक नमस्कारान् समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः ॥

हस्ते जलमादाय अनया पूजया नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालदेवता प्रीयन्तां न मम ॥

इस प्रकार से आपने वैदिक मन्त्रों से वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालों के पूजन का विधान जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों के साथ वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पाल देवता का पूजन करा सकते है।

4.4 सारांश -

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि नवग्रह मण्डल पर वास्तोष्पति एवं क्षेत्रपाल की स्थापना की जाती है। इन दोनों देवताओं को नवग्रह मण्डल पर अंग देवता के रूप में जाना जाता है। वास्तोष्पति को वास्तु देवता भी कहा जाता है। निरुक्तकार महर्षि यास्क ने इसकी व्याख्या करते हुये कहा है कि वासतुर्वसतेर्निवास कर्मणः। अर्थात् जहां हम निवास करते हैं वहा वास्तु देवता का वास होता है। इसीलिये जब किसी नवीन गृह में प्रवेश करते हैं तो वहॉ वास्तु पूजन कराते है। जब हम किसी नवीन भवन के प्रारम्भ का उद्घाटन करते है तो वहॉ भी वास्तु पूजन कराने का विधान है। परन्तु इन स्थानों पर जो वास्तु शान्ति करायी जाती है वह नवग्रह के वास्तोष्पति से भिन्न होती है क्योकि

वहां अलग से वास्तुमण्डल बनाकर पूजन किया जाता है। यहां अर्थात् नवग्रह मण्डल पर एक स्थान पर वास्तोष्पति के रूप में अक्षत पुंज को रखा जाता है और उनकी पूजा की जाती है।

4.5 शब्दावली-

वास्तोष्पत्ति – वास्तु के देवता।

निरूक्तकार - निरूक्त के रचयिता।

क्षेत्रपाल – क्षेत्र का स्वामी।

एकोनपंचाशत् - 49 ।

दिक्पाल – दिशा का स्वामी।

शचीपति – इन्द्र

शक्तिधारक – शक्ति को धारण करने वाला

सविता – सूर्य

नवग्रह – सूर्यादि ग्रह

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. क
2. क
3. ख
4. ख
5. क

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1- कर्मकाण्ड प्रदीप

2- संस्कार दीपक

3. नित्यकर्मपूजाप्रकाश

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. वाष्तोष्पत्ति का लौकिक मन्त्रों द्वारा पूजन विधान का लेखन कीजिये।
2. क्षेत्रपाल का परिचय दीजिये।

3. दश दिक्पाल का विस्तृत वर्णन कीजिये।

4. वास्तोष्पत्ति का वैदिक रीति से पूजन विधान का वर्णन कीजिये।

5. पूजन में वास्तोष्पत्ति, क्षेत्रपाल एवं दस दिक्पाल का महत्व निरूपण कीजिये।